सोने की राख

(उपन्यास)

लेखक
रघुवीर शरण 'मित्र'

एकमात्र वितरक
भारतीय साहित्य प्रकाशन
२३२-स्वराज्य पथ, सदर मेरठ

प्रकाशक :
अर्चना पुस्तक मन्दिर
१६२, गंज बाज़ार,
सदर, मेरठ।

द्वितीय संस्करण
१९५८
मूल्य ४.००

मुद्रक :
निष्काम प्रेस,
मेरठ।

कला, साहित्य और संस्कृति

के सौरभ

श्री जगदीशचन्द्र माथुर को

सादर—

१

सोने की चौकी पर बैठे स्वर्ण वर्ण के वाचाल हीरामन ने एकटक देखते हुए कहा— तुम बहुत सुन्दर हो, किन्तु ......

'किन्तु क्या? कहते कहते चुप क्यों हो गये हीरामन!' सिंहल द्वीप की रूपवती राजकुमारी पद्मिनी ने चमत्कृत हो उत्सुकता से पूछा।

हीरामन— किन्तु यही कि अनन्त कलाकार ने तुम्हें रचकर शायद भारी भूल की है।

पद्मिनी— क्यों?

हीरामन— राजकुमारी! तुम्हारे रूप के आगे हीरे और रत्नों की चमक मन्द पड़ जाती है। तुम्हें देखकर हँसते हुए फूल शर्माने लगते हैं। तुम्हारे निष्कलंक सौन्दर्य के सामने चन्द्रमा की मधुर ज्योति अँधेरी लगने लगती है। तुम्हारे रूप का तेज सूर्य के तेज से भी तीव्र है। तुम्हारे उज्ज्वल आकर्षण से रात दिन फूल खिले रहते हैं। मर्त्य-लोक और देवलोक में तुम्हारे जैसी सुन्दरी दूसरी नहीं। पर क्या

तुम्हारे अनुरूप वर धरती पर कोई हो सकता है? पृथ्वी पर क्या कोई ऐसा भाग्यशाली है कि जो अपने पुण्यों से रूप और गुणों के इस स्वर्ग को पा लेगा? मुझे चिन्ता है दिव्ये! मैं सोच रहा हूँ कि अनन्त कलाकार की इस बोलती हुई तस्वीर को पाने वाला सौभाग्यशाली कौन है।

राजकुमारी ने हीरामन को अल्हड़ता से देखते हुए कहा— तुम कैसी बातें करते हो पण्डित! पक्षियों में तुम भी तो रानी सुन्दर हो सुवे! तुम्हारा सुनहरी चमकता हुआ सोने का रंग, बेजोड़ लाल सी लाल चोंच, कवियों की उड़ान की तरह उड़ने वाले पंख, कितने मोहक हो तुम!

हीरामन— सुन्दरता की रानी ने मुझे सराहा, यह मेरा सौभाग्य है। लेकिन मेरा सारा सौन्दर्य तुम्हारे सामने शीशे में एक दाग की तरह है। तुम्हारे सौन्दर्य में स्वर्गों की झाँकी है। यही है वह रूप जिसके चरणों में सत्य और शिव अर्घ्य चढ़ाते हैं। तुम चेतना की अद्भुत ज्योति हो, हृदय की अमूल्य निधि हो, काव्य की आवेष्टित आत्मा हो, प्रकृति की स्वर लहरी हो, और कल्पना की उड़ान हो।

राजकुमारी— कान गूढ़ कविता सुनते सुनते मूर्च्छित होने लगे हैं वाचाल! मेरी चिन्ता मत करो। यदि तुम बहुत बेचैन हो तो तुम्हारे लिये कोई तुम से भी सुन्दर तोती तलाश कर दूँगी।

हीरामन— मुझ से सुन्दर तोती तो मिल जायेगी पर तुम से सुन्दर वर शायद विधाता ने नहीं रचा।

राजकुमारी— तो मैं उस अनन्त कलाकार को ही वर लूंगी जिसने मेरे जैसे सौन्दर्य की सृष्टि की है। मैं अपने संगीत से उसे रिझाऊंगी, सत्यम् और शिवम् से उसकी आरती उतारूंगी, रूप के तेज़ से उस

अति सूक्ष्म को साकार देखूंगी। शास्त्रज्ञ होकर तुम व्यर्थ की लौकिक चिन्ता में क्यों डूब गये कीर !

हीरामन— लाचारी में मन को समझाने के लिये यह विचार सभी का सहायक होता है पद्मा ! पर आध्यात्मिक चिन्तन लौकिक सिद्धि का ही श्रेष्ठ साधन है। तप, व्रत और अर्चना से जो आवाज़ निकलती है उसमें भी शून्य की मुखरता छिपी रहती है। सत्य, शिव और सौन्दर्य किसी दूसरी दुनिया के तत्व नहीं हैं, वे इसी दुनिया को ज्योतिवन्त करते हैं। वन का वह फूल किस काम का जो अकेला झुरझुर कर झड़ जाये! जिसकी कोई पूजा न कर सके वह देवता व्यर्थ है। और जो कन्या कुँआरी रहे वह........

राजकुमारी— वह क्या ? कहते कहते फिर क्यों रुक गये ?

हीरामन— वह यह कि वह कितनी हतभागिन है कि स्वयम् प्रकाशमान होकर भी अँधेरी रातों में रोती है।

पद्मिनी— भगवान भास्कर भी तो जल जलकर ही दुनिया को प्रकाश देते हैं। जलन में भी तो स्वाद होता है, हीरामन! जो जल नहीं सकता उसमें जीवन नहीं होता। दीपक को नहीं देखते जो जल जल कर जीता है, लाखों शलभ उस पर प्राण न्यौछावर कर देते हैं। वास्तव में वही शाश्वत है, जो जीवन भर दूसरों के लिये जल सकता है।

हीरामन— दार्शनिक उक्तियों में हृदय की उमंगों को क्यों छिपा रही हो राजकुमारी! हीरामन नारी हृदय को अच्छी तरह पढ़ लेता है। यौवन की प्रथम किरणें मन में हलचल मचा देती हैं। जब कोई जवानी में पदार्पण करती है तो उसके हृदय और मस्तिष्क की जो स्थिति होती है उसे वही पहचानती है। नवयुवती की मौन भाषा वाणी से मुखर नहीं होती, उसकी आँखों और अंगों से जो स्वर फूटते

हैं वे सुने नहीं जाते, बुद्धिमान उनका अनुभव कर लेते हैं।

पद्मिनी— क्या अनुभव किया तुमने !

हीरामन— यही कि पद्मिनी जाति की श्रेष्ठ राजकुमारी कोई काल्पनिक स्वप्न देख रही है।

पद्मिनी— क्या स्वप्न देख रही है ?

हीरामन— वह देख रही है कि एक वीर राजकुमार, जिसके हृदय में प्रेम की गङ्गा लहरा रही है, जिसकी हथेलियों में दान का पुण्य चित्र है, जिसके गुणों की तुलना नहीं हो सकती, जो सत्य और शिव का आराधक है, वह अद्वितीय सौन्दर्य की प्राप्ति के लिये दौड़ा चला आ रहा है।

पद्मिनी मुस्कराई, मानो मेघों में बिजली कौंध गई। सुन्दरता ने व्यंग्य से कहा— "दौड़ने वाले की वही दशा होगी जो दीपक पर लपकने वाले शलभ की होती है।"

हीरामन— इतनी चमत्कृत क्यों होती हो बाले! रूप की चाह वाले मृत्यु से नहीं डरा करते। प्यार का दूसरा नाम चलता फिरता शव है, राजकुमारी! क्या किसी शलभ को तुमने कभी भय खाते देखा है ? संसार समझता है पतंगा दीपक पर जल कर मर गया, लेकिन मैं जानता हूँ कि वह जल कर ज्योति में मिल जाता है।

पद्मिनी— कविता बहुत कर चुके हीरामन ! अब स्पष्ट कहो।

हीरामन— स्पष्ट सुनना चाहती हो तो सुनो! तुमने मुझे इतने स्नेह से पाला है कि जन्म जन्मान्तरों में भी तुम्हारे ऋण से उऋण नहीं हो सकता। इस उपकार के बदले मैं चाहता हूँ कि तीनों लोकों में उड़कर तुम्हारे लिये कोई ऐसा वर खोज कर लाऊँ जो देवताओं के लिये भी ईर्ष्या का पात्र हो, जो वीरता, प्रेम और गुणों का कोष हो, जो यदि मनुष्य हो तो देवताओं से श्रेष्ठ हो और यदि देवता

हो तो शिव की तरह भोला और सुन्दर हो।

पद्मिनी— तुम तो पागल हो गये हो हीरामन! मैं सत्य और शिव चाहती हूँ, सौन्दर्य उसमें उड़ेल कर मैं उसे पूर्ण कर दूंगी। पिताजी के आने का समय हो गया है, हीरामन! अब ऐसी बातें न करो, नहीं तो वे नाराज होंगे।

"मैंने सब कुछ सुन लिया है पद्मिनी! बहुत देर से यह हीरामन मेरी बेटी को बहका रहा है। यह पंडित होकर ऐसी बातें करता है, जिनसे युवती की काम भावनाएं जागृत होती हैं। यह वाचाल तुम्हें बिगाड़ना चाहता है। सच है किसी जवान लड़की के पास युवक ही नहीं, गुरुजनों का रहना भी पाप है। हमने विद्वान् हीरामन को अपनी पुत्री के पास विद्या चर्चा के लिये छोड़ा था, काम शास्त्र पढ़ाने के लिये नहीं। तुम्हें इस अपराध में दण्ड दिया जायेगा, हीरामन!" पद्मिनी के पिता सिंहलद्वीप के राजा गन्धर्व सेन ने परदे के पीछे से निकलते हुए कहा।

राजा गन्धर्व सेन का क्रोध बहुत भयंकर होता था। जब वे किसी को दण्ड देने की बात कहते थे तो उसकी मृत्यु सम्भावित हो जाती थी। पद्मिनी की सखी नलिनी ने जीने में से राजा की रोष भरी वाणी सुन ली और उसने उनका ध्यान बदलने के लिए नीचे की पैड़ी पर से एक चीख मारी।

सुनते ही राजा गन्धर्व सेन ने जीने में झाँक कर देखा और नलिनी को उठाने के लिये नीचे उतरे।

उधर राजा नलिनी को उठाने गये, इधर हीरामन ने पद्मिनी से कहा— 'राजा रुष्ट हो गये हैं, वे मेरी गर्दन मरोड़ डालेंगे। मैं जा रहा हूँ राजकुमारी! अब तभी आऊंगा जब तुम्हारे लिये कोई वर ढूंढ लाऊंगा।'

पद्मिनी — नहीं, हीरामन! तुम्हारे बिना मेरा मन नहीं लगेगा। मैं तुम्हें नहीं जाने दूंगी। पिताजी लौटकर आयें इतने तुम मेरे शृङ्गार कक्ष में शीशे के पीछे छिप जाओ। मैं मानसरोवर में स्नान करने जा रही हूँ, आने पर तुम्हारे रहने की सुरक्षित व्यवस्था कर दूंगी।

हीरामन ने सोचा कि पद्मिनी का प्रेम उसे जाने नहीं देगा और राजा किसी भी दशा में उसे छोड़ नहीं सकता। इसलिये उस नीतिज्ञ ने कहा— 'अच्छा दिव्य सुन्दरी! मैं शीशे के पीछे छिपा जाता हूँ।'

पर जब पद्मिनी स्नान के लिये स्वर्ण सरोवर पर चली गई तो हीरामन बिना स्वर किये चुपचाप निकल पद्मिनी के महल में प्रतीक्षा छोड़ आकाश में उड़ गया और पद्मिनी जब लौटकर आई तो देखती की देखती रह गई। पिंजरा पड़ा रह गया और पक्षी उड़ गया। राजकुमारी ने चीख चीख कर पुकारा पर हीरामन वापिस न आया।

पद्मिनी की चीख सुनकर राजा और नलिनी ऊपर आये। पर तब तक तोता इतना ऊपर उड़ चुका था कि दिखाई भी कठिनता से पड़ता था।

राजा ने अपने रोष को मन ही मन में दबाते हुए बेटी को शान्त करने के लिये प्यार से कहा— 'इतनी अधीर क्यों हो रही है पद्मा! मैं तेरे लिये एक क्या लाख तोते मँगा दूंगा। एक से एक सुन्दर, एक से एक वाचाल और एक से एक योग्य।'

पद्मिनी— लाख नहीं करोड़ तोते मँगा दोगे पिताजी! पर वह प्राण पक्षी तो अब लौट कर नहीं आयेगा। इतने बड़े राज्य में आपकी बेटी को हीरामन से अधिक प्रिय दूसरी वस्तु नहीं थी। वह कभी किसी से कड़वा नहीं बोलता था और न ही उसे कड़वा बोल सुहाता

था। आप व्यर्थ ही हीरामन पर नाराज हो गये। अब मैं इतनी नादान तो नहीं रह गई थी कि तोता मुझको बहका सकता था। आपने रुष्ट होकर उस भोले शिव पक्षी को मुझसे पृथक् करके क्या पाया पिताजी! हीरामन को आपने नहीं पहचाना, उस की शक्ति ध्वंस के लिये नहीं, निर्माण के लिये है। वह शान्ति का मूर्त रूप था। उसने जितनी शिक्षा मुझे अल्प समय में दी है, उतनी तो मुझ में शत शत ग्रन्थ पढ़कर भी नहीं आई। मेरी काम भावना हीरामन क्या जगाता, यौवन जब आता है तो फूलों पर पराग और मकरन्द स्वयं आ जाता है। जवानी स्वयं ही काम को जगाती है। हीरामन तो निर्दोष है पिताजी! उसने तो मुझे सतीत्व का वह अमर सन्देश दिया है जो सीता और सावित्री के सतीत्व से भी उज्ज्वल है। अब मेरा सुन्दर और गुणी सूआ कहां मिलेगा। आप मुझ पर नाराज हो लेते, मेरे हीरामन पर क्यों नाराज हुए?

गन्धर्व सेन— बेटी, तोते के पीछे बाप को अपराधी ठहरा रही है।

पद्मिनी— नहीं, बेटी अपने पिता के वात्सल्य के सामने मचल रही है।

गन्धर्व सेन— यदि यह बात है तो तुम शान्ति से विश्राम करो और हम तुम्हारे हीरामन को ढुँढवाते हैं। आज ही चतुर बहेलियों को बन में चारों ओर भेज देंगे।

पद्मिनी हीरामन की स्मृति में शैया पर तकिये के सहारे आँसू बहाती रही और राजा गन्धर्व सेन ने हीरामन को पकड़ने के लिये बहेलिये वनों में भेज दिये।

किन्तु तब तक तो हीरामन हवा से बातें करता हुआ अपने पतले पतले पंखों के सहारे उड़ता उड़ता राजा गन्धर्व सेन के राज्य की सीमा

से बाहर समुद्र पार आ गया।

पक्षियों ने अतुल प्रेम से हीरामन का स्वागत किया, रंगबिरंगी चिड़ियों ने चहचहाकर सूए को रिझाया, कोयल ने अपनी मधुर काकली से मधुर गीत गाये, कबूतरों ने तरह तरह के नृत्य किये, तथा भांति भांति के नभचरों ने हीरामन को पुकार पुकार कर फल फूल भेंट किये।

हीरामन भी अपने गुणों और कलाओं के प्रदर्शन से रम्य वन के पक्षियों के हृदय सम्राट हो गये। सभी पक्षी हीरामन के गुणों और सौन्दर्य पर ऐसे रीझे कि अतिथि सूए को राजा कह कर पुकारने लगे।

एक दिन फूलों से खिले हुए और फलों से लदे हुए किसी रमणीय वन में हीरामन के साथ सभी पक्षी आध्यात्मिक वार्तालाप में लीन थे, कि सिर पर हरियाली लादे कोई बहेलिया उधर से निकला। हरियाली के ऊपर कुछ ऐसे सुगन्धित फल फूल थे कि सारा कानन झूमने लगा।

हीरामन तो बड़े गुणी और पारखी थे। उन्होंने पक्षियों को संकेत करते हुए कहा — व्याध आ रहा है, वह सौन्दर्य और सुगन्ध से हम सब को छलकर पकड़ना चाहता है, आप शीघ्रातिशीघ्र दूर उड़ जाइये।

पक्षियों ने एक ही साथ कहा— ऐसी मधुर सुगन्ध छोड़कर तो हम स्वर्ग में भी जाना नहीं चाहते हीरामन! यदि रूप और सौरभ के लिए प्राण भी छोड़ने पड़ें तो हम प्रस्तुत हैं। हम इस आनन्द सुरभि को छोड़कर उड़ना नहीं चाहते, प्राण जाते हैं तो जायें, बन्दी बनना पड़ा तो बन जायेंगे।

हीरामन— दीपक पर पतंगे बनने वाले पागल होते हैं। मेरा कहा मानो पक्षियो! यह दुनिया शिकारियों की बस्ती है। शिकारियों की भोली सूरत में रक्त की प्यास होती है। रूप, रस, गन्ध और स्पर्श से

बचो, शिकारी पास आता जा रहा है, उड़ जाओ पक्षियो, उड़ जाओ!

हीरामन के ज्ञानोपदेश से पक्षी उड़ गये, पर सबकी रक्षा करता करता हीरामन पकड़ा गया। बहेलिये ने हीरामन को पिंजरे में बन्द कर दिया। रत्नों की ज्योति की तरह चमकते हुए सूए ने शिकारी से कहा—"निरीह पक्षियों को पिंजरे में बन्द करने से क्या लाभ है शिकारी! स्वतन्त्रता प्राणी का जन्मसिद्ध अधिकार है। हम पेड़ के वासियों को बन्दी क्यों बनाते हो? हमें कैद करके कहाँ ले जाओगे?

बहेलिया— तुम सुन्दर भी हो और मुखर भी! तुम्हारे पंख में इन्द्रधनुष जैसी छटा है, तुम्हारा रंग सोने की चमक से भी सुन्दर है। तुम विद्वानों की तरह प्रवचन करते हो और कवियों की तरह मीठा बोलते हो। तुम बड़े मूल्यवान हो, तोते! मैं तुम्हें बाज़ार में ले जाकर बेचूँगा।

हीरामन— मेरे रँगीले पंख देखे तो तुमने मुझे बन्दी बना लिया, मुझे बन्दी बना लिया तो मुझे बेचोगे भी! सच है, धन के लालच में मनुष्य स्वयम् तक को बेच डालता है। धन से जब मनुष्य का आत्मा तक क्रय किया जा सकता है तो फिर पैसे से क्या नहीं खरीदा जा सकता! लेकिन धन से बड़ी मानवता है।

बहेलिया— तुम भूलते हो सूए, धरती पर जो कुछ है वह धन से ही है, मानवता का मूल्य तो कौड़ी भी नहीं। वह पागल है जो भूमि पर मनुष्यता से जीना चाहता है। जो मनुष्यता से जीना चाहता है, उसे कोई जीने नहीं देता। वही जी सकता है जिसके पास शक्ति है, जिसे दूसरे का रक्त पीने में भी संकोच नहीं। यहाँ अपनी भूख के लिये क्या नहीं किया जाता! कौन है वह जो मानव की जीवित लाश पर खड़ा होकर अट्टहास नहीं करता?

हीरामन— किन्तु यह मनुष्य का धर्म तो नहीं। मानव का धर्म

तो दया है, परोपकार है। पर-दुःख कातरता जिसमें नहीं, वह नर ही क्या, उसे नरक कहना चाहिये।

बहेलिये ने अट्टहास करते हुए उत्तर दिया— "धर्म और दया जैसे शब्दों का उच्चारण कायर किया करते हैं। स्वार्थ का दूसरा नाम धर्म है और पराजित की मूक आवाज़ को दया कहते हैं।

हीरामन— तो क्या तुम मुझे नहीं छोड़ोगे?

बहेलिया— हाथ में आये हुए शिकार को जो छोड़ देता है, वह मूर्ख है। तुम सुन्दर हो, ज्ञानी हो। मुझे जीवन भर सौन्दर्य और ज्ञान ने ही सताया है। जी चाहता है तुम्हारी गर्दन मरोड़ डालूँ, क्योंकि सौन्दर्य और ज्ञान ने बहुत बार मेरा गला घोटा है। लेकिन लालच मुझे यह नहीं करने देता, लोभ ने मेरे हाथ पकड़ लिये हैं। मैं कल भी लाचार था और आज भी लाचार हूँ। हर समय परिस्थितियाँ मनुष्य को दास बनाये रहती हैं। मैं तुम्हें बेचूँगा।

हीरामन— यह क्या शिकारी! तुम कहते कहते भावुक क्यों हो गये? तुम्हारी आँखें क्यों छलछला आईं? जान पड़ता है तुम कोई बहुत पीड़ित हो।

बहेलिया— था, पर अब नहीं हूँ। कठोरता ने मुझे पीड़ित से शिकारी बना दिया है। अब मैं रोता नहीं, दूसरों को रुलाकर हँसता हूँ। आँसू यदि कभी आँख से निकलना भी चाहता है, तो मैं उसे मसल डालता हूँ। मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि अब रोऊँगा नहीं, रुलाऊँगा। मेरी आँख से यदि एक आँसू निकलेगा तो उसके बदले दुनिया से हजार हजार आँसू लूँगा।

शिकारी की बातों में कुछ ऐसा रहस्य था कि ज्ञानी सूआ भी भावुक हो उठा। उसने द्रवित होकर कहा— "तुम्हारी करुणा देखकर जी चाहता है कि ईश्वर तुम्हारे सारे दुःख मुझे दे दे और मेरे सारे सुख

तुम्हारे हो जायें। अब तक मैं ज्ञानी था लेकिन आज यह भी पता चला कि खूनी से खूनी हृदय में भी कोई विरहिणी व्यथा छिपी रहती है। मेरे जीवन से तुम्हारा जितना भी उपकार हो सके कर लो, मैं सहर्ष बिकने को प्रस्तुत हूँ।

बहेलिया— नहीं सूए! तुम ऐसी बातें न करो। कहीं तुम्हारी उदारता से मेरे हृदय का मनुष्य फिर न जाग जाये। कहीं ऐसा न हो जाये कि मैं तुम्हें बेचने का विचार छोड़कर तुमसे प्रेम करने लगूँ। मैं सौन्दर्य से प्रेम करके जल कर बुझा पड़ा हूँ, कहीं तुम बुझे हुए को फिर से न बुझाने लगना। कहीं तुम से प्रेम का परिणाम यह न हो कि तुम्हें न बेचकर अपने बूढ़े माता पिता के साथ साथ मैं भी भूख से तड़प तड़प कर मर जाऊँ।

ज्ञानी हीरामन ने शिकारी की व्यथा को पढ़ते पढ़ते आप ही आप कहा— "प्रेम मनुष्य को जिला भी सकता है और मार भी सकता है। यह तो कोई वह शिकारी है जो किसी कठोर सौन्दर्य के तीर का निशाना बन कर मर चुका है। जी तो नहीं चाहता कि इस पीड़ित का साथ छोड़ूँ, धर्म तो यही कहता है कि विवेक से इसे जीवन भर सान्त्वना देता रहूँ। किन्तु तुम तो पद्मिनी के लिये वर ढूँढने निकले हो। धरती पर तो जिधर जाओगे उधर ही दुःख मिलेंगे। यहाँ राही के लिये इतना ही बहुत है कि राह में जो भी मिले अपनी उँगली से उसके दो आँसू पोंछ कर आगे बढ़ जाये।"

चिन्तन करते हुए सूए ने शिकारी से कहा— "अच्छा शिकारी! तुम मुझे किसी बड़े नगर में ले चलो, वहाँ तुम मुझे बेच देना। बाजार में जब तुम मुझे बेचने के लिये आवाज़ लगाओगे तो मैं कलाओं का ऐसा प्रदर्शन करूँगा कि खरीदार तुम्हें बहुत सा धन देकर मुझे खरीद लेगा।"

बहेलिया— हाँ ज्ञानी! संसार में अर्थ के लिये मनुष्य को स्वयं को भी बेचना पड़ता है। यहाँ क्या ज्ञान और क्या कला, प्रत्येक का मोल पैसे से किया जाता है। पेट की क्षुधा इतनी भूखी होती है कि उसकी आग से सत्, सौन्दर्य और प्रेम तक जलकर राख हो जाते हैं। यह ज्वाला जब धधकती है तो नहीं देखती कि क्या भक्ष्य है और क्या अभक्ष्य। धरती पर कौन है वह क्षुधातुर जिसने अपनों के शव नोच नोच कर नहीं खाये

हीरामन— देखलो शिकारी! दुनिया व्यर्थ ही अपना अपना चिल्लाती है। एक दूसरे के स्वार्थ का नाम ही तो सम्बन्ध है। स्वार्थ के तार सृष्टि में इस तरह पुरे हुए हैं जिस तरह अणुओं से ब्रह्माण्ड बसा हुआ है। छोड़ो यह दार्शनिक तर्क। चलो, मुझे बेचकर तुम अपनी भूख मिटाओ!

सूए की सुनकर शिकारी ने पिंजरा उठाया और ऊँचे नीचे टीलों को पार करता हुआ बन बन की खाक छान वह चित्तौड़गढ़ के निकट एक गाँव में आया। उस गाँव में एक निर्धन ब्राह्मण रहता था।

ब्राह्मण जीवन यापन के लिये धनोपार्जन की इच्छा से जैसे ही घर से निकला वैसे ही उसने शिकारी को सूरज की ज्योति की तरह दमकते हुए सूए को पिंजरे में ले जाते देखा। ब्राह्मण ने कहा— 'तोता तो बहुत सुन्दर है, क्या इसे बेचोगे शिकारी?"

बहेलिया— हाँ हाँ, बेचूँगा। यह तोता तो अनमोल है। यह केवल सुन्दर ही नहीं, गुणी भी है। यह नृत्य करता है, गाता है, पंडितों की तरह बातें भी करता है।

ब्राह्मण— यह तोता तो सचमुच कोई ब्रह्मज्ञानी जान पड़ता है। कितने में बेचोगे इसे?

बहेलिया— पच्चीस हजार मुद्रा में। क्यों, साहस है ले सकोगे?

कीमत सुनकर ब्राह्मण सोच में पड़ गया, पर थोड़ी ही देर बाद बोला— पच्चीस हजार नहीं, तीस हजार मुद्रा दूँगा। पर एक शर्त है।

बहेलिया— वह क्या?

ब्राह्मण— वह यह कि मुद्रा तुम्हें कल मिलेंगी और कल तक तोता तुम्हें मेरे विश्वास पर मुझे देना होगा।

बहेलिया— वाह रे वाह! विश्वास और इस दुनिया में! जो यहाँ विश्वास करता है वही रोता है। और तो और जब धर्मराज युधिष्ठिर तक के शब्दों का विश्वास नहीं रहा तो फिर किस के शब्दों का विश्वास होगा! नहीं भाई, मैं पहले मुद्रा लूँगा और बाद में तोता दूँगा।

ब्राह्मण— यदि यह बात है तब तो सौदा नहीं बनेगा। हाँ, यह हो सकता है कि तुम सारे गाँव में पूछ लो, अगर कोई भी यह कहे कि यह ब्राह्मण विश्वास के योग्य नहीं है तो तुम मेरी बात न मानना।

बहेलिये और ब्राह्मण की बात सुनकर सूए ने कहा— "ब्राह्मण की बात मान जाओ शिकारी! यह सच्चा ब्राह्मण है। विश्वास करो कि यह ब्राह्मण तुम्हें कल तक तीस हजार स्वर्ण मुद्रा लाकर दे देगा।"

सूए के कहने से शिकारी राजी हो गया और उसने हीरामन ब्राह्मण को दे दिया। ब्राह्मण हीरामन को लेकर चित्तौड़ के दुर्ग में राजा रत्नसेन के पास पहुँचा।

हिमालय की तरह दृढ़ और गौरवशाली चित्तौड़ दुर्ग में राजा रत्नसेन अपने परिषदों के साथ राज्य परिषद में विराजमान थे। मणियों और रत्नों से जगमगाते हुए सिंहासन पर चित्तौड़ नरेश इस प्रकार विराजमान थे जिस प्रकार तारा मण्डल के मध्य शरद् पूर्णिमा का चन्द्रमा अमृत भरी चाँदनी लुटाता रहता है।

ब्राह्मण ने राजा रत्नसेन की कीर्ति बखानते हुए कहा— "वीरों में महावीर, धर्मात्माओं में धर्मराज, दानवीरों में कर्ण और रूपवानों में चन्द्रमा को भी लज्जित करने वाले चित्तौड़पति! मैं आपके लिये आज एक ऐसा अमूल्य धन लाया हूँ जिससे आपका राज्य संसार में सबसे अधिक सम्पन्न राज्य होगा। इस पिंजरे में जो स्वर्णिम सूआ आप देख रहे हैं, यह ब्रह्मज्ञानी है, कलाओं में पारंगत है। यह जब बोलता है तो मौन मुखर हो जाता है, यह जब हँसता है तो फूल झड़ने लगते हैं, यह जब उपदेश देता है तो समस्त धर्म ग्रन्थ इसके मुँह से बोलने लगते हैं।"

रत्नसेन ने आश्चर्यचकित हो सूए को देखा और फिर मुस्कराते हुए बोले— "यदि यह बात है तो इसका कमाल दिखाओ!"

राजा के कहते ही ब्राह्मण ने पिंजरा खोला और सूआ राज्य-परिषद में कलाओं का प्रदर्शन करने लगा। तोते के कमाल पर कमाल देख सभासद चकित हो गये। सूए ने श्लोक वाचन, काव्य गायन और नृत्य से ऐसा मोह मन्त्र फूँका कि राजा रत्नसेन "वाह वाह" करने लगे।

हीरामन अभी कला प्रदर्शन कर ही रहा था कि राजा रत्नसेन ने प्रसन्न हो कहा— "कहो ब्राह्मण, इस सूए का मूल्य हम तुम्हें क्या दें?"

ब्राह्मण ने गर्व से गर्दन उठाते हुए कहा— "एक लाख स्वर्ण मुद्रा।"

सुनते ही रत्नसेन ने आज्ञा दी कि ब्राह्मण को राजकोष से एक लाख स्वर्ण मुद्रा दे दी जायें।

एक लाख स्वर्ण मुद्रा लेकर ब्राह्मण निर्धन से धनवान हो अपने गाँव में आया। गाँव में ब्राह्मण की कुटी पर बहेलिया उत्सुकता से

उसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

ब्राह्मण के साथ सूआ न देखकर बहेलिये ने घबरा कर कहा—सूआ कहाँ छोड़ आये ?

ब्राह्मण— कहीं भी छोड़ आया, तुम अपनी तीस हजार स्वर्ण मुद्रा सँभालो !

कहते हुए ब्राह्मण ने बहेलिये को तीस हजार स्वर्ण मुद्रा दीं और बहेलिये ने मुद्राएँ गिनकर नौली में रख अपने घर की राह पकड़ी।

१

चित्तौड़ दुर्ग के शीशमहल में स्वर्ण पलंग पर राजा रत्नसेन अपनी परम प्रिया पत्नी नागमती के साथ हीरामन से महर्षि नारद की एक रोचक घटना सुनने में लीन थे कि प्रतिहारी ने आकर कहा— "शिकार के लिए अश्व तैयार है, राज-राजेश्वर!"

रत्नसेन— जब से हीरामन हमें मिला है तब से कहीं जाने को मन नहीं करता। आखेट में वह आनन्द कहाँ जो हीरामन की हरीभरी बातों में है। लेकिन फिर भी आज हमें जाना ही होगा रानी! कितने ही इष्ट मित्रों के साथ आज हम वन भ्रमण का आनन्द लेने जा रहे हैं, वे आज हमारी प्रतीक्षा में हैं। बोलो नागमती! जाऊँ?

नागमती— हर समय आपको "जाऊँ जाऊँ" ही लगी रहती है। कभी यह राजकाज, कभी वह युद्ध, कभी संगीत सम्मेलन, तो कभी कोई अधिवेशन! जब देखो तभी आप व्यस्त रहते हैं। जिस क्षण भी उत्साह से सोचा कि इस बार उन्हें नहीं जाने दूँगी उसी बार आपको कोई न कोई काम निकल आया। जान पड़ता है अब मुझ में वह

आकर्षण नहीं है जो आपको जाने से रोक सके।

रत्नसेन— यह कैसी बातें करती हो नागमती! शरद् पूर्णिमा का चाँद तुम्हें देखकर शर्मा जाता है। गुलाब के फूलों की लाली तुम्हारे अधरों के आगे कालिमा सी लगती है। तुम्हारे नेत्रों के आगे खंजन पक्षी की आँखें निर्निमेष रह जाती हैं। तुम तो हंसिनी सी विवेकमयी हो नागमती! मानव के आकर्षण की कौनसी वह वस्तु है जो तुम में नहीं! तो फिर तुम यह क्यों सोच बैठीं कि मैं तुम्हारे पिंजरे का पक्षी नहीं हूँ?

नागमती— पुरुषों को बातें बनाना खूब आता है। भोली नारी पुरुषों की बातों में आ जाती है और सन्तोष मानकर स्वप्न को सत्य मान बैठती है। आपकी बातें सुबह सुबह की ओस की तरह मीठी होती हैं। कहा नहीं जा सकता कि सूरज की कौनसी किरण से ओस की बूँदें मेरी आँखों में आँसू बन कर आ बसेंगी।

रत्नसेन— तुम तो बावली बातें कर रही हो नागमती! कौन ऐसा मूर्ख होगा जो रसाल के वन को छोड़कर कैर के वन को अपनायेगा! व्यर्थ की दुष्कल्पनाओं को छोड़ो और प्रेम से मुझे जाने की स्वीकृति दो!

नागमती— जाओ, पर ज्योत्स्ना के शैया पर आने से पहले ही आ जाना, मैं शाम से ही तारे गिन गिन कर आपकी प्रतीक्षा करूँगी।

रत्नसेन— मैं अँधेरी होने से पहले ही आ लूँगा। इतने तुम इस ज्ञानी सूए से बातें करना।

कहते हुए रत्नसेन ने प्यार भरी आँखों से नागमती को देखा और अमृत की डकारें लेते हुए आखेट के अश्व पर आकर सवार हो गये।

5609.

राजा रत्नसेन शिकार के लिये चल पड़े और रानी नागमती सोलह शृंगार किये हुए अपने मन-मन्दिर के देवता को तब तक देखती रही जब तक कि वह वातायन से दीखते रहे, और फिर स्वयं पर गर्व

करती हुई मस्त स्वप्नों में डूबी सी फेनिल शैया पर सुगन्ध उड़ाने लगी।

मन में आशाओं की नयी नयी कल्पनाएँ करती हुई नागमती ने हीरामन को मुस्कराकर देखते हुए कहा— "क्यों तोते! मुझसे अधिक सौभाग्यवती क्या कोई हो सकती है? तुम देश परदेश भ्रमण करते हुए आये हो, कहो तुमने क्या कहीं मेरे राजा से वीर और सुन्दर पुरुष देखा है? क्या कहीं चित्तौड़ से दृढ़ दुर्ग देखा है? क्या कहीं तुम्हें ऐसी गरिमा मिली जैसी मेरे राज्य में है? और क्या कहीं तुमने मुझ से भी अधिक सुन्दर किसी राजकुमारी अथवा रानी को देखा है?

हीरामन ने उपेक्षा से उत्तर देते हुए कहा— "तुमसे अधिक सौभाग्यवती तो कोई नहीं देखी, तुम्हारे राजा से अधिक वीर और सुन्दर पुरुष भी नहीं देखा, चित्तौड़ से दृढ़ कोई दुर्ग भी धरती पर नहीं मिला, यहाँ के राजपूतों की गरिमा भी अनोखी है, किन्तु........

नागमती— किन्तु क्या, हीरामन! कहते कहते क्यों रुक गये? पूरी बात कहो न!

हीरामन— क्या कहूँ सुन्दर राजरानी! तुमसे सुन्दर, बहुत सुन्दर राजकुमारी इस धरती पर है।

नागमती ने चौंक कर चमत्कृत होते हुए कहा— क्या! मुझसे अधिक सुन्दर! कौन है वह, कैसी है वह? नहीं नहीं, मुझसे अधिक सुन्दर नहीं हो सकती।

हीरामन— हाँ, रानी! तुमसे अधिक सुन्दर, यहाँ तक कि तुममें और उसमें रात और दिन का अन्तर है। उसके सामने तुम चाँद के आस पास बादलों जैसी लगोगी। अधिक क्या कहूँ, तुम्हारे जैसी तो वहाँ पानी भरती हैं।

सुनते ही नागमती के तन बदन में आग लग गई। उसका रोम

रोम जल उठा, जैसे किसी ने जलती हुई आग में घी डाल दिया हो। क्रोध से तमतमा कर वह किन्सुक के फूल सी लाल हो गई और फड़कती हुई बोली— कौन है वह जिसे तू मुझसे भी अधिक सुन्दर कह रहा है?

हीरामन— सिंहल-द्वीप की राजकुमारी पद्मिनी, जिसके सामने चाँद और सूरज की चमक फीकी लगती है, जिसकी सुगन्ध से फूलों में खुशबू आती है, जिसके स्वर के आगे कोयल की कूक कुछ भी नहीं।

कहते हुए हीरामन को नागमती ने बीच ही में रोकते हुए कहा— बस बस, मैं और कुछ नहीं सुनना चाहती। मुझे क्या पता था कि मेरे राजा ने तोते के रूप में तुझ साँप को खरीदा है। जिस नागमती के सामने अँधेरी उजाली में बदल जाती है उस नागमती के रूप की तू उसी के सामने निन्दा कर रहा है! लोकोक्ति ठीक ही है कि तोता पल भर में ही आँखें बदल लेता है।

कहते कहते नागमती ने अपनी मुँह लगी दासी को बुलाया और क्रोध से काँपती हुई बोली— इस सूए को ले जाओ और इसकी गर्दन मरोड़ कर इसकी मिट्टी को मिट्टी का तेल छिड़क कर जला डालो तथा बहा दो इसकी राख किसी गन्दे नाले में।

रानी नागमती की आज्ञा सुनते ही सेविका ने सूए का पिंजरा उठाया और भयभीत क्रोधी की तरह काँपती हुई अपने कमरे में आ गई। वहाँ आकर वह सोचने लगी— "क्रोधावेश में उचित अनुचित का ध्यान नहीं रहता। यदि रानी नागमती की आज्ञानुसार मैंने राजा के इस प्रिय गुणी तोते को मार दिया तो बड़ा अनर्थ हो जायेगा। राजा रानी और मुझ पर रुष्ट होकर न जाने क्या कर बैठें। इसलिये मुझको इस सूए को कहीं छिपा देना चाहिये। लेकिन ऐसा करने से भी तो तेरी

हानि होगी। कहीं रानी नागमती तुझसे नाराज़ हो गईं तो भी परिणाम प्रतिकूल ही निकलेगा। रानी का क्रोध कभी कभी बावला हो जाता है और रोष में वे आपे में नहीं रहतीं। इतनी सुन्दर, इतनी गुणवती और इतनी मधुर होते हुए भी न जाने रानी इस गुणी सूए को मारने के लिए क्यों तैयार हो गईं!"

सोचते सोचते उसने कहा— "क्यों हीरामन, किस अपराध में रानी तुम्हें मृत्यु दण्ड दे रही हैं?"

हीरामन— संसार में सत्य कहना पाप है, अथवा मेरा भाग्य ही कुछ ऐसा है जिससे भी दो बातें करता हूँ वही मेरे प्राणों का ग्राहक बन जाता है। किन्तु मारने वाले से बचाने वाला बड़ा बली होता है, मैं बार बार मृत्यु से बच जाता हूँ।

दासी— पहेलियाँ क्यों बुझा रहे हो हीरामन! स्पष्ट कहो, नागमती तुम पर एकदम आग क्यों हो गईं?

हीरामन— बात यह हुई कि तुम्हारी रानी शृङ्गार करके मान में भरी हुई मुझसे कहने लगी 'क्या संसार में मुझ से अधिक सुन्दरी कोई है?' मैंने स्पष्ट कह दिया कि सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मिनी के सामने तुम ऐसे ही हो जैसे दिन के सामने रात। यह सुनते ही वे आग-बबूला हो गईं और मुझे मारने की आज्ञा दे दी।

दासी सब कुछ समझ गई। वह तर्क में न पड़ इस निर्णय पर पहुँच गई कि इस बुद्धिमान सूए को मारना राजा और मानवता की दृष्टि में भारी अपराध हो सकता है। इसलिए इसे राजा के आने तक छिपाकर रखे देती हूँ। यदि राजा आकर रुष्ट हुए तो मैं उन्हें देकर इनाम पा लूँगी, यदि उन्होंने भी तोते को मारना चाहा तो मैं इसकी गर्दन मरोड़ दूँगी।

बाँदी ने हीरामन को उपवन के घने हरे झुरमुट में छिपा दिया।

पिंजरे में बन्दी सूआ मन ही मन में सोचने लगा, "मंज़िल तक तो आ गया, अब लक्ष्य पर पहुँचना बाकी है। यह राजा रत्नसेन सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मिनी के लिये सर्वश्रेष्ठ वर है। सुन्दर भी, गुणी भी, वीर भी और उदार भी। चित्तौड़ का यह दुर्ग जिसकी दीवारें दिशाओं की परिधि की तरह दृढ़ हैं, यहाँ का वैभव जिसके सामने इन्द्रपुरी की मणि राशियाँ भी शर्माती हैं, यहाँ का सत्य जिसकी कान्ति ध्रुव तारे की तरह स्थिर है! बस इस बार राजा रत्नसेन से आँखें चार हुईं कि मैंने उस पर जादू किया।"

पिंजरे में बन्दी सूआ सोचते ही सोचते सो गया और उधर राजा रत्नसेन आखेट से लौटकर आये। शिकार से जब वे लौटे तो आज उन्हें कुछ देर हो गई थी। चाँदनी छिटक छिटक कर सम्पूर्ण शैया को सुनहरी बना चुकी थी और उस पर करवटें बदलती हुई नागमती राजा की प्रतीक्षा में द्वार पर आँखें बिछा देती थी।

राजा रत्नसेन नींद के नशे में थके से आये और शैया पर लेट गये।

नागमती ने स्वामी के मुलायम बालों में उँगली फेरते हुए कहा—"इतनी देर कर दी?"

रत्नसेन— प्रतीक्षा में जो आनन्द है वह मिलन में कहाँ है रानी! इन्तज़ार के बाद जो मिलता है उसमें स्वर्ग सुख है।

नागमती— आपकी हर बात में व्यंग्य होता है, लेकिन हमसे प्रतीक्षा का दुःख नहीं सहा जाता।

रत्नसेन— और मुझसे ही क्या तुम्हारी दूरी सहन होती है! पर क्या करूँ, राजा पर एक नहीं अनेक उत्तरदायित्व होते हैं। हाँ रानी! हीरामन कहाँ है?

रानी ने डरते हुए क्रोध से कहा— उड़ गया।

रत्नसेन— क्या? क्या तुमने पिंजरा खोला था?

नागमती— नहीं, हाँ।

रत्नसेन— पहले नहीं, फिर हाँ! बात क्या है रानी! तुम काँप क्यों रही हो? सच-सच बताओ!

नागमती— मैंने उसे मरवा दिया।

रत्नसेन— क्या? तुमने ज्ञानी हीरामन को मरवा दिया! क्यों मरवा दिया उसे? क्या तुम नहीं जानती थीं कि वह हमें प्राणों से भी अधिक प्यारा है।

नागमती— लेकिन वह मेरे मुँह पर मेरी निन्दा करता था, इसलिये मैंने उसे मरवा डाला।

रत्नसेन— तुमने क्यों मरवाया है? किसने मारा है उसे?

नागमती— तोते के लिए आप मुझ पर इतने बिगड़ रहे हैं! मैंने अपनी दासी चित्रा से उसकी गर्दन तुड़वा दी और इसी आशंका से तुड़वा दी कि वह आपको मुझसे भी अधिक प्यारा था। मैं नहीं चाहती कि संसार में कोई आपके लिए मुझसे अधिक प्रिय हो।

रत्नसेन— लेकिन इसके लिये स्वयं को मिटाना था, दूसरे को मिटाकर तुमने मेरे हृदय में प्यार की एक रेखा कम करदी। तुमने हमारे हीरामन को मरवाया और हम उस दासी को मरवा देंगे जिसने तुम्हारे कहने से हमारे हीरामन को मार दिया।

क्रोध से काँपते हुए राजा दूसरी छत पर चले गये। आवेश में वे इधर से उधर घूमने लगे और फिर उबल कर प्रतिहारी को आज्ञा दी कि चित्रा दासी को उपस्थित करो।

राजाज्ञा सुनते ही चित्रा काँपती हुई महल की उस छत पर आई जहाँ राजा रत्नसेन अँगारे की तरह लाल होकर क्रोध से काँप रहे थे। चित्रा को देखते ही उनकी अग्नि में घी पड़ गया। उन्होंने धधकते हुए कहा— हीरामन को तुमने मारा है?

चित्रा ने आँखें नीचे किये हुए ही कहा— नहीं, राणा जी! रानी जी की आज्ञा होते हुए भी मैंने यह सोचकर कि हीरामन आपको बहुत प्यारा है उसे बाग के झुरमुट में छिपाकर अपनी छोटी बहिन को पहरे पर छोड़ दिया है।

चतुर दासी का उत्तर सुनते ही राजा रत्नसेन का सारा क्रोध सावन भादों की झड़ी की तरह मुस्कान की फुहारों में बदल गया और उन्होंने प्रसन्न होकर आज्ञा दी कि चित्रा को एक हजार स्वर्ण मुद्रा पुरस्कार स्वरूप दे दी जायें।

दिन जब बदलते हैं तो बात की बात में बदल जाते हैं। भला करने के बदले में प्रसाद अच्छा ही मिलता है। तोते की जान बचाने के उपलक्ष में चित्रा को एक हजार मुद्रा का पुरस्कार मिला। पुरस्कार पाकर खुशी से फूलती हुई चित्रा ने हीरामन के गुण गाते हुए सूआ राजा रत्नसेन को लाकर दे दिया।

राजा ने हीरामन को पुचकारते हुए कहा— सच सच बताओ सूए! तुमने नागमती के साथ क्या व्यवहार किया था, जो उसने तुम्हें मरवाने की आज्ञा दे दी?

हीरामन— "मैं असत्य तो बोलता ही नहीं। जिस दिन झूठ बोलूँगा उस दिन वाणी कट कर गिर पड़ेगी। बात यह थी राजन्! कि रानी नागमती अपने रूप पर गर्व करती हुई मुझसे कहने लगी कि क्या संसार में कोई मुझसे अधिक सुन्दर है?

मैंने कह दिया— हाँ, सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मिनी के सामने तुम ऐसे ही हो जैसे दिन के सामने रात।

इस पर रानी को क्रोध आ गया। उसने निकलते हुए सूर्य की तरह लाल लाल होकर मुझे मारने के लिये चित्रा दासी के सुपुर्द कर दिया।

आगे की कहानी आप सब जानते ही हैं।"

तोते से अपने पीछे की घटना सुनकर राजा रत्नसेन असमंजस में पड़ गये और उत्कंठित से बोले— क्यों हीरामन! क्या तुमने यह सच कहा है कि सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मिनी के सामने हमारी रानी नागमती उजाले में अँधेरे की तरह है? क्या वास्तव में संसार में परम सुन्दरी नागमती से भी सुन्दर कोई है?

हीरामन— मैंने अभी तो आपसे निवेदन किया था कि मैंने झूठ कभी नहीं बोला और न ही बोलूँगा। सचमुच पद्मिनी के सामने नागमती तो क्या, देव किन्नर और नाग जाति की सुन्दरियाँ भी तुच्छ हैं।

रत्नसेन— कैसी है वह सुन्दरी?

हीरामन— उसमें हजार चाँद से भी अधिक शीतलता है, करोड़ों गुलाब के फूल मानो उसके अधरों की लाली से अरुण हुए हैं, उसकी आँखों में आकर्षण का अमृत है, मुख पर करोड़ों दिवाकरों की छटा है। उसके सामने जाते ही मनुष्य मूर्च्छित हो जाता है।

रत्नसेन— क्या सच हीरामन!

हीरामन— मैंने कहा नहीं कि मैं झूठ नहीं कहता, फिर आपको बार-बार सन्देह क्यों होता है?

रत्नसेन— सन्देह इसलिये होता है कि हर झूठ बोलने वाला यही कहता है कि मैं झूठ नहीं बोलता। पर तुम्हारी कोई भी बात झूठ नहीं देखी। और फिर तुम्हारे कहते ही मेरे मन में न जाने क्यों उसके प्रति चाह जाग उठी है। क्यों हीरामन! क्या किसी उपाय से हम पद्मिनी को पा सकते हैं? क्या किसी तरह हमें उस सुन्दरी के दर्शन हो सकते हैं?

हीरामन— मेरे होते आपकी क्या इच्छा पूरी नहीं हो सकती राजा जी! आपके गुणों ने मुझे इतना मोह लिया है कि मैं अपने

प्राण देकर भी आपकी इच्छा पूरी कर सकता हूँ। किन्तु त्याग, तपस्या और बलिदान के बिना कुछ नहीं हो सकता। यदि आप में लगन और साहस है तो समुद्र पार के उस चन्द्रमा को अपने महल की ज्योति बना सकते हो।

रत्नसेन— जब से तुमने पद्मावती का नाम लिया है, तब से न जाने क्यों हमारे हृदय में हलचल होने लगी। हमें चित्तौड़ का वैभव तथा यहाँ का रूप फीका फीका लगने लगा। हमारी इच्छा है कि जोगी होकर पद्मावती को पाने के लिए निकल पड़ें। हमारा चित्त अब चित्तौड़ में नहीं लगता। हम चाहते हैं कि हमारे पंख लग जायें और उड़कर पद्मिनी के पास पहुँच जायें।

हीरामन— प्रेम में यही दशा होती है चित्तौड़ नरेश! जिसे प्रेम की लौ लग जाती है उसे राजपाट कुछ अच्छा नहीं लगता।

रत्नसेन— पद्मावती को देखा नहीं और मैं इस तरह व्याकुल हो उठा हूँ, यह क्या रहस्य है ज्ञानी!

हीरामन— प्रेम का सम्बन्ध दर्शन से नहीं, अन्तर से होता है। जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों से प्रेम का नाता जुड़ा रहता है। यह वह आग है जो लगाये न लगे और बुझाये न बुझे।

रत्नसेन— तुम मेरे गुरु बन जाओ, हीरामन! और मुझे पद्मिनी के पाने का पथ बतादो।

हीरामन— इतने अधीर क्यों होते हो राजा! प्रेम के चरणों में सौन्दर्य को झुकना ही पड़ेगा। प्रेम के सामने सारी शक्तियाँ पराजित हैं। आँधी, पानी, तूफान कोई भी प्रेम के पथिक को नहीं रोक सकता। चलो, आगे आगे मैं और पीछे पीछे तुम मेरे साथ चलो! मंज़िल पर मंज़िल तय करते हुए राही लक्ष्य पर पहुँच ही जायेंगे। लेकिन शर्त यह है कि पग पीछे न हटाना।

रत्नसेन— हम मर सकते हैं पर टल नहीं सकते। चित्तौड़ की मिट्टी की सबसे बड़ी खूबी यही है कि यह वेद वाक्य की तरह अडिग है।

हीरामन— तो फिर लक्ष्य की प्राप्ति भी निश्चित है। देर की आवश्यकता नहीं, बृहस्पतिवार को सिंहल द्वीप के लिए कूच कर दो। लेकिन समुद्र पार करने के लिए जहाज की आवश्यकता होगी। सुना है जहाज कलिंग देश के राजा गजपति के पास है। जहाज के बिना समुद्र पार करना सम्भव नहीं है।

रत्नसेन— चाहे हथेली पर सरसों क्यों न उगानी पड़े, चाहे लोहे के चने भी उबाल कर गलाने पड़ें, लेकिन रत्नसेन पद्मावती को पाये बिना वापिस नहीं लौटेगा।

सहसा नागमती ने प्रवेश करते हुए कहा— "नहीं, यह नहीं हो सकता। मैं जो सोच रही थी वही हुआ। इस सूए ने मेरे घर में आग लगा दी। पत्नी के जीवित रहते आप शरीर पर भस्म लगाकर नहीं निकल सकते। मैं तुम्हें जोगी नहीं होने दूँगी। चित्तौड़ में हीरामन नहीं आया, चित्तौड़ के लिए अभिशाप आया है। मैं अभी इसकी गर्दन तोड़े देती हूँ।"

कहती हुई नागमती तोते की तरफ झपटी, पर रत्नसेन ने उसे बीच ही में रोकते हुए कहा— चतुर होकर नादान न बनो नागमती! हीरामन के सामने चित्तौड़ की सारी निधियाँ तुच्छ हैं। धीरज और समझदारी से काम लो। हम पद्मिनी को पाने के लिए जायेंगे और अवश्य जायेंगे। इतने चित्तौड़ का शासन तुम्हारे और लक्ष्मण के सुपुर्द है। गोरा बादल की देख-रेख में हम तुम्हें छोड़े जाते हैं। तुम पद्मावती सहित हमारे लौटने की प्रतीक्षा करना।

नागमती— पुरुष पत्नी को मिट्टी का खिलौना समझता है। वह

जब चाहता है खेल खेल में उसे तोड़ डालता है। नारी पुरुष की प्रतीक्षा करती है और पुरुष चार दिन के सुनहरी स्वप्न के बाद छल करके नारी से दूर चला जाता है। न जाओ मेरे राजा! न जाओ। तनिक उन पलों की ओर तो ध्यान दो जो नागमती आपके वियोग में तड़प तड़प कर काटेगी।

रत्नसेन— विश्वास रखो नागमती! मैं पद्मिनी को साथ ले शीघ्र ही चित्तौड़ आऊँगा और तब नागमती तथा पद्मिनी चित्तौड़ की दो श्रेष्ठ ज्योति राशि होंगी।

नागमती— नवीनता की चाह में भोली नारी को बहकाने का प्रयत्न क्यों कर रहे हो राजा! यदि नहीं मानते तो जाओ, नागमती अपने आँसुओं के समुद्र में बैठी हृदय-धन के आने की प्रतीक्षा में प्राणेश्वर के नाम की माला जपती रहेगी। उसका श्वास श्वास आपके मंगल के लिए प्रार्थना करता रहेगा।

नागमती गीली आँखों से राजा रत्नसेन को देखती रही, और राजा पद्मिनी के ध्यान में डूबे हुए सूए को ले दुर्ग के सूने उपवन में आ गये।

३

सूर्य के ताप से गलती हुई हिम-पुतली सी नागमती राजमाता रोहिणी के सामने पछाड़ खाकर गिरती हुई बोली— गजब हो गया राजमाता! राणा जी सिंहासन छोड़कर जोगी होने जा रहे हैं।

रोहिणी— यह तू क्या कह रही है, नागमती!

नागमती— मैं सच कह रही हूँ माँ! जब से चित्तौड़ में हीरामन सूआ आया है तब से वे अपने आप को भूल बैठे हैं। जो हीरामन कहता है उसी को ध्रुव मानकर चल पड़ते हैं। अब उसी के कहने से वे सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मिनी को पाने के लिए जोगी होकर निकल रहे हैं। मैं लुटी जा रही हूँ राजमाता! चित्तौड़ का सिंहासन सूना हुआ जा रहा है। अब तुम ही इस घोर आपत्ति से बचाओ।

रोहिणी— रो मत नागमती! धीरज रख, मैं अभी भीम को बुलवाती हूँ।

कहते हुए राजमाता रोहिणी ने प्रतिहारी से कहा— "रत्नसेन से

कहो कि तुम्हें राजमाता ने इसी समय स्मरण किया है।"

प्रतिहारी के साथ ही राणा रत्नसेन पूजा के उस प्रासाद में आ गये जिसमें अस्तव्यस्त नागमती को राजमाता रोहिणी धीरज दे रहीं थीं।

रत्नसेन को देखते ही राजमाता ने आँखें लाल करते हुए कहा— क्यों रे भीम! नागमती से मैं क्या सुन रही हूँ?

रत्नसेन— जो सुन रही हो वह अक्षरशः सत्य है, राजमाता!

रोहिणी— क्या कहा? तेरी धृष्टता यहाँ तक बढ़ गई है! छोटे बड़े का भी लिहाज नहीं रहा।

रत्नसेन— प्रेम में किसी को किसी का ध्यान नहीं रहता। प्रेम के पथ में जो भी आता है, प्रणय-पथिक के लिए वही काँटा है।

रोहिणी— जान पड़ता है सूए ने तेरी मति मार दी।

रत्नसेन— कुछ भी हो, अब या तो मैं पद्मिनी को पाऊँगा, अन्यथा उसी पथ में प्राण दे दूँगा।

राजमाता ने जब देखा कि भीम के सिर पर पद्मिनी के प्रेम का भूत पूरी तरह सवार हो चुका है तो वे क्रोध को प्यार में बदलती हुई बोलीं— तू यह तो सोच भीम! कि तेरे बिना चित्तौड़ का क्या होगा, यह राजपाट कौन सँभालेगा?

रत्नसेन— चित्तौड़ के महाराणा लक्ष्मणसिंह।

रोहिणी— लेकिन वह तो अभी बच्चा है। चित्तौड़ का सारा उत्तरदायित्व तो तुम पर है। तुम ही चित्तौड़ के शासक हो।

रत्नसेन— लेकिन मैं तो तब तक राज्य करने में असमर्थ हूँ जब तक कि पद्मावती को प्राप्त न करलूँ।

रोहिणी— लेकिन इतने चित्तौड़ और नागमती का क्या होगा?

रत्नसेन— चित्तौड़ के सिंहासन पर लक्ष्मणसिंह विराजमान रहेंगे

और सेनापति गोरासिंह चित्तौड़ के पहरेदार हैं ही। उनके होते हुए किसकी शक्ति है कि जो चित्तौड़ की ओर आँख भी उठा सके। नागमती को इतने तुम्हारे सुपुर्द किये जा रहा हूँ।

रोहिणी— तो क्या तुम किसी तरह भी नहीं रुकोगे ?

रत्नसेन— नहीं, राजमाता ! मैं विवश हूँ। मुझे ऐसा लग रहा है जैसे कोई दूर से मुझे अपनी ओर खींच रहा है।

राजमाता जब लाचार हो गई तो उसने कहा— यदि तू नहीं मानता है तो जा, किन्तु अकेला न जा, अपने साथ धन और चुने हुए राजपूतों को लेता जा ! ये आपत्ति के समय तेरे काम आयेंगे। सिंहलद्वीप का राजा गन्धर्वसेन बड़ा ही शक्तिसम्पन्न है। मेरा भीम वीर अवश्य है, लेकिन कहाँ सिंहलपति और कहाँ तू !

रत्नसेन— मेरे साथ आपका आशीर्वाद जो होगा माँ ! ईश्वर की कृपा जो होगी। माना कि प्रेम के पथ में पत्थर ही पत्थर होते हैं, पर इस राह के राही के साथ ईश्वर और प्रेम की वह ज्योति चलती है जो तूफानों से नहीं बुझती, बवंडरों से नहीं काँपती।

रोहिणी— तू तो सदा ऐसी ही पागलों जैसी बातें करता है। मौत जैसे तेरे लिए कुछ है ही नहीं। देख, चित्तौड़ के चुने हुए सोलह हजार राजपूतों में से सोलह सौ राजपूत तेरी सुरक्षा के लिए तेरे साथ जायेंगे; यह राजमाता की आज्ञा है।

रत्नसेन— आपकी आज्ञानुसार मैं सोलह सौ राजपूत साथ ले जाऊँगा। तुम कामना करना माँ ! कि पद्मिनी सहित शीघ्र ही चित्तौड़ लौटूँ।

नागमती जो अब तक आँसुओं को आँखों ही में पी रही थी कातर होकर कहने लगी— मुझ में आपको ऐसा क्या अभाव दीखने लगा जो पद्मिनी को बिना देखे ही आपको उससे इतना प्रेम हो गया ?

रत्नसेन— न जाने क्यों मुझ में पद्मावती के लिए इतनी चाह जाग उठी है! तुम में अभाव नहीं और तुम से वैराग्य भी नहीं। किन्तु पद्मिनी के बिना मैं करोड़ यत्न करने पर भी सन्तुष्ट नहीं रह सकता, भटकता ही रहूँगा और जो अतृप्त भटकता ही रहता है वह जीवित ही नरक में है।

नागमती— किन्तु एक पत्नी के होते हुए दूसरी की इच्छा क्या पाप नहीं है?

रत्नसेन— दुनिया में पाप केवल अपनी इच्छा को मारना है। मुक्ति का अर्थ जानती हो नागमती! मुक्त मनुष्य तृप्त रहता है, उसकी इच्छा होते ही उसकी इच्छा की तृप्ति हो जाती है। स्वर्ग के भोगियों को देवता इसीलिए कहा जाता है कि उनका जीवन अभावों में नहीं भटकता, वे जो चाहते हैं वह उनकी मुट्ठी में रहता है।

नागमती— चाह क्या कभी पूरी होती है, और फिर मैं तो यह कह रही हूँ कि अपनी तृप्ति के लिए दूसरे को दुःख देना क्या धर्म है?

रत्नसेन— धर्म जय को कहते हैं नागमती! दुनिया में दूसरे का सुख देखकर प्रसन्न होने वाले भी अपनी ही तो तृप्ति करते हैं। विश्व में जो कुछ है वह अपनी तृप्ति के लिए है। तनिक गहराई से यह तो सोचो कि तुम मुझे अपने सुख के लिए रोक कर मुझ पर और मेरे प्रेम पर वज्रपात नहीं कर रहीं, क्या इससे तुम मुझे दुःख नहीं दोगी? यदि वास्तव में तुम मुझे पाना चाहती हो तो स्वयं को खोकर पाओगी। तुम समझती हो कि तुम्हारे पास सब कुछ है, मैं भी मानता हूँ, पर मैं अपने हृदय की अँगूठी में नीलम और लाल दो नग जड़ना चाहता हूँ। एक नग नागमती है और दूसरे नग पद्मावती को पाने जा रहा हूँ। उसके बिना मैं स्वयं को अधूरा समझ रहा हूँ। बिना पद्मनी के

मेरे जीवन में प्रेम का अभाव बना हुआ है। मैं दो पत्नी चाहता हूँ। दूसरी पत्नी के लिए जैसी कल्पना मैं मन ही मन में किया करता था वैसी सूए ने मुझे पद्मिनी में बताई है। पद्मिनी के बिना मेरे उर में वियोग का एक घाव रिस रहा है। यह कसकता हुआ घाव मेरी आँखों में कृपण के धन की तरह छिपा रहा। बस अब और अधिक न छेड़ो, अब या तो रत्नसेन की दो रानियाँ होंगी अन्यथा उसकी कोई भी रानी न रहेगी। हम अपने जीवन में पूर्ण प्रेम चाहते हैं और वह सिंहलद्वीप की राजकुमारी में हमारी प्रतीक्षा कर रहा है।

नागमती से आगे कुछ कहा नहीं गया। उसने लाचार आँखों से रत्नसेन को देखा और हिचकियाँ भरने लगी।

रोती हुई नागमती को रत्नसेन ने उठाकर वक्ष से लगाया और धीरज देते हुए कहा— रोओ नहीं नागमती! धीरज रखो, मैं तुम्हें वचन देता हूँ कि जिस प्रकार पद्मावती को पाने की इच्छा मेरे मन में जागती रहेगी उसी प्रकार तुम्हारी स्मृति भी मेरे मन में कभी नहीं सोयेगी। मैं तुम्हारी याद का दीपक लिए पद्मिनी को खोजने जा रहा हूँ।

नागमती— जाओ, मेरे देवता! सचमुच मुझमें कोई अभाव है, तभी तो आप पद्मिनी के लिये आकुल हो उठे। जाओ, लेकिन यह याद रखना कि चित्तौड़ के दुर्ग में यह दासी हृदय-मन्दिर में आपकी मूर्ति स्थापित कर प्रति क्षण प्रतीक्षा के श्वास लेती रहेगी और एकलिंग महाराज से आपके मंगल की याचना करती रहेगी। भारतीय नारी अपने पति की तृप्ति के लिए स्वयं को तिल तिल करके जला भी सकती है।

रत्नसेन— जो जलता है, वही प्रकाश देता है। जो जल नहीं सकता, उसका प्रेम पूर्ण नहीं।

नागमती— तो यह प्राणों का दीपक आपकी प्रतीक्षा में जलता रहेगा और जिस दिन इसमें स्नेह नहीं रहेगा उस दिन सदा सदा के लिए बुझ जायेगा।

रत्नसेन— रत्नसेन का स्नेह नागमती के लिए कभी समाप्त नहीं होगा। जिस दिन नागमती नहीं रहेगी उस दिन पद्मावती के रहते भी रत्नसेन नहीं रहेगा। मेरी केवल एक इच्छा है और वह यह कि मेरे महल में संसार के दो सर्व सुन्दर फूल खिले रहें। मैं अपने हृदय-उपवन को दो सुन्दरतम फूलों से सुगन्धित करना चाहता हूँ। तुम मेरे पथ में अपने प्यार की वह गति भर दो कि जिससे लक्ष्य तक पहुँच सकूँ, अपनी सहिष्णुता की वह गङ्गा बहा दो जिससे सौतिया डाह की आग सदा सदा को बुझ जाये और चन्द्रमा की चाँदनी नील कुमुद व पाटल प्रसून पर सम रूप लहलहाती रहे। हृदय में गुञ्जाइश हो तो उसमें समुद्र को भी डुबाया जा सकता है। दिन जाते देर नहीं लगती, नागमती! जिस तरह नींद में समय बीत जाता है, उसी प्रकार संसार के कर्मों में समय का पता नहीं चलता।

नागमती— पर विरह की घड़ियों में समय पहाड़ हो जाता है। जब तक आप नहीं आयेंगे तब तक आपके नाम की माला ही मुझे सहारा देती रहेगी।

प्रतीक्षा का दीपक लेकर नागमती चित्तौड़ के महल में पूजा करने लगी और रत्नसेन ने सोलह सौ जवानों को साथ ले सिंहलद्वीप के लिए कूच कर दिया।

राह की कठिनाइयों को पार करते हुए वे कलिंग आये। कलिंगराज गजपति ने चित्तौड़ राज्य की गरिमा के अनुसार रत्नसेन का हार्दिक स्वागत किया। सारे कलिंग राज्य में रत्नसेन के आने की धूम मच गई। जैसे कोई अपने पुत्र से प्रेम करता है वैसे ही कलिंग नरेश

गजपति ने रत्नसेन को बार बार गले से लगाया, और फिर मार्ग बताते हुए रत्नसेन के सुपुर्द वह जहाज किया जो सरिता और समुद्र में चल सकता था। बहुत दूर तक गजपति ने रत्नसेन को उसके साथियों सहित राजसी सम्मान के साथ पहुँचाया और फिर यह कहते हुए चले आये, "साहस न छोड़ना, आपत्ति के समय शिव को पुकारना, वे तुम्हारी सहायता करेंगे।"

गजपति से विदा लेकर रत्नसेन ने जल मार्ग से प्रस्थान किया। भारी बरसात में जब कि नदियों का पानी अपनी जवानी पर था तब प्रेम का वह पथिक अपने काफिले को साथ ले पानी की छाती चीरता हुआ आगे बढ़ता चला गया।

लहरों ने रोका, मझधार डुबाने के लिए आये, भँवरों ने चक्कर काटे, किन्तु सन्तरण कब रुकते हैं! तैरने वाले जब पानी में कूद पड़ते हैं तो हर मझधार किनारा बन जाता है। आँधी दीपक को बुझाती है, आग को नहीं। हृदय की आग आने वाले तूफानों से और धधकती है। जिसके हृदय में प्रेम की आग धधक उठती है वह मृत्यु से नहीं डरता। उसकी गति बाधाएँ होते हुए भी अबाध होती है। वह प्रेम का दीपक हाथ में लिये चलता ही रहता है। इस प्रकार पहाड़ों और समुद्रों को पार करता हुआ रत्नसेन हीरामन के साथ मानसरोवर समुद्र के उस तट पर उतरे जहाँ सिंहलद्वीप था।

सात समुद्र पार कर किनारे पर आ रत्नसेन के सब साथियों ने अन्दर राजपूती बाना तथा ऊपर से जोगियों का वेश धारण कर लिया, और चल पड़े हीरामन के साथ साथ। अनजाने पथ पर पथ से परिचित हीरामन ने रत्नसेन से कहा— "यहाँ से थोड़ी ही दूर पर सिद्ध शिव मन्दिर है। इस मन्दिर की यह महिमा है कि जो भी भक्ति भाव से भगवान शंकर का अखण्ड जाप करता है उसे मनवांछित

फल प्राप्त होता है। इसी मन्दिर में बसन्त पंचमी के दिन पद्मिनी बसन्त पूजा करने आया करती है। यहीं तुम्हें पद्मिनी के दर्शन होगें, और यदि तुमने भोले बाबा को प्रसन्न कर लिया तो इसी मन्दिर के महादेव की कृपा से तुम्हें पद्मिनी मिल जायेगी। तुम इसी मन्दिर में प्रेम का दीपक लेकर शिव की आराधना करने बैठ जाओ और मैं तुम्हारे प्रेम का सन्देश लेकर राजकुमारी पद्मिनी के पास जाता हूँ।"

राजा रत्नसेन अपने साथियों सहित अखण्ड शिव पूजा करने बैठ गये और हीरामन राजकुमारी पद्मावती के महल की ओर उड़ चला। उड़ता उड़ता जिस समय वह महल में पहुँचा तो पद्मिनी अपने रत्नजड़ित कमरे में इधर से उधर टहलती हुई हीरे और जवाहरातों को लज्जित कर रही थी। वह उड़कर सहसा पद्मिनी के हाथ पर आ बैठा।

बहुत दिनों के बाद अकस्मात हीरामन को देखते ही पद्मिनी बेहाल हो गई। उसके ज्योतिपुंज से मुख पर आँखों के मोती बिखरने लगे, ऐसे ही जैसे गुलाब के फूलों पर ओस की बूँदें बिखर जाती हैं। थोड़ी देर तक वह कुछ कह न सकी तथा जैसे चाँद पर बादल घिर आते हैं ऐसे ही पद्मिनी का सारा मुँह आँखों के पानी में इस प्रकार चमकने लगा जैसे शीशे में कोई तस्वीर झलकती है।

हीरामन ने धीरज देते हुए कहा— शीशे पर पानी नहीं लगाना चाहिये पद्मिनी! कहीं उसमें निशान न पड़ जायें। रोने ही में समय न खोओ, मैं जो कहने आया हूँ वह सुन तो लो!

पद्मिनी— तुम इतने दिन तक कहाँ रहे हीरामन! तुम मुझे छोड़ कर कहाँ चले गये थे? .

हीरामन— तुम्हारे लिए वर ढूँढने गया था पद्मिनी! और वह ढूँढ लाया।

पद्मिनी— यह क्या कह रहे हो हीरामन! हम बिना देखे और बिना प्रेम की परीक्षा लिये किसी भी पुरुष के बारे में यह शब्द सुन भी नहीं सकते जो तुम कह रहे हो।

हीरामन— मैंने जो कुछ कहा है देखने और परीक्षा लेने के बाद ही कहा है। तुम भी देख लो और परीक्षा ले लो। वह महादेव मन्दिर में तुम्हारी प्राप्ति के लिए भगवान शिव की अखण्ड पूजा कर रहा है। वह तुम्हारे विरह में पहाड़ों, चट्टानों और पानी को दूर करता हुआ सिंहलद्वीप तक आया। वह प्रतिज्ञा कर चुका है कि या तो पद्मावती को प्राप्त करूँगा अन्यथा उसके वियोग में आराधना करता हुआ प्राण दे दूँगा। वह राजा होकर तुम्हारे लिए जोगी होकर निकल पड़ा।

पद्मिनी— क्या सच हीरामन!

हीरामन— हाँ, राजकुमारी! बिल्कुल सच। तुम उसे देख लोगी तो विश्वास दिलाने की आवश्यकता नहीं रहेगी।

पद्मिनी— न जाने क्यों बिना देखे ही तुम्हारे कहने मात्र से मेरे हृदय में एक लौ सी सुलग उठी है। मुझे ऐसा लग रहा है जैसे कोई मुझे अपनी ओर खींच रहा है और मैं खिंची जा रही हूँ।

हीरामन— यह प्रेम का आकर्षण है पद्मिनी! जिसकी ओर मनुष्य बिना आवाज़ के ही खिंचा चला जाता है। मैं ज्ञानी होते हुए भी प्रेम के पिंजरे को नहीं तोड़ सकता, फिर साधारण मनुष्यों का तो कहना ही क्या! प्रेम कोई ऐसा गीत है जिसकी लय पर बड़े बड़े योगी भी रुक जाते हैं। ये वे जंजीरें हैं जो तोड़े से नहीं टूटतीं। कौन है वह जो प्रेम से परास्त नहीं हुआ, कौन है वह जो प्रेम की आवाज़ पर मरा हुआ भी नहीं बोल पड़ा और कौन है वह जो प्रेम के बिना जीवित भी मरा हुआ नहीं है? यह तेरे प्रेम का बन्धन ही

तो है पद्मिनी ! जो मुझ गये हुए को फिर तुझ तक खींच लाया।

पद्मिनी— तुम्हारे पवित्र प्रेम की भी क्या कोई तुलना हो सकती है ज्ञानी !

हीरामन— प्रेम अपवित्र होता ही नहीं, राजकुमारी !

पद्मिनी—वासनामय प्रेम भी क्या प्रेम होता है, ज्ञानी !

हीरामन— वासना का ही दूसरा नाम प्रेम है मानसरोवर की सुन्दरी ! वासना को जब आध्यात्मिक परिभाषा में पुकारा जाता है तब उसे प्रेम कह देते हैं हंसिनी ! जिस दिन धरातल से वासना मिटा दी जायेगी, उस दिन धरती पर किसी का वास ही नहीं रहेगा। प्रचण्ड ज्ञानी व्यर्थ ही वासना और प्रेम में अन्तर करते हैं। समर्थ के लिए वासना प्रेम है और असमर्थ के लिए वासना कलङ्क।

पद्मिनी— इसका तो यह अर्थ हुआ कि वासना ही धरती का सत्य है। जिसे महापण्डित अभिशाप कहकर पुकारते हैं उसे आपने वरदान बना दिया। तुम ज्ञानी ही नहीं हीरामन ! कलाकार भी जान पड़ते हो जो असुन्दर को भी सुन्दर बना दिया।

हीरामन— यह बात नहीं है पद्मिनी ! हम जिस परिभाषा पर प्रकृति को परखते हैं, वह समाज के झूठे आदर्शों के द्वारा निर्माण की हुई होती है। वास्तव में शाश्वत सत्यों पर मनुष्य की स्थिति को पहचानना चाहिये। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह धरती पर ये सब आवश्यक हैं। ये न हों तो दुनिया न रहे। पर इस शास्त्रार्थ से इस समय क्या ? अब तो यह सोचना है कि जो तुम्हारे लिए अनेकों आपत्तियाँ उठाता हुआ महादेव मन्दिर तक आ पहुँचा है तुम उस तक कैसे पहुँचो।

पद्मिनी— तुमने उस पुजारी के प्रेम की परीक्षा तो ले ली है न ?

हीरामन— मैंने तपा कर देख लिया है कि वह सोना ही नहीं, कुन्दन है।

पद्मिनी— तो फिर पद्मिनी भी अग्नि-परीक्षा के लिए प्रस्तुत है। मैं आग की उन लपटों को गले से लगाने के लिए तैयार हूँ जो मेरे प्रेम के पथ में आयेंगी। बसन्त पंचमी को मैं पूजा के बहाने महादेव मन्दिर में अपने जीवन-धन के दर्शन करूँगी। मैं प्रतिज्ञा करती हूँ कि उसी को जयमाला पहनाऊँगी जो मेरे लिए राजपाट छोड़ जोगी होकर निकल पड़ा है।

हीरामन— मैं इस परोक्ष पाणिग्रहण की सूचना रत्नसेन को देने जा रहा हूँ। वह जोगी तुम्हारे नाम की माला जपता हुआ मेरी प्रतीक्षा कर रहा होगा।

पद्मिनी— शुभ सूचना खाली ही नहीं दिया करते हीरामन! लो यह मेरी साड़ी का चीर लेते जाओ, इसे उस प्रेम योगी के हाथों में बाँध देना, जिससे उन सोलह सौ योगियों में मैं अपने मन-मुकुट को पहचानने में भूल न करूँ।

पद्मिनी की साड़ी का सुनहरी चीर ले हीरामन महादेव मन्दिर की ओर उड़ चला। प्रेमदूत की प्रतीक्षा में एकटक बैठे हुए रत्नसेन ने दूर ही से हीरामन को देख अपने दोनों हाथ फैला दिये। प्रेम का सन्देश-वाहक रत्नसेन की उँगली पर आ बैठा और मीठी वाणी में बोला— "मैं तुम्हारे प्रेम का सन्देश पद्मिनी तक पहुँचा आया हूँ और उसके हृदय में वह आग छोड़ आया हूँ कि वह तुमसे मिलने के लिए तुम से भी अधिक व्याकुल है। वह मन से आपको वर चुकी है। वसन्त पंचमी को वह इसी मन्दिर में आपके दर्शन करेगी और आप पद्मिनी को देख अपनी तपस्या सफल करेंगे। सौन्दर्य के दर्शन से आपके सारे अभाव पूर्ति में बदल जायेंगे और आँखें जिस

लिए बनी हैं वे सचमुच पद्मिनी को देखकर सफल हो सकती हैं। वह अद्भुत सौन्दर्य जो देख लेता है उसे फिर कुछ देखने की इच्छा शेष नहीं रहती। पद्मिनी के दर्शनों में नयनों की सम्पूर्ण विधियाँ निहित हैं।

रत्नसेन— केवल दर्शनों से मेरी तृप्ति नहीं होगी ज्ञानी! मुझे तो उस रूप राशि को प्राप्त करने का उपाय बताओ। सौन्दर्य के उस समुद्र में रत्नसेन को अवगाहन करा दो। हुस्न के उस निष्कलंक चन्द्रमा की चाँदनी से चित्तौड़ के महल को जगमगा दो।

हीरामन— महादेव बाबा की कृपा से तुम्हारी हर इच्छा पूरी होगी। किन्तु तपस्या में कमी न आनी चाहिये। पद्मिनी को पाना सरल नहीं है। वह तुम्हें भगवान शिव की भक्ति से ही मिल सकती है। जब तक शम्भो नहीं रीझेंगे, तब तक पद्मिनी तुम्हें प्राप्त नहीं होगी। रूप राशि को पाने के लिए तुम्हें शिव की उसी प्रकार आराधना करनी होगी जिस प्रकार शिव को पाने के लिए पार्वती ने तपस्या की थी।

रत्नसेन— जीवन का उद्देश्य पद्मिनी को प्राप्त करना है। इसके लिए मैं अपने देह के दीपक को तिल तिल करके जलाता रहूँगा। यदि शिव ने मुझ पर कृपा नहीं की तो मैं अपना सिर काट कर उनके चरणों में चढ़ा दूँगा और मेरा आत्मा उनके मन्दिर में तब तक भटकता रहेगा जब तक वे मेरा नया शरीर दे पद्मिनी को नहीं देंगे। मैं प्रेम और सौन्दर्य के लिए वह तप करूँगा जो बड़े बड़े ऋषि कर चुके हैं।

हीरामन— तो तुम्हारी इच्छा भी अवश्य पूरी होगी। तुम शिव की पूजा करो और मैं पद्मिनी को फँसाने के लिए वह जाल बिछाता हूँ जो शिकारी पक्षियों को पकड़ने के लिए बिछाते हैं। अब मैं जा

रहा हूँ। कहीं राजा गन्धर्वसेन को पता चल गया तो वह मेरी और तुम्हारी दोनों की गर्दन समय से पहले ही मरोड़ डालेगा। वह जो दूर अमराइयों के पीछे हरा कानन झलक रहा है उसमें एक बड़ा वटवृक्ष है। उस वृद्ध वृक्ष में एक बड़ा खोल है, उस खोल में मेरा गुरु एक अमर सूआ रहता है। मैं उसके ही पास तब तक विश्राम करूँगा जब तक कि बसन्त पंचमी नहीं बीत लेगी। देखना तनिक भी असावधानी न होने पाये। बसन्त पंचमी को बहुत सावधान रहना। पद्मिनी जब आयेगी तो दूर ही से प्रकाश होता चला आयेगा, सारा कानन सुगन्ध से महक उठेगा तथा समस्त प्रकृति उसके दर्शनों के लिए निर्निमेष हो जायेगी। तुम स्वयं को सँभाल कर रखना, और लाओ अपना हाथ, पद्मिनी की साड़ी का यह चीर तुम्हारे हाथ में बाँधे देता हूँ। इसी को देखकर वह तुम्हें पहचानेगी।

सूए ने रत्नसेन के हाथ में चीर बाँध दिया और उस हरियाले कानन की ओर उड़ चला जहाँ उसके गुरु अमर सूए का निवास था।

४

जब किसी से मोह हो जाता है तो रात रो रो कर बिताई जाती है, दिन भर गा गा कर किसी को पुकारा जाता है। पर जिसे पुकारा जाता है वह और हटता जाता है। हसीन भी विचित्र कातिल होते हैं, जो न मारते हैं और न जीने देते हैं, जो तड़पाते हैं, रुलाते हैं, जो पास बुला कर दूर हट जाते हैं। तलवार का घाव भर जाता है, पर नज़र का घाव नहीं भरता। उस पर किसी दवा का असर नहीं होता। यह वह घाव है जो कसकता रहता है, चसकता रहता है। प्यार का अर्थ आँखों से ढलना और जीवित अंगारों पर चलना है। प्रेम का पंथ तलवार की तेज धार से भी तीक्ष्ण है। प्रेम के लिए बिजलियों के रास्ते से आँखों की बरसात में चलना पड़ता है। फिर भी मनुष्य इस पथ पर चलते रहे हैं और चलते रहेंगे।

कौन है वह, प्रेम के लिए राह में ही जिसकी हड्डियाँ असंख्य पैरों से दब दब कर घनसार नहीं हो गईं! कौन है वह, जो प्रेम की पीर से जल जल कर बुझ नहीं गया! जल के बिना मछली की

छटपटाहट कुछ भी नहीं, जो प्रेमिका के बिना प्रेमी की छटपटाहट होती है। प्रेम करके किसने सुख उठाया है! दुःख मानो प्रेम का लक्ष्य है! प्रेम के आदि में भी दुःख है और अन्त में भी दुःख। संसार चीख चीख कर कह रहा है, मेरे अंक में जो भी जलने आता है उसमें प्रेम की ऐसी भीषण आग होती है कि मैं हर समय धधकता रहता हूँ। चिता की लपटें चमक चमक कर कह रही हैं कि मिलन नहीं विछोह ही सत्य है, पर धरती से आवाज़ आ रही है कि चिता की छाती पर मिलन जीवित रहता है। चिता के जलने से मनुष्य की चाह नहीं जल जाती। आँसू बहते रहते हैं, चिता जलती रहती है, आह निकलती रहती है। किन्तु चाह मिलन के लिए चलती ही रहती है। मरण जलता रहता है और जन्म हँसता रहता है। विरह में व्यथा ही नहीं, सृजन भी है। प्रेम पाप नहीं, पुण्य है, तभी तो तपस्वी जन प्रेम योग साधते हैं। जिसके हृदय में प्रेम नहीं, वह प्रहार का पात्र है। जो प्रेम के पथ में रोड़े बिछाता है उसे पैरों से रौंद डालना चाहिये। प्रेम योगी कठोर व्रत करके विजय प्राप्त करता है।

यह सब सत्य है, कुछ आदर्शवादी प्रेम को प्रणय की सुगन्ध पर असत्य भी कहते होंगे। लेकिन यदि जीवन से प्रेम निकाल दिया जाये तो फिर जीवन में धरा ही क्या रह जायेगा! हिंसा अट्टहास करेगी, धरा रक्त में डूब जायेगी, मनुष्य मनुष्य का मांस खाने लगेगा। प्रेम ही तो मनुष्य में कोमल भावनाओं को जगाता है। सौन्दर्य ही तो मानव को हृदय देता है। प्रेम और सौन्दर्य में जलन का स्वाद होता है। जो जल नहीं सकता उसमें प्रकाश नहीं। जलने वाले ही दूसरों को उजाला देते हैं।

इसी तरह संकल्प विकल्प करते हुए रत्नसेन पद्मिनी के लिए महादेव मन्दिर में अर्चना के दीप बनकर जलने लगे। वे पद्मिनी के लिए

पद्मासन से शिवार्चन में लीन हो गये।

प्रेम में भी क्या शक्ति है कि मनुष्य को पुजारी बना देता है। किन्तु क्या पूजा से प्रिय की प्राप्ति हो ही जाती है, क्या पाषाणों में चेतना आ ही जाती है, क्या उस अनन्त शक्ति के कानों तक प्रेमी की करुण पुकार पहुँचती है ?

सुनते हैं वह सबकी सुनता है, पर प्रेमी की तो सुनते सुनते बहरा हो जाता है। शायद इसीलिए कि उसके स्वर में बिजलियाँ होती हैं जो कानों के परदे फाड़ डालती हैं।

चाहे कोई सुने या न सुने, पर जो जिसे चाहता है उसके कानों तक तड़प का मौन स्वर पहुँच जाता है। जब से हीरामन ने रत्नसेन की सूचना पद्मिनी को दी तब से वह बेचैन हो उठी। रात और दिन वह एक मीठा स्वप्न देखने लगी। वह बार बार चमक उठती और तरह तरह की कल्पनाओं में खो जाती। उसके लिए पल पल पहाड़ हो गया।

कब बसन्त आये और कब शिव मन्दिर में अपने प्रियतम के दर्शन करूँ, इस आशा में वह सब कुछ भूली रहती और चौंक चौंक पड़ती।

वह बार बार देवताओं को मनाती। उसका हर पल रत्नसेन के लिए बेचैन रहने लगा। वह प्रेम में खोई-खोई सी रहने लगी। एक ने दूसरे को देखा नहीं था, लेकिन दोनों के हृदयों में बिजलियाँ चमकने लगीं। बाहर की आँखों से अन्तर दिखाई नहीं देता, लेकिन अन्तर की आँखों से बाहर दिखाई देता है।

पद्मिनी को उसकी जो भी सहेली देखती, उसी को पद्मिनी और भी अधिक सुन्दर दिखाई देती। कैसा अद्भुत सौन्दर्य था पद्मिनी का! कि अन्तर में प्रतीक्षा कौंध कौंध उठती थी और मुख पर अरुणाई आती जाती थी। जो सुन्दर होता है वह तपने पर और भी सुन्दर हो

जाता है।

प्रतीक्षा में तप करते करते अन्ततोगत्वा वह दिन आ ही गया जिस दिन के लिए पद्मिनी व्रत करके प्रतीक्षा कर रही थी। बसन्त पंचमी को पद्मिनी ने बसन्त को भी लज्जित करने वाला शृङ्गार किया। सजधज कर गुलाब, खस, हीना आदि इत्रों की सुगन्ध बगराती हुई वह सखियों सहित महादेव मन्दिर में बसन्त पूजा के लिए चल पड़ी।

बासन्ती फूलों में वह सौन्दर्य राशि ऐसे चली जा रही थी जैसे किसी निराश की मिटी हुई साध जागती चली जा रही हो, जैसे किसी मृतक में जीवन लौट कर चला आया हो, जैसे किसी निर्धन के घर कुबेर ने जन्म ले लिया हो।

फूलों पर तैरती हुई रूप राशि प्रकृति पर अपने सौन्दर्य के पुष्प चढ़ाती हुई शिव मन्दिर में पहुँची। उसने देखा कि रत्नसेन शिव पूजा में नयन मूँदे लीन हैं, मानो उनकी सारी इन्द्रियाँ पद्मिनी की प्राप्ति के लिए शिव की आराधना में एकाग्र हो गई हैं और शिव उनकी पद्मिनी को अपने निराकार अंक में उनके सामने ले आये हों।

पद्मिनी ने निर्निमेष दृष्टि से अपने मन-मन्दिर के देवता को देखा और फिर भक्ति भाव से बसन्त पूजा तथा शिवार्चन किया।

पद्मिनी ने मधुर कंठ से शिव की स्तुति की। किन्तु इतने पर भी जब रत्नसेन की आँखें न खुलीं तो उसने पास आकर कहा— "आँखें खोलो पुजारी! तुम्हारी पद्मिनी तुम्हारे सामने खड़ी है।"

पद्मिनी का नाम सुनते ही रत्नसेन ने आँखें खोलीं। नयन खोलते ही उन्होंने देखा कि बिजली की बोलती हुई मूर्ति सी पद्मिनी उनके सामने खड़ी है और सारे मन्दिर में शरद पूर्णिमा के सौ चाँदों से भी अधिक उजाला हो रहा है।

रत्नसेन ने आँख खोल कर पद्मिनी को अभी आँख भर कर देखा

भी नहीं था कि उसकी अपार रूप ज्योति की कौंध से वे मूर्च्छित हो गये।

रत्नसेन के मूर्च्छित होते ही पद्मिनी ने उनको जगाने के लिए उन पर जल छिड़का, माथे पर चन्दन लगाया। पर रत्नसेन तो मानो पद्मिनी की छवि अपनी आँखों में भर आँख मीच कर ऐसे पड़ गये जैसे न वे किसी को देखना चाहते हैं और न पद्मिनी की छवि किसी को दिखाना चाहते हैं।

पद्मिनी ने बहुत उपचार किया, पर प्रेम योगी का योग न टूटा। हार कर पद्मिनी ने रत्नसेन के वक्ष पर चन्दन से लिखा, "समय पर तो सो गये, अब तो गढ़ पर चढ़ाई करो, तभी तुम्हें पद्मिनी मिल सकती है। तूने प्रेम करना सीखा है, पर अभीष्ट की प्राप्ति का योग अभी नहीं सीखा। प्रेम करने वाले को केवल भावुकता नहीं शक्ति की आवश्यकता है। हाथ में आया हुआ हीरा जब तूने छोड़ दिया तब तो अब समुद्र की तह तक गोता लगाने पर ही हीरा मिलेगा। मैं पुजारी के पास आ गई थी, पुजारी होश में होता तो वह मुझे इतनी दूर ले जाता जहाँ तक तीर की तरह चुभने वाली आँखें हम तक न पहुँच पातीं। प्रेम और राज्य दोनों की प्राप्ति के लिए केवल साधुता नहीं, राजनीति की आवश्यकता है। अब तो मेरे पिता को परास्त करके ही मुझे पा सकते हो। सिंहलद्वीप में प्रवेश कर पद्मावती को पाना सरल नहीं है। किन्तु साहस न छोड़ना, मैं तुम्हारे लिए दान, व्रत तप और अर्चना करूँगी। हीरामन ने जैसा तुम्हें बताया था वैसा ही मैंने तुम्हें पाया है। पर अब राह कठिन है और आशा लेकर जा रही हूँ।"

चन्दन से हृदय पर हृदय के अक्षर लिख पद्मावती चली गई और थोड़ी देर बाद जब रत्नसेन 'शयन स्वर्ग' से वापिस लौटे तो उन्होंने

हृदय पर पद्मिनी की कोमल उँगलियों से लिखा प्रेम-सन्देश पढ़ा। पढ़ते ही रत्नसेन बेसुध हो गये। उनकी प्रेमाग्नि धधक उठी। असंख्य अंगारों से उनका रोम रोम जलने लगा। वे तड़प उठे और पागलों की तरह चारों ओर पद्मिनी को खोजने लगे।

जब पद्मिनी नहीं दिखाई दी तो वे प्राण त्यागने के लिए उद्यत हो गये। यह देख देवी देवताओं में अशान्ति फैल गई, भगवान शंकर का आसन डगमगा उठा।

शिव को अशान्त देख पार्वती ने कहा— क्या है आराध्य!

शिव— मृत्युलोक में एक प्रेमी वियोगाग्नि से तप तप कर निराश हो अपने प्राणों की आहुति देने को उद्यत है। यदि ऐसा हो गया तो सारा संसार इसकी विरहाग्नि से जल जायेगा।

पार्वती— कौन है वह प्रेमी, जिसने अपने प्रेम से आप तक के हृदय में हलचल मचा दी? मैं उसे देखना चाहती हूँ, उसकी परीक्षा लेना चाहती हूँ।

शिव— देखना चाहती हो, परीक्षा लेना चाहती हो तो चलो मेरे साथ। तुम्हें परीक्षा लेने की पुरानी आदत है। पूर्व जन्म में तुमने राम की परीक्षा ली थी, अब प्रेम योगी की परीक्षा लेकर भी अपना सन्तोष कर लो।

कहते ही पलक मारते भगवान शंकर एक कोढ़ी का रूप धारण कर उस मन्दिर में आ पहुँचे जहाँ रत्नसेन शिव की मूर्ति के आगे अपना मस्तक चढ़ाने के लिए म्यान से तलवार खींच रहे थे।

रत्नसेन के सामने आते ही कोढ़ी ने कहा— यह क्या कर रहे हो, आत्म-हत्या करते हो? धिकधिक!

रत्नसेन— एक निराश के लिए और चारा ही क्या है? मनुष्य की जब सब ओर से आशा टूट जाती है और सब की सुनने वाले भोले भी

जब उसकी नहीं सुनते, तो वह हार कर प्राण नहीं छोड़े तो और क्या करे? प्रेम करने वाले के लिए मृत्यु के अतिरिक्त और शान्ति है ही कहाँ? जब पद्मिनी ही आकर चली गई तो मैं ही जी कर क्या करूँगा? सम्भव है मेरे रक्त से भगवान शंकर का हृदय पिघल जाये और वे भविष्य में किसी प्रेमी का हृदय न तोड़ें।

कोढ़ी— ये कैसी बहकी बहकी बातें कर रहे हो भक्त! पागल न बनो, दुनिया में रहो और ब्रह्म को पहचानो!

रत्नसेन— जिसके हृदय में कोई वियोगिनी आ विराजती है उसे योग नहीं भाता। मेरे लिए मृत्यु ही एकमात्र शान्ति का मार्ग है। हट जाओ, मुझे मरने दो!

कोढ़ी— प्रेम प्रेम की रट प्रलाप है भक्त! ईश्वर का नाम लो। यह संसार नश्वर है, यहाँ योग सत्य है। निराकार की उपासना करो! दुनिया में जो कुछ दीखता है वह सब आग है। आग से दूर रहो, सत्य को अपनाओ! चिता की लपटों में राख होने वाली सुन्दरता पर स्वयं को खोते क्यों हो? यहाँ एक नहीं लाखों पद्मिनी भरी पड़ी हैं। किन्तु सब का अस्तित्व मरघट की मिट्टी में मिल जायेगा। तुम अद्वैत हो, तुम में ही सब कुछ है। यहाँ सब एक ही ईश्वर के अनेक रूप हैं और वह ईश्वर मुँह और माथे वाला नहीं है, उसकी गन्ध फूल की सुगन्ध से भी पतली है।

रत्नसेन— क्यों व्यर्थ मेरा समय नष्ट कर रहे हो भैया! मैं यहाँ योग पढ़ने नहीं आया हूँ, मैं यहाँ पद्मिनी को पाने के लिए द्वार द्वार घूम रहा हूँ। शिव के द्वार पर भी नहीं मिलती तो फिर कहाँ जाऊँ?

कहते हुए रत्नसेन ने अपनी तलवार तानी ही थी कि छम छम करती हुई एक अद्वितीय सुन्दरी उनके सामने आ खड़ी हुई और अपनी मुस्कान से फूल बखेरती हुई बोली— मैं पद्मिनी से भी सुन्दर

तुम्हारे लिए आई हूँ।

सहसा अद्भुत रूप राशि को अपने सामने देख रत्नसेन ने चमत्कृत होते हुए कहा— सचमुच तुम बहुत सुन्दर हो! जी चाहता है कि तुम मुझे अपनी गोद में ऐसे ही खिला लो जैसे कोई माँ अपने शिशु को खिलाती है। तुम जैसी सुन्दर यदि मेरी माँ बन जाओ तो हो सकता है वात्सल्य की छाया में पद्मिनी के प्रणय की पीड़ा कुछ कम हो जाये। क्या तुम मुझे उसी प्रकार वात्सल्य दान दे सकती हो जिस प्रकार यशोदा ने कृष्ण को, कौशल्या ने राम को और पार्वती ने गणेश को अंक में दुलार दिया था। मैं तुम्हें माँ बनाना चाहता हूँ, माँ।

सुन्दरता ने मुस्कराते हुए कहा— तुम पद्मावती को भूल जाओ, मैं तुम्हें प्यार का अमृत पिलाऊँगी, तुम्हें प्रणय का स्वाद दूँगी।

रत्नसेन— नहीं माँ! मैं पद्मावती को नहीं भूल सकता। संसार का कोई भी सौन्दर्य मुझे उससे पृथक् नहीं कर सकता। या तो पद्मिनी मिलेगी अन्यथा शिव पार्वती के मन्दिर में रक्त का अर्घ्य चढ़ा दूँगा। मुझे अधिक उलझनों में न डालो माँ! महादेव मन्दिर में प्राणों की बलि देकर शान्ति पाने दो! अब मुझ से रहा नहीं जाता।

कोढ़ी रूप में भगवान शंकर जो पार्वती की परीक्षा पर मन ही मन में मुस्करा रहे थे धीरे से बोले— क्यों बावले बनते हो भक्त! इन देवी जी का कहा मान लो, देखते नहीं कितनी उत्सुक हैं तुमसे मिलने के लिए।

सुन्दरी ने मुस्करा कर लज्जा से नयन नत कर लिये और रत्नसेन ने दुखी होते हुए कहा— क्यों मुझ पीड़ित को सता रहे हो बाबा! मुझे मरने दो। व्यर्थ ही कटे पर नमक छिड़क रहे हो।

कोढ़ी— तुम भी अच्छे बाबा जी के द्वार पर पड़े हो, उसे किसी की क्या पड़ी है! भाँग, धतूरा पिया और समाधि लगा ली, किसी के

दुःख सुख से उसे क्या लेना!

रत्नसेन— ऐसा न कहो, भगवान शंकर यदि भाँग धतूरा पीते हैं तो विष भी तो वे ही पीते हैं। आर्त्त जन की पुकार भोले बाबा से जल्दी कोई नहीं सुनता। आँसुओं की चार बूँदें जहाँ उनके चरणों में ढुलकीं कि वे समाधि से जाग उठते हैं।

कहते कहते रत्नसेन ने देखा कि कोढ़ी के शरीर पर मक्खी नहीं बैठती है, उनकी पलकें भी नहीं झपतीं, और परछाई भी नहीं पड़ती है। उन्होंने गद्‌गद होकर कोढ़ी के रूप में महादेव के चरण पकड़ते हुए कहा— "आप तो शिव हैं, क्यों मुझ पीड़ित की परीक्षा लिये जा रहे हैं? बहुत हो चुका, अब पद्मिनी से मुझे मिलाने में देर न करो। शीघ्र ही उस ईश्वरीय सौन्दर्य से मेरा सम्बन्ध जोड़ दो।"

भगवान शंकर ने भक्त की भावना को पहचानते हुए अपने वास्तविक रूप में प्रकट हो कहा— "ले यह सिद्ध गुटिका और गढ़ में घुस जा! तू अब सिद्ध है, सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मिनी तुझे मिल जायेगी।"

आशीर्वाद देते हुए भगवान शंकर ने रत्नसेन को सिद्धि मंत्र दिये और अन्तर्धान हो गये। शिव से सिद्धि पा रत्नसेन अपने कुछ राजकुमार जोगियों के साथ सिंहलद्वीप की ओर बढ़े।

राजा गन्धर्वसेन के पास जब यह समाचार पहुँचा कि कुछ जोगी उसके राज्य में आ रहे हैं तो उन्होंने दूत को उनका अभिप्राय जानने के लिए भेजा। दूत ने जोगियों के पास आकर कहा— 'कहिये, किस इच्छा से आपका आगमन हुआ है?"

राजा रत्नसेन ने शिष्टता से दूत को अपना अभीष्ट बता दिया। सुनकर दूत राजा गन्धर्वसेन के पास पहुँचा और जब दूत ने यह समाचार राजा गन्धर्वसेन से कहा कि जोगी पद्मिनी से विवाह की

इच्छा लेकर यहाँ आया है तो वह झुँझला उठा।

हीरामन सूआ जो राजा के महल में एक कानिस पर छिपा बैठा था दूत के कथन और राजा के क्रोध को देख तुरन्त चुपचाप उड़ा और वहाँ पहुँचा जहाँ रत्नसेन जोगियों के साथ सिंहलद्वीप की ओर चले आ रहे थे।

हीरामन ने रत्नसेन को देखते ही घबराकर कहा— "आप सीधे मार्ग से न जाकर कुण्ड के मार्ग से दुर्ग में प्रवेश कीजिये। जल के भीतर ही भीतर आप उस दर्वाजे तक पहुँच जायेंगे जहाँ वज्र का एक छोटा द्वार है। उस द्वार को खोलने पर आपको दक्षिण की ओर एक मार्ग मिलेगा। वह मार्ग सीधा उस मन्दिर तक गया है, जिस में पद्मिनी प्रति दिन पूजा के लिए आती है।

मैं पद्मिनी के पास आपके वहाँ पहुँचने का समाचार पहुँचाये देता हूँ। पद्मिनी आपके प्रेम में बहुत ही विह्वल है। वह आपको मन्दिर में मिलेगी और वहाँ से पद्मिनी को ले आप अपने देश चले जायें।"

पद्मिनी का अपने प्रति प्रेम सुनकर रत्नसेन में और भी बल आ गया और वे कुण्ड में कूद पड़े।

पर जैसे ही वे कुण्ड में कूदे, वैसे ही गन्धर्वसेन की सेना कुण्ड के काफी निकट आ पहुँची। जोगियों को आस पास कहीं न देख वे समझ गये कि जोगी गुप्त मार्ग से दुर्ग में पहुँचना चाहते हैं, अवश्य ही वे कुण्ड के मार्ग से गये हैं।

फिर क्या था, सेना दूसरी दिशा से उस वज्र द्वार पर पहुँची जिस पर कुण्ड के मार्ग से रत्नसेन पहुँचने वाले थे। सेना ने वज्र के दर्वाजे पर छावनी डाल दी।

इधर जोगी ने दर्वाजे पर पहुँच भगवान शंकर के वरदान से

उस वज्र द्वार को खोल लिया। उधर से फौज आ गई। जोगी और सेना युद्ध के लिए आमने सामने डट गये। सेना के पास बहुत से अस्त्र शस्त्र थे और जोगियों की सहायता के लिए माँ दुर्गा अपनी आठों भुजाओं में हथियार लिए प्रस्तुत थीं।

पर रत्नसेन ने सेना और जोगियों के बीच में आ शान्ति से कहा—"युद्ध से विनाश होता है, शान्ति से जीने और जीने देने में ही विश्व का कल्याण है। रक्तपात से कोई लाभ नहीं। प्रेम के मार्ग में लड़ाई कैसी! हम युद्ध के लिए नहीं, प्रेम के लिए आये हैं। तलवार की धार से सवाल हल नहीं होते, उल्टे शताब्दियों के लिए तबाही मच जाती है। मनुष्य को मनुष्य का प्यार दो, खून की होली नहीं प्रेम की होली खेलो!"

उत्तर में सेना-नायक ने गर्जते हुए कहा— तुमने महापराक्रमी राजा गन्धर्वसेन के राज्य पर आक्रमण किया है। या तो तुम लोग बन्दी बन कर हमारे साथ महाराज के सामने चलो, नहीं तो हमारी तलवारों को विवश होना पड़ेगा।

रत्नसेन— तलवार से तुम हमारी गर्दन उतार सकते हो पर हमारे मन को नहीं जीत सकते। तलवार का जवाब तलवार से देना सरल है पर तलवार के उत्तर में गर्दन ऊँची करके झुका देना किसी अद्भुत वीर का ही काम है। हम मित्रता और प्रेम का अमृत लेकर आये हैं। आप हमें इस उपहार के बदले जितना भी ज़हर पिलाना चाहें हम पीने को तैयार हैं। लो, बनालो बन्दी! प्रेम के लिए यदि हज़ार बार भी बन्दी बनना पड़े तो मैं सहर्ष प्रस्तुत हूँ। जो प्रेम के लिए सर हथेली पर रख कर निकल पड़ा उसके लिए क्या कारा और क्या शूली! चलो, हम तुम्हारे महाराज के पास चलने को तैयार हैं, हमें बन्दी बनालो!

राजा गन्धर्वसेन की सेना रत्नसेन को बन्दी बनाकर ले चली। कैदी जोगी को देखने के लिए सिंहलद्वीप के नर नारियों का समुद्र उमड़ पड़ा। जोगी के रंग रूप को देखकर राजकुमारियाँ मन ही मन लड्डू फोड़ने लगीं, तरह तरह की बातें आपस में कहानी की तरह होने लगीं। कोई कहती, 'जोगी क्या है, पूनो का चाँद है।' कोई कहती, 'सूरत क्या, कमल का फूल है।' और कोई कहती, 'बड़े पुण्यों से मिलता है ऐसा अलबेला साजन किसी को।' उत्तर में तभी उसकी सहेली कह उठती, 'जान पड़ता है तेरे मुँह में पानी भर आया।'

इस प्रकार बन्दी रत्नसेन अपने रूप के फूल बिखेरता हुआ सेना के पहरे में राणा गन्धर्वसेन के सामने आ गया। राजा ने उसे देखते ही भृकुटी तानते हुए कहा— कहो जोगी, इस जवानी में यह योग धारण करके क्यों निकल पड़े?

रत्नसेन— पद्मिनी के प्रेम में प्रभाकर तप रहा है महाराज! प्रेम की झोली लेकर आपके द्वार पर आया हूँ। मुझे निराश न करो! पद्मिनी के बिना मैं जीवित नहीं रहूँगा। या तो पद्मिनी को लेकर जाऊँगा या आपके दर्वाजे पर अपने प्राण दे दूँगा।

सुनते ही गन्धर्वसेन आगबबूला हो गये। उन्होंने दाँत पीसते हुए कहा— 'तू जोगी नहीं, कोई बड़ा धूर्त है। तन पर भभूत रमाये डाकुओं का दल लिये घूमता फिरता है। मैं तुझे काल कोठरी में डाल सड़ा सड़ा कर मार डालूँगा, तुझे शूली पर चढ़वा दूँगा, गर्म चिमटों से तेरा माँस नुचवा दूँगा।

रत्नसेन— बस, और कोई दण्ड हो तो उसे भी कह डालो! प्रेम के पथ पर जो निकल पड़ा वह मृत्यु से नहीं डरता। जमीन में गड़वा दो, शूली पर टँकवा दो, भूखा प्यासा रखकर मिटा डालो, पर पद्मिनी के नाम की रट नहीं छोड़ूँगा। मुझे पद्मिनी से प्रेम है। मुझे

उस रूप-राशि की चाह है। पद्मिनी ईश्वर ने मेरे लिए बनाई है, तभी तो मुझे उससे इतना प्रेम है। मेरी पद्मिनी मुझे दे दो! प्रेम के पथ में अंगारों की तरह धधकने वाले राजा! प्रेम जैसी पवित्र वस्तु को ठोकर से न ठुकराओ! प्रेम ही जीवन है, प्रेम ही सत्य है, प्रेम ही शिव है और प्रेम ही सुन्दर है। प्रेम का हाथ बढ़ाने वाले को तलवार से नहीं, प्यार से गले लगाओ! पद्मिनी का हाथ मेरे हाथ में दे दो!

गन्धर्वसेन से अब न रहा गया, मानो क्रोधाग्नि में घी की आहुति पड़ गई। उन्होंने भभकते हुए कहा— "इसकी जबान काट दो और बन्द कर दो काल कोठरी में! सवेरे सूर्योदय होते ही इसका सिर काट डाला जाये।"

गन्धर्वसेन की आज्ञा सुनते ही जल्लाद आगे बढ़ा। उसने एक हाथ से रत्नसेन की जीभ खींची और दूसरे से कटार का भरा हुआ वार जीभ पर किया, पर जीभ हिली तक नहीं। बहके हुए हाथ से वार पर वार कर करके जल्लाद हार गया पर जीभ न कटी।

५

दुर्ग के भीतरी भाग की एक भूगर्भ कोठरी में रत्नसेन बन्दी बनाकर डाल दिये गये। काल कोठरी इतनी तंग थी कि उसमें हवा को भी श्वास लेना कठिन था, किन्तु रत्नसेन तो प्रेम की पीड़ा से इतने घुट रहे थे कि हवा, धूप, भूख, प्यास उन्हें कुछ भी याद नहीं थे।

प्रेम की पीर में शाम से सवेरा और सवेरे से शाम हो गई पर रत्नसेन के लिए न सवेरा हुआ न शाम। धीरे धीरे अँधेरे की काली चादर ओढ़े रात निकट आती चली गई। अँधेरी रात और फिर वह अँधेरी कोठरी, हाथ को हाथ दिखाई देना तो दूर रहा, साँसों को आने जाने का रास्ता तक नहीं मिलता था।

दिन में ही जहाँ सूरज की किरण का पहुँचना असम्भव था, वहाँ काली रात के सन्नाटे में किसी का भी आना सम्भव नहीं था। पर सहसा पिंजरे के खुलने की आहट हुई और रत्नसेन ने जो दर्वाजे की ओर देखा तो उसने दिवाकरों की ज्योति के समान सौन्दर्य से दमकती हुई राजकुमारी पद्मावती को सामने देखा।

उस सौन्दर्य राशि को देखते ही रत्नसेन फिर मूर्च्छित हो जाते, पर इस बार तो उनके पास शिवजी की सिद्ध गुटिका थी। रत्नसेन ने निर्निमेष दृष्टि से पद्मिनी को देखते हुए कहा— मैं स्वप्न देख रहा हूँ या सत्य है ?

पद्मिनी ने रत्नसेन को उत्सुकता से देखते हुए कहा— स्वप्न सत्य नहीं होते, पर आज हमारे स्वप्न सत्य हैं।

रत्नसेन— यदि यह स्वप्न नहीं है तो क्या सचमुच मेरी आँखों के सामने सुन्दरता को लज्जित करने वाली परम सुन्दरी पद्मावती प्रस्तुत है ?

पद्मिनी— आराध्य के सामने आराधिका आई है। दर्वाजे खुले हुए हैं, पहरेदार इस समय घोर निद्रा में सो रहे हैं। देर न करो देवता! शीघ्र ही इस बन्दीगृह से निकल चलें।

रत्नसेन— नहीं पद्मिनी! मैं चोर और कायर की तरह तुम्हें भगा कर नहीं ले जाऊँगा। जब तक राजा गन्धर्वसेन प्रसन्नता से मुझे तुम्हें नहीं देंगे, तब तक मुझे बन्दी रहना ही स्वीकार है।

पद्मिनी— ऐसा न कहो, सुबह होते ही पिताजी तुम्हें शूली पर चढ़वा देंगे। तुम नहीं जानते हृदयेश! पिता जी को जब क्रोध आता है तो पहाड़ भी काँपने लगते हैं। मेरा कहा मानो और उनकी कैद से बाहर चलो!

रत्नसेन— नहीं, यह नहीं हो सकता। मैं 'पद्मिनी पद्मिनी' रटता हुआ शूली पर चढ़ जाऊँगा, पर इतिहास में यह नहीं लिखवाऊँगा कि धरती पर एक ऐसा मनुष्य भी आया था जो किसी की लड़की को पिता की इच्छा के विरुद्ध बलात् रावण की तरह चुरा कर ले गया था। यदि प्रेम से मैं तुम्हारे पिता का हृदय जीत नहीं सका तो धिक्कार है मेरे प्रेम को! और यदि प्रेम के पैरों पर मौत नहीं झुकी

तो लानत है मृत्यु पर! या तो कल मुझे पद्मिनी मिलेगी या मृत्यु।

पद्मिनी— तो मैं भी ज़हर में बुझी कटारी सीने से लगाये बैठी रहूँगी। जैसे ही सुनूँगी कि आप शूली पर चढ़ने जा रहे हैं वैसे ही बिजली सी कटार को सीने में भोंक लूँगी।

रत्नसेन— अच्छा, तुम जाओ, कहीं किसी ने देख लिया तो न जाने क्या हो जाये।

पद्मिनी— अच्छा है कोई देख ले, मैंने लज्जा का कहा बहुत माना पर प्रेम की ओर बढ़ते हुए पैर अब लाज से रुकने में असमर्थ हैं। न मैं अब लाज से डरती हूँ न बदनामी से, डरती हूँ तो केवल इस बात से कि कहीं मैं उजाले में न लुट जाऊँ।

रत्नसेन— कौन है वह प्रेम करने वाला जो सूरज के उजाले में नहीं लुटा! पर यह अनोखी बात है कि प्रेम में जितना तपा जाता है जीवन में उतना ही निखार होता है। प्रेमाग्नि में तपने से मनुष्य तेजवन्त होता है।

पद्मिनी— अच्छा तो अब मैं चली और यह आशा लेकर जाती हूँ कि मेरे प्रेम और सौन्दर्य के सत्य से आप पर कोई आँच नहीं आयेगी।

"कोई आँच नहीं आयेगी। देखता हूँ तुझे और इसे अब गन्धर्वसेन की आग से कौन बचाता है। कलंकिनी! तूने कुल की लाज तो मिटा डाली, इस तरह कैद में पड़े एक बन्दी से मेरी आँखों में धूल झोंककर मिलने वाली! तूने यह भी नहीं सोचा कि तू किसकी पुत्री है। क्या मैंने इसीलिए तुझे फूलों की सुगन्धि से पाला था?"

पिता गन्धर्वसेन को सामने देख पद्मिनी सहम गई, पर प्रेम की तीव्रता में न जाने कहाँ की शक्ति आ जाती है। उसने शान्ति से कहा— आपकी पुत्री ने कोई पाप नहीं किया पिता जी! प्रेम अपराध

नहीं है। यहाँ मनुष्य लाचार होता है। प्रेम मनुष्य की विवशता है। लोहे की जंजीरों में मनुष्य का शरीर बाँधा जा सकता है, उसका मन नहीं बँधता। लाख ताले लगाओ पर जिसे किसी से मिलने की चाह होती है वह तो उससे अम्बर फाड़ कर मिल ही लेता है।

गंधर्वसेन— पिता के सामने तुझे ज़बान खोलते हुए शर्म नहीं आती।

पद्मिनी— मैं नहीं, प्रेम की टीस बोल रही है। यदि आप प्रेम के दर्द को मिटा दें तो कहानी आप से आप समाप्त हो जायेगी।

गंधर्वसेन— न होगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। कल प्रातः तुम दोनों ही की दुनिया अलग अलग कर दी जायेगी। मुरारजी! आप पद्मिनी को महल के अन्तर कक्ष में सात तालों में बन्द कर दो; और मैं आज्ञा देता हूँ कि सूरज की पहली किरण निकलते ही इस जोगी के बच्चे का सर काट डाला जाये।

अंगरक्षक मुरारजी ने पद्मिनी को महल के अन्दर कैद कर दिया और उसके आस पास कड़ा पहरा लगा दिया।

घोर पहरे में पड़े पड़े रत्नसेन आप ही आप कहने लगे— "हे शिव! क्या तुम्हारे शब्द भी मृषा हो जायेंगे? क्या अभी तक आपकी परीक्षा पूरी नहीं हुई? तुम तो घट घट की जानने वाले हो। अब और मत तरसाओ भोले बाबा! देख रहे हो पद्मिनी पर क्या बीत रही है। देखते नहीं तुम्हारे भक्त पर भीड़ पड़ी हुई है। बचालो, शंकर भगवान! मुझे बचालो। प्यार पर प्रहार करने वालों पर आपका प्रहार अब और किस दिन होगा? तुमने उस दिन मुझे प्रत्यक्ष होकर शिव गुटिका दी थी, फिर अब क्यों तड़पा रहे हो? आओ, अब पल की भी देर न करो। जब तक आप नहीं आयेंगे गंधर्वसेन की आँखें नहीं खुलेंगी।"

इस तरह रत्नसेन सारी रात 'शिव शिव' रटते रहे। सवेरे पाँच बजते ही राजकीय घण्टा बजा और जल्लाद कारागृह के द्वार पर आ धमके। पिंजरे का दर्वाजा खोल काले पिशाचों ने रत्नसेन को बाहर निकाला और नंगी तलवारों के पहरे में शूली की तरफ ले चले।

पर जल्लाद रत्नसेन को लेकर आधी दूर भी नहीं पहुँचे थे कि न जाने कहाँ से जोगियों का दल जल्लादों पर टूट पड़ा। जल्लादों ने देखा कि जोगी रत्नसेन भी उनकी कैद से मुक्त हैं और जोगी दल डंडे मार मार कर हमारी खोपड़ियों के खड़ंजे बनाये डाल रहे हैं। जल्लादों ने भी वार किये पर जोगियों ने उनके सारे वार काट काट कर उन्हें काट डाला।

राजा गंधर्वसेन के पास जब जोगियों के इस आकस्मिक आक्रमण की सूचना पहुँची तो वह सदल बल जोगियों पर चढ़ आया। जोगियों में और राजा में घोर युद्ध हुआ। राजा ने देखा कि जोगी बेशुमार हैं और वे तरह तरह के अस्त्र शस्त्र चला रहे हैं।

अपनी फौज को गाजर मूली की तरह कटते देख राजा को क्रोध आ गया और वह अपनी बहुत बड़ी सेना सहायता को बुला अड़ड़ाकर जोगियों पर टूट पड़ा। दोनों हाथों में नंगी तलवार लिये राजा स्वयं भूखे शेर की तरह युद्धरत हो गये।

पर राजा की काफी फौज काम आ जाने पर भी जोगियों का बाल भी बाँका नहीं हुआ, यहाँ तक कि राजा का साँस चढ़ गया। वे थक कर हाँपने लगे। अपनी पराजय निश्चित देख गंधर्वसेन ने सोचा कि "यह बात क्या है? अवश्य ही इसमें कुछ रहस्य है। देवता मेरे विरुद्ध जान पड़ते हैं! कहीं मैं कोई धर्म विरुद्ध काम तो नहीं कर रहा हूँ! जरूर कुछ भूल कर रहा हूँ।"

सोचते सोचते गन्धर्वसेन ने जो जोगियों की ओर देखा तो देखते क्या हैं कि स्वयम् भगवान शंकर और महावीर हनुमान उस ओर से युद्ध कर रहे हैं।

यह देख राजा गन्धर्वसेन दौड़कर भगवान शिव के चरणों में गिर पड़े और हाथ जोड़कर बोले— "मुझे क्षमा करो! मैं तो तुम्हारा ही हूँ, फिर मुझ पर यह कोप क्यों?"

शिव ने राजा को उठाते हुए कहा— "प्रेम से बड़ा तत्व कोई दूसरा नहीं। रत्नसेन सौन्दर्य से सच्चा प्रेम करता है। हमने परीक्षा लेकर देख लिया, रत्नसेन को पद्मिनी से पूर्ण प्रेम है। तुमने उस प्रेम में जिसमें दुई नहीं है हिंसा की आग छोड़ी है, पर तुम्हें यह पता नहीं कि प्रेम किसी ज्वाला से नहीं जलता, प्रेम को जो जलाना चाहता है वह स्वयम् ही जल जाता है। इसलिये तुम्हें अपने किये का फल भोगना पड़ा।

गन्धर्वसेन— "जो हुआ उसे भूल जाओ मेरे भगवान! मुझे क्षमा कर दो। पद्मिनी आपकी है, जिसे चाहो उसका हाथ पकड़ा दो।"

राजा गन्धर्वसेन को पश्चात्ताप करते देख भोले बाबा को दया आ गई। उन्होंने राजा को उठाया और कहा— "उठो राजा और राजा रत्नसेन से राजकुमारी पद्मावती का सानन्द विवाह सम्पन्न करो!"

कहकर शिव अन्तर्धान हो गये और राजा रत्नसेन चित्तौड़ से आई हुई बरात सहित जनवासे में पहुँचा दिये गये।

बरात जब जनवासे में आकर रुक गई तो हीरामन अपनी चोंच चमकाते हुए राजकुमारी पद्मिनी के कक्ष में पहुँचे और मुस्कराते हुए बोले— बधाई है राजकुमारी! अब तो हमारा इनाम लाओ!

पद्मिनी— क्या इनाम दूँ तुम्हें हीरामन! जिसने ज्ञान से प्रेम और सौन्दर्य की सन्धि कराई है उसे देने के लिये संसार की हर वस्तु तुच्छ

है। फिर भी जो तुम चाहो वही माँग लो!

हीरामन— तो तुम मुझे यह वचन दो कि तुम्हारे यश का दीपक चित्तौड़ की ऊँची चोटी पर सदा जलता रहेगा।

पद्मिनी— सदा जलता रहेगा हीरामन! सदा जलता रहेगा। चाहे पद्मिनी बुझ जाये पर चित्तौड़ की रानी का नाम कभी नहीं बुझेगा।

हीरामन— तुम्हारा नाम लेकर नारी जाति अपने सतीत्व को चार चाँद लगाती रहे, यही मेरी शुभ कामना है सौन्दर्य ज्योति!

पद्मिनी— तुमने मेरे लिये कितने कष्ट सहे हैं हीरामन! मैं तुम्हारी कृपा के ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकती। तुमने जान हथेली पर रखकर मेरे लिये परम तेजस्वी वर की खोज ही नहीं की, अपितु उस प्राणधन की प्राप्ति भी कराई है। मैं किन शब्दों में तुम्हारी प्रशंसा करूँ!

हीरामन— तुम मेरी कृपा मान रही हो यही बहुत है, नहीं तो दुनिया में कौन किसकी कृपा को मानता है! अहसान करने वाले को दुनिया में ज़हर के अलावा और मिलता ही क्या है! भलाई करने वाले को बुराई ही मिलती है सुमुखि!

पद्मिनी— काँटा यदि चुभता है तो भी फूल उसे कण्ठ से लगाये ही रहता है। भलाई करने वाले शूली पर भी भलाई ही करते हैं। नेकी कर कुएँ में डाल, यही महात्मा का जीवन होता है हीरामन! अहसान चाहे अहसान करने वाला भूल जाये पर दुनिया अन्त में भलाई करने वाले की ही पूजा करती है। जीवन की हर चाँदनी में मैं तुम्हारा आभार माना करूँगी, ज्ञानी!

हीरामन— जो कुछ लेने के लिये किया जाता है वह उपकार नहीं होता पद्मिनी! दुनिया में ऐसे भी होते हैं जो बुराई करने वाले के

साथ भी भलाई ही करते हैं। मैं किसी के भी साथ बुराई नहीं कर सकता, यह मेरी विवशता है। पर छोड़ो इस समय इस चर्चा को, यह दार्शनिक चर्चा का समय नहीं है। यह तो जीवन की सबसे बड़ी खुशी का समय है। लो वे सामने से महाराज आ रहे हैं, पर आज मुझे डरने की आवश्यकता नहीं है।

प्रसन्न मुद्रा में महाराज गन्धर्वसेन ने प्रवेश करते हुए कहा—हम बहुत लज्जित हैं हीरामन! अपने हितैषी को शत्रु समझ बैठे थे।

हीरामन— सुबह का भूला यदि शाम को घर आ जाये तो भूला नहीं होता महाराज! मेरा श्रम सफल हो गया, पद्मिनी को उसके अनुकूल वर मिल गया। यही मेरी इच्छा थी।

गन्धर्वसेन— सद्भावनाओं से जो काम किया जाता है उसमें ईश्वर सहयोग देता है। उठो बेटी! तुम्हारे बाप ने तुम्हें पहचाना नहीं था। जाओ, शृङ्गार कक्ष में बाँदियाँ तुम्हारी बाट देख रही हैं। आज ही रात को ग्यारह बजे रत्नसेन से तुम्हारा पाणिग्रहण संस्कार होगा। मैं जाता हूँ, मुझे विवाह की बहुत सी तैयारियाँ करनी हैं।

राजा चले गये और दासियों ने पद्मिनी को घेर लिया। शृङ्गार कक्ष में वे पद्मिनी का तरह तरह से शृङ्गार करने लगीं। पहले उसे गुलाब जल में नहलाया, सुगन्धित तेल की नरम नरम हाथों से मालिश की। उसके बाद फिर उबटना मलकर स्नान कराया और फिर इत्रों के फव्वारों में पद्मिनी को स्नान करा दासियों ने चन्दनादि की उड़ती हुई श्वेताग्नु से उस सौन्दर्य राशि का बदन सुखाया।

हीरे मोतियों के आभूषण, सुनहरी सतरंगे परिधान और सावन भादों की घटनाओं को भी लज्जित करने वाले जूड़े के सौन्दर्य से पद्मिनी

सजकर ऐसी हो गई जैसे रात में सूरज निकल आया हो।

दासियों के शृङ्गार और सहेलियों की छेड़खानी से बात की बात में लग्न की घड़ी आ गई। बड़ी धूमधाम से जोगियों ने अपने साधु वस्त्र उतारे और सज सजकर अलबेले राजकुमारों के रूप में दिखाई देने लगे। यह बरात भी अनोखी थी।

दूल्हा रत्नसेन के साथ प्रत्येक राजकुमार दूल्हा बनकर घोड़ी पर सवार था, क्योंकि विवाह केवल रत्नसेन का नहीं बल्कि राजकुमार के साथ आने वाले सभी राजकुमारों का सिंहलद्वीप की सुन्दरियों से विवाह था। बाजा, नफीरी, ढोल, ताशे, गाना बजाना सभी कुछ जवानी में भरा चल रहा था।

राजकुमारी पद्मिनी की प्रत्येक रूपवती सहेली आज फूली नहीं समा रही थी। सिंहलद्वीप की सोलह सौ सुन्दरियाँ दुल्हिन बनी उमंगों में भरी बैठी थीं। पद्मिनी के साथ साथ पद्मिनी जाति की ये सभी राजकुमारियाँ अपने अपने दूल्हे के दर्शनार्थ अपनी आँखों को खंजन पक्षी के नयनों की तरह नचा रही थीं।

शुभ घड़ी आई और राजा रत्नसेन के साथ पद्मिनी का विवाह संस्कार सम्पन्न हो गया। साथ ही सोलह सौ सुन्दरियों का विवाह भी रत्नसेन के साथ आये हुए सोलह सौ राजकुमारों के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ।

राजा गन्धर्वसेन ने पद्मिनी को दहेज में गाड़ियों धन दिया। धरती क्या, देवलोक में भी शायद ही कोई ऐसा रत्न हो जो राजा ने पद्मिनी को न दिया हो। हीरे, मोती, सोना, चाँदी, रेशमी वस्त्र, पलंग, बर्तन, एक क्या सैकड़ों तरह की चीजें राजा रत्नसेन को पद्मिनी के साथ साथ मिलीं।

जब राजा गन्धर्वसेन ने सब कुछ दे दिया तो बेटी के सिर पर

हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा— और भी तेरी जो कुछ इच्छा हो माँग ले बेटी !

पद्मिनी ने श्रद्धा से पिता की ओर देखते हुए कहा— मैं चाहती हूँ कि हीरामन भी मेरे साथ रहे।

राजा गन्धर्वसेन कुछ कहें, इससे पहले ही हीरामन ने गर्व से गर्दन उठाते हुए कहा— मैं तो तुम्हारा ही हूँ। चित्तौड़ गौरव राजा रत्नसेन ने मुझे बहेलिये से एक लाख मुद्रा में क्रय कर लिया था।

सुनते ही गन्धर्वसेन ने कहा— राजकोष से सवा लाख मुद्रा रत्नसेन को और दे दी जायें और हीरामन सूआ भी हम अपनी बेटी को दहेज में देते हैं।

पद्मिनी के साथ बहुमूल्य धन दहेज में ले राजा रत्नसेन को चित्तौड़ की याद आई। सोलह सौ राजकुमार और सोलह सौ राजकुमारियों सहित रत्नसेन और पद्मिनी को राजा गन्धर्वसेन ने प्रेम और विदा की पीर सहते हुए विदा दी। भरी हुई आँखों से पिता ने पुत्री को और पुत्री ने पिता को देखा। माँ और रिश्ते की सभी बड़ी बूढ़ियों से पद्मिनी कौली भर भर कर मिली। सबकी आँखें विदा के दुःख से भरी हुई थीं। कितनी पीड़ामयी होती हैं विदा की वेला! पाषाण भी रो पड़ते हैं। बेटी को विदा करते समय हिमालय भी रो पड़ा था।

किन्तु बेटी तो परधन होती है। छाती पर पत्थर रखकर हर बेटी वाले को यह दुःख सहना ही पड़ता है। क्या दशा होती होगी उस समय लड़की की जब वह जन्म से विदा की घड़ी तक की होकर एकदम बिल्कुल पराये घर के लिए कदम उठाती है। क्या सहसा उसका हृदय काँप नहीं जाता होगा ?

विदा के आँसुओं में भीगे हुए सौन्दर्य के साथ रत्नसेन ने समुद्र की

छाती पर तैरने वाले जहाज में पैर रखा। स्वप्न की तरह सब देखते रहे और साथियों सहित रत्नसेन ने सिंहलद्वीप से चित्तौड़ की ओर मुँह मोड़ लिया। सिन्धु की लहरों को चीरता हुआ जलयान आगे बढ़ा।

आज समुद्र और जलयान में होड़ लगी हुई थी। सागर समझता था मेरे गर्भ में भी रत्नों का कोष है। पर अपने वक्ष पर तैरने वाले जलयान में भरे रत्नों को देख वह ईर्ष्या से फुक गया। क्रोध में आकर उसने लहरों को उछाला दिया। बड़े बड़े ज्वार समुद्र में उठने लगे, भयंकर आँधी चली, तूफान आने लगे। गम्भीर समुद्र ने अपनी सारी शक्ति लगाकर आज उच्छृङ्खल रूप धारण कर लिया, उसमें तूफानी आवेश था।

रत्नसेन का जहाज लहरों की टक्कर खा खाकर डगमगाने लगा। जिस तरह आँधी में पीपल का पत्ता हिलता है उसी तरह सागर के तूफान में रत्नसेन का जहाज हिल रहा था।

समुद्र की अति अनीति देख पद्मिनी काँपने लगी। उस कोमल कली ने रत्नसेन के सीने से अपना सर चिपकाते हुए कहा— कहीं जहाज डूब तो नहीं जायेगा?

रत्नसेन— तूफान मनुष्य की परीक्षा लेने के लिए आते हैं। जो लोग परीक्षा के नाम से काँप उठते हैं तूफान उनको ही डुबा सकते हैं। प्रेम में तो इतनी प्यास होती है पद्मे! कि मँझधार पीकर भी प्यास बनी ही रहती है।

पद्मिनी— समुद्र इतना विकराल रूप धारण कर रहा है कि साहस छूटा जाता है। कहीं आप मुझे दिलासा देने को तो यह सब नहीं कह रहे हैं?

रत्नसेन— नहीं पद्मिनी! यह आत्मा की आवाज़ है जो मनुष्य

को आपत्ति में धीरज देती है। हमने क्या ऐसा पाप किया है जो हमारी नाव भर कर डूबेगी।

पद्मिनी— पाप तो नहीं किया है पर प्रीति की राह में तूफान वैसे ही उठ खड़े होते हैं।

पद्मिनी यह कह ही रही थी कि तूफान के एक भयंकर आक्रमण से धक्का लगा और रत्नसेन जहाज में ही गिर पड़े। पद्मिनी भी उनके वक्ष से लगी ही लगी अचेत हो गई। मूर्च्छावस्था में सोते सोते रत्नसेन ने देखा कि आँधियों में तूफान की तरह नागमती उनकी ओर दौड़ी आ रही है, उसकी आँखों में प्रलय का पानी भरा है, रोम रोम में आँधियों की कम्पन है और हृदय में दावानल की तरह आग सुलग रही है।

वह आते ही रत्नसेन से चिपट गई। उसने चीत्कार करते हुए कहा, "मैं तुम्हारे वियोग में जल जलकर आग बन गई हूँ। मेरी आँखों के आँसू जम जमकर प्रलय के बादल बन गये हैं। मैं बरसूँगी और इतनी बरसूँगी कि धरती डूब जायेगी। मैं तूफान की तरह टूटकर तुम्हारी प्रसन्नता के इस जहाज को डूबा दूँगी। मेरी प्रतीक्षा अब असह्य हो चुकी है। मेरी सहिष्णुता का धीरज टूट चुका है। मेरी छटपटाहट बिजलियों की तरह टूटना चाहती है। मेरी प्रेम की पीर तुम्हारी खुशी भस्म कर देगी। एक को रुलाकर दूसरे को हँसाना मातम में उत्सव मनाना है। तुम मुझे छोड़ गये, इसीलिये कि पुरुष नवीनता का इच्छुक होता है। कहाँ गया तुम्हारा वह प्यार जो नागमती के सौन्दर्य पर पागल बन कर कहा करता था— 'नागमती! तुम संसार की सारी नारियों में ऐसे ही हो जैसे अँगूठी में हीरे का नग, तुम्हारे सामने चाँद तुच्छ है, तुम्हारी अलकों से सावन भादों के बादल शर्माते हैं। तुम्हारी आँख, तुम्हारी नाक, तुम्हारा तन, तुम्हारा मन सब कुछ नवीन

है।' कहाँ गई वह नवीनता? दूसरी नारी का स्वप्न आते ही सब कुछ स्वप्न हो गया।

"मेरे हृदय में ज्वार उठ रहा है। मैं विरहाग्नि से तप तपकर लपटों की तरह घूमती फिर रही हूँ। तुम्हें खोजने के लिए मेरे श्वास तूफान बन गये हैं। मैं इतनी रोई हूँ कि रोते रोते सागर बन गई। तुम्हारी याद में बीमार पड़कर मैं इतनी सूक्ष्म हो गई हूँ कि मुझे भी मैं दिखाई नहीं देती। अब तो आ जाओ राजा! अब तो आ जाओ! कहीं ऐसा न हो कि मैं तुम्हें ढूँढती ढूँढती ही खो जाऊँ। यदि अब भी तुम नहीं आये तो मैं इस देह की दीवार को अपने सतीत्व से जलाकर राख कर दूँगी, और फिर प्राण प्राण में मिल जायेंगे। नहीं आते, तो यह जहर में बुझी कटार मुझे अब तुम तक पहुँचने से नहीं रोक सकती।"

"ठहरो, नागमती! ठहरो, मैं आ रहा हूँ।" कहते हुए रत्नसेन चौंक कर जागे। आँखें खोल कर उन्होंने देखा कि जहाज में सब मूर्च्छित पड़े हैं, कितने ही घायल हैं और जहाज एक टापू के तट पर पड़ा है।

होश में आकर रत्नसेन ने उपचार से पद्मिनी को सचेत किया। धीरे धीरे सभी होश में आ गये। रत्नसेन ने जहाज की खिड़की में से बाहर को देखते हुए कहा— "चारों ओर दूर दूर तक जलराशि है, कहीं भी जमीन दिखाई नहीं देती। हम इस समय किसी बीहड़ टापू में पड़े जान पड़ते हैं। दिशाएँ खो गई हैं। समझ में नहीं आता कि किधर चलें और कैसे चलें। क्या करें?"

खिड़कियों में से सभी ने चारों ओर फैले हुए अथाह सागर को देखा और देखते ही रह गये। सब की मौन आँखों से लाचारी

टपक रही थी।

सब के चेहरों पर गहरी उदासी देख पद्मिनी मुस्कराई और अँधेरे में उजाला दिखाई देने लगा।

६

दोनों हाथों में दीपक लिये पद्मिनी नृत्य निमग्न होकर सागर को आरती दिखा रही थी। वह गा गाकर वरुण देवता से विनय कर रही थी— "हमें क्षमा कर दो! हमने अपराध किया है। आपकी पूजा किये बिना ही, आप पर फूल चढ़ाये बिना ही आपके तरल वक्ष को पथ बना लिया। हम से भूल हुई। छोटों को उत्पात और बड़ों को क्षमा! यही तो भृगु और विष्णु की कथा है। अब हम पर दया करो! मैं हर मास आपके नाम पर व्रत किया करूँगी। मेरे स्वामी का यदि कोई अपराध हो तो मैं उनके लिए भी आप से क्षमा माँगती हूँ।"

किन्तु कहावत प्रसिद्ध है कि माँगने से भीख नहीं मिलती और बिना माँगे मोती मिल जाते हैं। पद्मिनी की करुण पुकार सागर के कानों तक नहीं पहुँची। विनती को ठोकर खाते देख पद्मिनी को रोष आ गया। जिस प्रकार सागर को सुखाने के लिए राम ने अग्नि बाण ताना था उसी प्रकार अपने सतीत्व की ज्वाला धधकाते हुए पद्मिनी ने

शक्ति का रूप धारण किया।

फिर क्या था, आग की लपटें समुद्र को जलाने लगीं। सतीत्व की ज्वाला से समुद्र का तन झुलसने लगा। सच्चे प्रेम की आग को सिन्धु की लहरें बुझा तो न सकीं, उलटे जल जलकर जल की भी आग बनने लगी।

यह देख समुद्र घबरा उठा, वह दौड़कर सती के सामने आया और हाथ जोड़कर बोला—"क्षमा करो देवि! मैं नहीं जानता था कि दुखी की आँखों में मुझसे भी अधिक जल होता है। मुझे नहीं पता था कि सतीत्व की अग्नि बुझाये नहीं बुझती। अब मैं आपको किनारे पर पहुँचाये देता हूँ। मैंने आपको बन्दी बनाकर बड़ा अपराध किया है। तुम नारी हो, दया की मूर्ति हो, समुद्र तुम से क्षमा माँगता है।"

जैसे थपकी देते ही नींद दौड़ आती है ऐसे ही सागर को प्रार्थी रूप में देख पद्मिनी को दया आ गई। उसने सागर के चरण छूते हुए कहा—"पिता को पुत्री पर क्रोध नहीं आना चाहिए। लक्ष्मी की तरह मैं भी आपकी बेटी हूँ, क्योंकि आप ही सारी धरती के अपने जल जीवन से पोषक हैं।"

पद्मिनी के सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखते हुए समुद्र ने उसे कई अमूल्य रत्न दिये और फिर सानन्द रत्नसेन के जहाज को अपनी लहरों पर बैठा किनारे पर पहुँचा दिया।

राजा गन्धर्वसेन और समुद्र से अपार धन राशि प्राप्त कर रत्नसेन साथियों सहित चित्तौड़ वापिस आये। चित्तौड़ में राजा का भव्य स्वागत हुआ। लाखों नर-नारियाँ नई दुलहन के दर्शनार्थ उमड़ पड़े। उमंगों भरे रत्नसेन पद्मिनी के साथ राजमहल में आये। सभी ने रुपये और अशर्फियों की बिखेर से दुलहन की आरती उतारी।

सभी प्रसन्न थे। दुलहन के आगमन पर राजमहल का चौक ठसाठस भरा हुआ था। पर इस बड़े चौक में नागमती न थी। रत्नसेन सब को देख रहे थे, पर वास्तव में वे नागमती को देखना चाहते थे। उनकी आँखें सारी भीड़ में उसी को खोज रही थीं, उनका ध्यान सब से हटकर उसी की ओर लगा हुआ था।

लेकिन जब नागमती को कहीं भी न देखा, तो वे पता करके उस कक्ष में पहुँचे जिसमें नागमती निर्निमेष दृष्टि से द्वार को देखती हुई जमीन को भिगो रही थी। प्रतीक्षा भी कितनी मोहक होती है! यही तो वह वस्तु है जिसमें पीड़ा में भी स्वाद आता है। प्रतीक्षा के क्षण काटे नहीं कटते, पर आशा के सहारे कट जाते हैं।

जैसे ही नागमती ने अपने बिछुड़े हुए राजा रत्नसेन के दर्शन किये, वैसे ही वर्षों की स्मृतियाँ संचित होकर विस्मृति में बदल गईं। नागमती के मुँह से एक भी शब्द न निकला और वह दौड़ कर पैरों पर गिर गई।

रत्नसेन ने नागमती को उठाकर वक्ष से लगाते हुए कहा— मैं जानता हूँ कि तुम्हें इतनी प्रतीक्षा करनी पड़ी है जितनी कि एक नारी से आशा नहीं की जा सकती। लेकिन मैं यह आशा कभी नहीं करता था कि तुम मुझसे ऐसी रूठ जाओगी जो महल के द्वार पर मुझे लेने भी नहीं आईं।

नागमती ने उपालम्भ देते हुए कहा— नागमती को भी यह आशा नहीं थी कि उसके हृदय-सम्राट किसी और हृदय पर राज्य करने लगेंगे। पद्मिनी के प्रेम में ऐसे भूले कि यह भी याद नहीं रहा कि चित्तौड़ में कोई आपकी याद का दीपक लिये बैठी है।

रत्नसेन— तुम्हारी याद ही तो मुझे यहाँ तक खींच लाई। लेकिन अब शिकायतें सुनने के लिए अधिक समय नहीं है। इस समय तो तुम्हें

चलकर छोटी रानी पद्मिनी का स्वागत करना चाहिये। उसे अपनी छोटी बहिन समझकर हृदय से लगा लो नागमती! इसी में हम सब का कल्याण है।

नागमती— जिस तरह एक म्यान में दो तलवारें नहीं समातीं, उसी प्रकार एक पुरुष के अंक में दो स्त्रियों का समाना मुश्किल है।

रत्नसेन— दुनिया में कठिन कुछ भी नहीं है, मुश्किल है तो केवल इस बात की कि दिलों में गुञ्जाइश की कमी है। यदि हृदय में स्थान रहे तो फूल के साथ काँटों का भी निर्वाह हो जाता है, फिर फूल के साथ फूल का तो निभाना ही क्या! क्या मेरे कंठ में गुलाब और गेंदे के फूलों की माला सुन्दर नहीं लग सकती? आओ नागमती! पद्मिनी को पाकर तुम बहुत ही प्रसन्न रहोगी। मुझे सन्देह है कि कहीं तुम पद्मिनी को मुझसे अधिक प्यार न करने लगो। इस समय जो तुम्हारे सामने याचक बन कर पद्मिनी को अपनाने की याचना कर रहा है, कल कहीं दुई मिट जाने पर तुम उसी से यह न कहने लगो कि पद्मिनी के बिना मैं ऐसे ही हूँ जैसे प्राण के बिना देह।

नागमती ने देखा कि रत्नसेन के कहने में प्रेम और करुणा है, वे मानो नागमती से कातर होकर पद्मिनी को अपनाने की प्रार्थना कर रहे हैं। नागमती मन ही मन में कहने लगी— "जिनको मैं जीवन में कभी भी दुखी नहीं देखना चाहती क्या उनकी इस इच्छा की पूर्ति करने में मुझे हिचकिचाहट होनी चाहिये? नहीं, कभी नहीं। जिनको मैंने स्वप्न में भी कभी कष्ट नहीं दिया, जिनको सुलाने के लिए मैं रात रात भर जागी, जिनको जगाने के लिए मैं गाती रही हूँ, क्या उनको अब इसलिए कष्ट दूँ कि वे एक और सुन्दरी को महल में ले आये? ईर्ष्या के स्थान पर यदि मैं प्रेम को अपना लूँ तो सब सुखी हो सकते

हैं। घृणा और द्वेष से सखा भी शत्रु बन जाते हैं और प्रेम से शत्रु भी सगे हो सकते हैं।

सोचते सोचते नागमती ने रत्नसेन के गले में बाँहें डालते हुए कहा— उदास न हो मेरे नरेश! चलो, मैं पद्मिनी को प्रेम से साथ लेने चलती हूँ। मैं उसे इतना चाहूँगी जितना आप भी उसे नहीं चाहते। हम दोनों प्रेम से रहेंगी और इस महल में प्रेम के दीपों से हर रात दिवाली मनाया करेंगी।

राजा रत्नसेन के साथ नागमती दौड़ी हुई गई और जाते ही अपने गले से हीरों का सतलड़ा उतार नई दुलहन के गले में डालते हुए उसे गले से लगा लिया।

और फिर दो दुलहनों के साथ रत्नसेन ने रंगमहल में प्रवेश किया। नई उमंगें, नई दुलहन, जीवन में नई जवानी लिये हुए आती हैं। चावों में भरे हुए राजा रत्नसेन पद्मिनी और नागमती के साथ रसपान करने लगे। रंगरलियों में राजा रात दिन भौंरे बन कर नाचने लगे।

रूप का रस भी क्या ही रस होता है! कितनी मधुर होती है रूप की मदिरा! सौन्दर्य का स्वाद जिसे लग गया वह छुटाये नहीं छूटता। यह वह शराब है जो आँखों से पी जाती है। यह वह नशा है जो आँखों को चढ़ता है।

प्रणय की प्यास इतनी तीव्र होती है कि पीते पीते अधर थक जाते हैं, पर प्यास नहीं बुझती। प्यार की एक [illegible] [illegible]तनी तेज होती है कि बुढ़ापे को भी जवानी आ जाती है और [illegible] सी पागल हो उठती है। पद्मिनी और नागमती ने रत्नसेन को ऐसी पिलाई और इतनी पिलाई कि प्याले भरे के भरे ही रहे और प्यास बनी की बनी ही रही। जिसे मन चाहता है वह कुछ ऐसी भरी हुई होती है कि

रीती होते होते भी भरी ही रहती है।

पर एक म्यान में दो तलवारें रखना सरल नहीं होता। म्यान और तलवार दोनों ही को खतरा रहता है। राजा रत्नसेन भी इस खतरे से बच न सके। एक रात नागमती को राजा की प्रतीक्षा करते करते सारी रात बीत गई, और राजा पद्मिनी के अलक जाल में बन्दी बन कर सोये रह गये।

सवेरे जब राजा की आंखें खुलीं तो वे शंकित से उठे और तुरन्त ही नागमती के कक्ष में पहुँचे। उन्होंने देखा कि नागमती आसनपाटी लिये पड़ी है। राजा के बार बार बोलने पर भी वह नहीं बोली। हार कर राजा ने उसकी मुँदी हुई आंखों में आंखें डालते हुए कहा—"अपराध हुआ नागमती! मेरी आंख लग गई थी, इसलिये मैं आ न सका।"

नारी का हृदय बहुत छोटा होता है। उसके हृदय में जब कोई बात जम जाती है तो कठिनता से निकलती है। कहा नहीं जा सकता कि नारी भोली होती है या नादान। राजा के बार बार कहने पर नागमती ने रोते हुए क्रोध से कहा— "मैं जितनी ही आपकी इच्छा पूर्ति करती हूँ, उतनी ही आप मेरी उपेक्षा करते जा रहे हैं। पद्मिनी ने आप पर ऐसा जादू किया कि न राज काज का ध्यान है और न नागमती का। मुझे तो आपने बनवासिनी बना दिया है। सारी रात प्रतीक्षा में बिता देती हूं पर आपको अपनी नई दुलहन से अवकाश ही नहीं मिलता। मैं जितना सहन करती हूं, उतना ही आप मुझे लाचार करते जा रहे हैं। मैंने आपकी हर बात मानी। आपने दूसरा विवाह किया, मैंने आपकी खुशी के लिये वह भी सहन किया। आपने मुझे और पद्मिनी को एक ही महल में रखा, मैंने पद्मिनी को सदा अपने मन की तरह रखा। पर मैं देख रही हूं कि वह चालाक आपको मुझसे

चुपके चुपके छीनना चाहती है। मुझे नहीं, वह चित्तौड़ के लिये भी साड़सती बनकर आई है।"

सुनते सुनते रत्नसेन के मुख पर भी रोष की रश्मि दौड़ आई। उन्होंने आंखें कुछ बदलते हुए कहा— "यह क्या कह रही हो नागमती! पद्मिनी के बारे में तुम्हारा ऐसा सोचना पाप है। वह यह कभी नहीं चाहती कि मैं तुमसे पृथक् हो जाऊं। चित्तौड़ की उन्नति के लिये भी वह कटिबद्ध रहती है। वह एक सहिष्णु और वीर नारी है। तुम व्यर्थ ही पद्मिनी के प्रति दुर्भावना न बनाओ।"

नागमती— पद्मिनी के प्रति मेरी कोई दुर्भावना नहीं है, मुझे शिकायत आपसे है। माना कि यह स्वाभाविक है कि नई दुलहन के प्रति पुरुष अधिक उत्सुक रहता है। इसलिये यह भी मानना पड़ेगा कि नई दुलहन के प्रति पुरानी दुलहन की ईर्ष्या भी स्वाभाविक है। इस पर भी मैं शान्त हूँ और पद्मिनी अपने कनक घट में विष रस लिये बैठी है। यह निस्सन्देह है कि जाने या अनजाने पद्मिनी चित्तौड़ में एक विषैली नागिन है।

रत्नसेन— बस करो नागमती! तुम सीमा से बाहर हो रही हो। कहीं तुम्हारी ईर्ष्या मुझे तुम्हारे प्रति उदासीन न बनादे।

नागमती— आखिर मन की बात जबान पर आ ही गई। उदासीन तो आप हो चुके हैं, अब केवल इतना शेष रहा है कि कांटा फूल से अलग कैसे किया जाये। यदि बहुत अधिक चुभ रही हूं तो तुम मुझे जो दण्ड चाहो दे दे। पर यह कभी नहीं हो सकता कि मैं अपनी वाणी पर ताले लगा लूं।

रत्नसेन— यदि नारी में ऐसी ही कमियां न होतीं तो महर्षियों को आप्त वाक्य न लिखने पड़ते। चतुर से चतुर नारी भी कभी कभी ऐसी चूक कर बैठती है कि जैसी चूक लक्ष्मण की खींची हुई रेखा को

पार कर रावण को भिक्षा दे सीता ने की थी। तुम्हें अपने मन का मैल मिटा देना चाहिये नागमती! विश्वास रखो, भविष्य में तुम्हें मुझ से कोई शिकायत न होगी।

नागमती— पुरुष चतुर होते हैं और स्त्री भोली, बिचारी पुरुषों की बातों में आकर बहक जाती है। स्त्री सहिष्णुता की पाषाणी होती है। अधिक उद्वेग होने पर यदि उसे क्रोध भी आता है तो भी वह अपना ही अहित कर बैठती है और जब उससे नहीं सहा जाता तो वह बावली आग की तरह अपने साथ साथ अपनी सारी दुनिया को जला डालती है।

रत्नसेन ने नागमती की अलकों में प्यार से उँगलियाँ चलाते हुए कहा— "तू तो पगली हो गई है नागमती! मुझ पर विश्वास रख, तुम दोनों मेरी दो आँख हो और किसी को भी अगर तकलीफ हुई तो पीड़ा मुझे ही होगी। अच्छा, अब मैं चलता हूँ। आज राजदरबार है, जिसमें कलाकार अपने अपने चमत्कार दिखायेंगे। मुझे अवश्य शामिल होना है। बोलो जाऊँ, नागमती!"

नागमती— मेरे पास से जाने के लिये तो आपको कोई न कोई बहाना मिल ही जाता है।

रत्नसेन— यह बात नहीं है नागमती! दरबार में आज मैंने महाराज जयपुर को भी निमन्त्रित किया है, इसलिये मेरा पहुँचना आवश्यक है।

नागमती— तो जाइये, मैं तो आपकी श्रीवृद्धि देखकर ही प्रसन्न हो लेती हूँ।

राजा रत्नसेन दरबार में चले गये और नागमती खिन्न सी खड़ी रह गई। वह सोचने लगी कि किसी न किसी तरह पैर में लगे इस काँटे को निकालना ही चाहिये। जब से पद्मिनी महल में आई है तब से महाराज

मुझे भूल ही गये हैं। तो फिर क्या करूँ? मुझे कूटनीति से काम लेना चाहिये। इस सम्बन्ध में यदि मैं राघवचेतन से सहायता लूँ तो कैसी है? वह चतुर ब्राह्मण है, उसे यक्षिणी सिद्ध है। वह अवश्य ही कोई न कोई उपाय खोज निकालेगा।

सोचते सोचते नागमती ने दासी को बुलाया और कहा— राघवचेतन से कहना कि रानी नागमती ने तुम्हें इसी समय स्मरण किया है।

आज्ञा मिलते ही दासी चली गई और नागमती चतुर होते हुए भी केकयी की तरह विनाश की कल्पनाएँ करने लगी। नारी भी कैसी विचित्र पहेली है! वह जब विनाश की कल्पना करने लगती है तो विनाश करके ही दम लेती है। कितना छोटा है नारी का हृदय, और कितना गहरा है उसका मन!

नागमती संकल्प विकल्प कर रही थी कि मुस्कराती हुई पद्मिनी ने प्रवेश किया और नागमती के गले में अपनी दोनों बाहें डालती हुई बोली— अनमनी क्यों हो रही हो बहिन! चलो, वातायन से राजदरबार के दृश्य देखेंगे। सुना है वहाँ बड़े बड़े कलाकार आये हैं।

नागमती ने व्यंग्य में उत्तर दिया— दृश्य देखते देखते मैं तो पुरानी हो गई हूँ। तुम नई आई हो, जाओ तुम ही नये नये चमत्कार देखो।

पद्मिनी— पुराने चावलों में जितना रस होता है, नये चावलों में वह स्वाद कहाँ बड़ी बहिन! तुम नहीं जाओगी तो मैं भी नहीं जाऊँगी।

नागमती— तुम क्यों नहीं जाओगी, तुम्हें तो वहाँ तुम्हारे राजा की आँखें टटोल रही होंगी। जाते जाते कह गये होंगे कि तुम अवश्य आना।

पद्मिनी— जाते समय तो वे तुम्हारे ही पास से गये थे, मेरे पास

से आये हुए तो बहुत देर हो गई थी। पर यह तुम कैसी बातें कर रही हो? मैं और तुम कोई दो तो नहीं। तन दो हैं, पर मन तो एक ही है। मैं एक बार को महाराज के दर्शन बिना रह सकती हूँ, पर अपनी बड़ी वहिन को देखे बिना मैं ऐसे ही रहती हूँ जैसे जल के बिना मछली।

नागमती ने मन ही मन में सोचा कि राघवचेतन आने वाले होंगे और पद्मिनी मुझे घेर कर बैठ गई है। अतः उसने मुस्कराते हुए कहा— मैं तो हँस रही थी पद्मिनी! जाओ, तुम दरबार देखो और मैं ज़रा सोना चाहती हूँ।

पद्मिनी ने सामने के शीशे पर स्मित रेखा खींचते हुए कहा— जान पड़ता है रात भर जागती हो, तभी दिन में नींद आ रही है। मैं महाराज से कह दूँगी कि महारानी की नींद का तनिक ध्यान रखा करें। रात रात भर रसपान की भौंरे जैसी आदत छोड़ दें।

कहते कहते पद्मिनी ने देखा कि नागमती ऊँघ रही है। आँखों में नींद देख पद्मिनी यह कहती हुई कक्ष से दरबार के लिये चल पड़ी— "अच्छा, अब तुम सोओ बड़ी बहिन!"

पद्मिनी चली गई और थोड़ी देर बाद पण्डित राघवचेतन ने दासी के साथ कक्ष में प्रवेश किया। नागमती का संकेत पाकर दासी चली गई और नागमती ने राघवचेतन की तरफ देखते हुए कहा— "कहाँ रहते हो पण्डित जी! कभी कभी हमारे ग्रह देखने भी चले आया करो।"

नागमती के यह कहते ही चतुर पण्डित सब कुछ समझ गया। उसने ज्योतिष, यक्षिणी और मनोविज्ञान से रानी को तोलते हुए कहा— क्या आयें महारानी! जब से पद्मिनी महल में आई है, तब से हमारा तो चित्तौड़ में रहने को भी जी नहीं करता। न अब चित्तौड़ में पण्डितों की पूछ है, न धर्म कर्म की। राजा हर समय कली के पीछे

अलि बने रहते हैं। नये नये चपड़कनाती राजा के मुँह लग गये हैं, हमारी तो अब वहाँ बात ही नहीं चलती। हीरे मोतियों के स्थान पर पत्थरों की पूजा होती है।

नागमती— तुम तो गुणी ब्राह्मण हो। सुना है आज दरबार है, तुम कोई कमाल दिखाने नहीं गये?

राघवचेतन— अन्धे के आगे रोकर अपने नैन कौन खोये बड़ी रानी!

नागमती— लेकिन जो आँखें होते हुए भी न देखे उसे दिखाना तो अवश्य चाहिये। तुम तो सब कुछ जानते हो। मैं पीड़ा से जली जा रही हूँ। कोई ऐसा उपाय करो जिससे छाती का काँटा निकले।

राघवचेतन ने सोचते हुए कहा— मुझसे चित्तौड़ का और तुम्हारा दुःख देखा नहीं जाता। मैं या तो राजा के हृदय को बदलूँगा अन्यथा अपनी और तुम्हारी ज्वाला से चित्तौड़ में आग लगा दूँगा। अब मुझे दरबार में जाना ही पड़ेगा। राजोत्सव में जाकर ही मैं अपनी यक्षिणी सिद्धि से आज सारे चमत्कार फीके कर रंग में वह भंग डालूँगा कि दिवाली होली में बदल जायेगी।

कहते हुए राघवचेतन चल दिये और नागमती ने मन ही मन में विनाश के लिये देवताओं के नाम लिये। घर के दीपक ने अपनी लौ ऐसी लपलपाई कि लपटें राजदरबार में जा पहुँचीं।

राजोत्सव में पंडित राघवचेतन के पहुँचते ही उनके सम्मान में सारी राजसभा उठकर खड़ी हो गई। पर सम्मान में खड़े हुए पारिषद राघवचेतन के बैठने की बाट देख ही रहे थे कि प्रकाण्ड पंडित ने गर्जते हुए कहा— आज तो दूज है, राजोत्सव तो कल होना चाहिये था,

आज कैसे हो रहा है ?

राघवचेतन की बात सुनते ही राजसभा में बैठे सभी पंडित उत्कण्ठित हो उठे। उन्होंने एक साथ कहा— दूज आज नहीं, कल है।

राघवचेतन ने अट्टहास करते हुए कहा— आप पढ़े लिखे मूर्ख जान पड़ते हैं। थोड़ी देर बाद शाम होगी, तब देखलें कि द्वितीया का चन्द्रमा आकाश में निकला है या नहीं। यदि आज आकाश में दूज का चांद दिखाई दे, तब तो राघवचेतन सच्चा और यदि चन्द्रमा न दिखाई दे तो आप सब सच्चे।

पंडित राघवचेतन की विद्वत्ता के रत्नसेन कायल थे। विद्वान पण्डित की गर्वोक्ति सुन राजा रत्नसेन ने सिंहासन से उठते हुए कहा— राजपंडित की आज तक कोई भी बात अशुद्ध नहीं निकली। आज शाम को यदि दूज का चाँद दिखाई दे गया तो आप सब पंडितों को शर्म से डूब मरना चाहिये। अतः शाम तक के लिए राजोत्सव स्थगित किया जाता है, तदनन्तर ही हम कोई घोषणा करेंगे।

राजदरबार स्थगित कर दिया गया। सारे चित्तौड़ राज्य में विचित्र प्रकार की हवा चल पड़ी।

चन्द्रमा शाम को निकलेगा या नहीं निकलेगा ? प्रजाजन सभी आकाश की ओर आँखें गड़ाकर देखने लगे। सभी की दृष्टि अम्बर की ओर निर्निमेष हो गई।

समय जाते देर नहीं लगती, पर प्रतीक्षा का पल ब्रह्मा का वर्ष हो जाता है। प्रजाजन और पंडितों की आँखें थक गईं। राजा रत्नसेन और पद्मिनी आकाश से आँखें चिपकाये बैठे थे और नागमती उत्सुकता से चाँद निकलने की प्रतीक्षा कर रही थी।

एक ही साथ सब की आँखों ने देखा कि आकाश में द्वितीया का चन्द्रमा कटार की तरह चमक रहा है। चन्द्रमा को देखते ही पंडितों की छाती पर कटार चल गई। तड़प कर सभी ने एक साथ कहा,— "अवश्य ही इसमें राघवचेतन का कोई जादू है। उस पंडित को यक्षिणी सिद्ध है। जान पड़ता है उसी के प्रभाव से उसने आज प्रतिपदा को दूज का चन्द्रमा दिखा दिया है। राजा का राघवचेतन पर अन्धविश्वास है, इसी से हमें बार बार अपमानित होना पड़ता है। चाहे राघोचेतन को सौ सिद्धियाँ हों पर प्रकृति के नियम नहीं बदला करते। कल अवश्य ही आकाश में दूज का चन्द्रमा दिखाई देगा। ईश्वर अन्यायी नहीं है, वह निश्चित ही हमारे अपमानों का बदला चुकायेगा, दूध का दूध और पानी का पानी होकर रहेगा।"

पंडितगण चोट खाये हुए साँपों की तरह दाँव लगाने की घात में लग गये और उधर राघवचेतन जीत की खुशी में अट्टहास करते हुए अपनी मस्तानी दुनिया में आ पहुँचे। जवानी में बल खाती हुई हुस्न की शराब जैसी हुस्नबानो के कमरे पर पहुँचे। हुस्नबानो चित्तौड़ में एक बेजोड़ नर्तकी थी। राघवचेतन बानो की एक एक अदा पर जान देते थे। हजारों रुपये राघवचेतन बानो को देते रहते थे। न बानो राघवचेतन के देखे बिना चैन पाती थी और न राघवचेतन को बानो के बिना ज़िन्दगी का रस आता था।

अपने दीवाने को वसन्त की बहार जैसी रौनक में आते देख हुस्नबानो ने जादू जैसी आवाज़ में कहा— बहुत खुश दीख रहे हो! जान पड़ता है कोई मोटी मछली हाथ लग गई है।

राघवचेतन— तुम जब अलक जाल बिछाये बैठी रहती हो तो हम जैसे पंडित भी मछली बन जाते हैं। तुम्हारे बालों के ज़ाल में राघवचेतन

ऐसा उलझा है कि सुलझाये नहीं सुलझ सकता।

हुस्नबानो— वह औरत ही क्या जिसकी ज़ुलफों से पुरुष निकल भागे। अब तुम चले गये तो मेरी जान न चली जायेगी। अच्छा, यह तो बताओ कि आज ऐसी क्या खुशी है जो होठों से बहारें बिखरी पड़ रही हैं।

राघवचेतन— बात ऐसी ही है बानो! आज उन पंडितों ने फिर मुंह की खाई जो हर समय मुझे हराने की सोचते रहते थे। लाओ इस खुशी में अपने हाथ से रस के प्याले पिलाओ, अपनी आँखों के साथ साथ हाथों से भी शराब पिलाओ।

बानो के गले में बाँहें डाल पंडित मखमली पलङ्ग पर बैठ गये। सामने चाँदी की चौकी पर सुराही में मदिरा मचल रही थी। बानो ने अपनी गोरी गोरी उँगलियों से प्याला उठाया, और फिर दोनों के प्याले पर प्याले चलने लगे।

सारी रात और सारा दिन प्रणय की रसीली बातों में न जाने कहाँ चला गया। पंडित जी की सारी विद्वत्ता रूप के आलिंगनों में मूर्च्छित हो गई। कहा नहीं जा सकता कि स्वप्न में सत्य खो गया या स्वप्न ने सत्य से हार मान ली। प्रणय से अधिक रस शायद संसार में दूसरा नहीं। कौन है वह ज़िन्दा मनुष्य जो प्रणय के बिना जीवित रहा है! ज़िन्दगी प्रणय की घड़ी का दूसरा नाम है।

पर कभी कभी अमृत भी विष हो जाता है। सहसा राजा का पैगाम आया कि राघवचेतन इसी समय दरबार में उपस्थित हों।

बानो की तरफ शराबी आँखों से देखते हुए पंडित ने कहा— हम जा सकते हैं बानो!

बानों ने गले में गोरी गोरी बाँहें डालते हुए कहा— आते पीछे हैं और जाने की पहले पड़ जाती है। आपको तो राज-सेवा

से फ़ुरसत ही नहीं मिलती। मैं तो आपके लिये इस रेगिस्तान में रहते रहते तंग आ गई। कितनी बार आपसे कहा दिल्ली चलिये, उस जन्नत में जो मजा है वह यहाँ कहाँ है? आप जैसे गुणी पंडित को दिल्ली दरबार में जो इज़्ज़त मिल सकती है वह रेतीले राज्य में कहाँ धरी है! दिल्ली सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी आपको मालामाल कर देगा। आप गुलाम से राजा बन जायेंगे।

राघवचेतन— ऐसा न कहो बानो! हम गुणी और वीर ब्राह्मण हैं। हम से सारे पाप हो सकते हैं, पर अपने देश के प्रति, अपने धर्म के प्रति गद्दारी नहीं हो सकती। हम चित्तौड़ की मिट्टी में मिलना पसन्द करेंगे, पर दिल्ली की गुलामी कभी स्वीकार नहीं करेंगे। राजा रत्नसेन मानवी दुर्बलताओं में फँस कर उदासीन से हो रहे हैं, पर वास्तव में वे एक वीर राजा हैं। चित्तौड़ को उन पर गर्व है। मैं राजा को अँधेरे से उजाले में लाने का यत्न करूँगा। अब जाने दो, महाराज याद कर रहे हैं।

बानो— हम इन्तज़ार में बहुत देर तक न तड़पते रहें।

राघवचेतन— नहीं बानो! मेरे कदम चाहे कहीं भी रहें पर मन तुम्हारे ही पास रहता है।

बानो ने नज़रों से पुष्प-बाण छोड़े और राघवचेतन लौटने की चाह लिये जल्दी जल्दी चल दिये। प्रणय उन्हें वापिस खींच रहा था और कर्त्तव्य पकड़े लिये जा रहा था।

७

आकाश में धनुषाकार अर्ध चन्द्र को देखते हुए राजा रत्नसेन ने भृकुटी को कमान करते हुए कहा— क्यों पंडित राघवचेतन ! कल तुमने अपने पाप से सारी ब्राह्मण जाति को कलंकित क्यों किया ? तुमने सत्य को भूठ बनाने का राजकीय अपराध किया है। तुमने चित्तौड़ के सीधे सच्चे गुणी ब्राह्मणों को अकारण ही राज-सभा में अपमानित कराया है। तुम्हारी विद्वत्ता के कारण हम तुम्हारे बहुत से दोष भूलते चले आ रहे हैं। चित्तौड़ में तुम्हारे प्रति कितने ही लांछन हैं। सुना है तुम्हारा बानो नाम की किसी यवन नर्तकी से अपवित्र सम्बन्ध है।"

राघवचेतन जितना विद्वान् था, उतना ही क्रोधी भी। अब उससे सहा न गया, वह राजा को बीच ही में रोकता हुआ बोला— "बस महाराज ! आप विद्वत्ता का बहुत आदर कर चुके। अपने शेष कोष को अपनी वाणी में ही रखिये। मुझे नहीं चाहिये आपकी सम्पदा। कला के प्रति प्रेम होना कोई पाप नहीं है। बानो को ईश्वर ने सौन्दर्य दिया है और सौन्दर्य-प्रेमी आप भी हैं। यदि मैं उस चतुर गायिका और

नर्तकी से प्यार करता हूँ तो इसमें पाप क्या है?"

रत्नसेन— वह एक विधर्मी वेश्या है, राजकीय पंडित का उससे प्रणय शोभनीय नहीं।

राघवचेतन— मैं राज्य के द्वारा दिये हुए आसन को छोड़ सकता हूँ, पर बानो से प्यार नहीं छोड़ सकता।

राघवचेतन ने जो तेवर बदल कर यह बात कही तो राजा रत्नसेन को भी क्रोध आ गया। उन्होंने निकलते हुए सूर्य की तरह लाल होकर कहा— तो तुम्हें आज्ञा दी जाती है कि राज्य से अपना काला मुँह कर लो। चित्तौड़ राज्य की सीमा से बाहर चले जाओ!

राघवचेतन की क्रोधाग्नि में भी घी पड़ गया। वह चोट खाये हुए साँप की तरह फण फैलाता हुआ दुर्ग से बाहर निकल आया। दुर्ग में जितने भी मंत्री पंडित आदि थे उन सब के मुँह पर सन्नाटा घिर आया, पर क्रोध में उचित-अनुचित का ध्यान किसी को नहीं रहता। रत्नसेन दाँत पीसते रहे और राघवचेतन क्रोध की पीड़ा से पिसते हुए बानो के पास पहुँचे।

बानो ने जो राघवचेतन के मुँह का रंग बदला हुआ देखा तो परेशानी का बहाना करती हुई बोली— क्या बात हुई मेरे हुजूर!

राघवचेतन— कुछ नहीं बानो! राजा ने देशनिकाला दे दिया है।

बानो— क्या? राजा रत्नसेन ने आपकी अब तक की सेवाओं का यही फल दिया! मैं तो पहले ही जानती थी। आप जैसा गुणी पंडित दिल्ली दरबार में होता तो शहनशाह अलाउद्दीन खिलजी आपको आँखों पर उठा लेता। अब जितनी जल्दी हो सके यहाँ से दिल्ली चलिए। वहाँ देखेंगे कि बादशाह मेरे काबिल हुजूर की कितनी कद्र करते हैं। उनकी मौज आ गई तो तुम्हें राजा रत्नसेन के बराबर बना देंगे।

राघवचेतन— बानो! अपराध राजा रत्नसेन का है। यह कभी नहीं हो सकता कि इसके बदले मैं अपने चित्तौड़ का अपमान कराऊँ। दिल्ली दरबार की दासता मैं कभी स्वीकार नहीं करूँगा।

बानो— आप जितने गुणी हैं उतने भोले भी। जिन महाराज पर तुम्हें गर्व था उन्होंने तो तुम्हें धक्के देकर निकाल दिया। भरी सभा में अपमानित होकर भी तुम्हारे हृदय में प्रतिशोध की ज्वाला नहीं धधकी। आश्चर्य है पंडित!

और फिर गले में बाँह डालते हुए कहा— मैं तुम पर जान दे सकती हूँ, मैं मर सकती हूँ पर तुम्हारा अपमान नहीं देख सकती। यहाँ रहने से मेरे तुम्हारे प्यार पर भी जलती नज़रें रहती हैं। मेरा कहा मान लो, किस्मत बदल जायेगी, मालामाल हो जाओगे, खुशी का ठिकाना न रहेगा।

कुछ सोचते हुए राघवचेतन बोले— सच कहती हो बानो! आज ही दरबार में राजा रत्नसेन ने कहा था, 'तुम बानो से प्यार करते हो।' हाँ, मैं बानो से प्यार करता हूँ। क्या राजा रत्नसेन पद्मिनी से प्यार नहीं करते? क्या इश्क करने का उन्हें ही हक़ है?

बानो— बड़े आये राजा कहने वाले, पहले अपना मुँह तो शीशे में देखें। नागमती और पद्मिनी दो दो रख रक्खी हैं।

राघवचेतन—दूसरे की आलोचना करते समय मनुष्य आत्म-समीक्षा कर ले तो किसी को कोई दोषी दिखाई न दे। वह राजा है तो मैं भी ब्राह्मण हूँ। राजा रत्नसेन से अपने अपमान का बदला न लिया तो मेरा नाम पंडित राघवचेतन नहीं।

बानो— तुमसे अधिक मैं जली जा रही हूँ। मेरे हुज़ूर की बेइज़्ज़ती हो और मैं चोट खाई हुई नागिन की तरह न फुँकारूँ, यह कैसे हो सकता है! अब चाहे आप मना भी करें तो भी मैं आपको दिल्ली ले

ही चलूँगी और एक दिन राजा रत्नसेन को दिखा दूँगी कि पंडित जी के अपमान का क्या नतीजा होता है।

यौवन में मदमाती हुई कोई सुन्दरी जब किसी की आँखों में आँखें डाल देती है तो फिर बड़े बड़े विश्वामित्र तक पिघल जाते हैं। नारी की अँगड़ाइयों में चुम्बक होता है। राघवचेतन बानो के इशारे से चिपक गये, खोये खोये से देखते हुए कहने लगे, "चलो बानो, दिल्ली चलो!"

और उसी दिन रात को राघवचेतन बानो के साथ दिल्ली को चल पड़े। वे चले जा रहे थे और चित्तौड़ पुकार पुकार कर कह रहा था—"राजा जागो! गुणी पंडित जा रहे हैं। इन्हें न जाने दो! रावण ने विभीषण को निकालकर सब से बड़ी भूल की थी। दूध देने वाली गाय की लात भी सही जाती है। पर राघवचेतन चित्तौड़ का अमूल्य रत्न है। उसको खोकर चित्तौड़ में अँधेरा न करो।" किन्तु रात की गहरी नींद में किस के कान खुलते हैं! नवयौवन की रसीली मदिरा में डूबे हुए को किनारे की चाह ही कब होती है? उधर राजा रत्नसेन सौंदर्य रस की घूँटें भर रहे थे, इधर राघवचेतन बानो के हुस्न पंखों पर उड़ते हुए दिल्ली आ पहुँचे।

बानो के साथ राघवचेतन उन सजे हुए कमरों में आये जिनमें न जाने कितना धन जड़ा पड़ा था। उन सजे हुए कक्षों में अय्याशी की हर कलाकृति मौजूद थी। वे चित्र जिनको देखते ही आदमी का मन मचलने लगता है, वे मखमली फर्श जिन पर नाज़नियों के पैर छिलने लगते हैं, वे गुलदस्ते जिन पर एक से एक चित्रकारी चमक रही है, वह खुशबू जिससे विश्वामित्रों की तपस्या टूटने लगती है, और वे प्याले जिनमें शराब न होते हुए भी शराब का नशा रहता है।

आज कितने ही दिन बाद बानो अपने नये आशिक के साथ दिल्ली अपने घर आई थी। इसलिए उसके स्वागत में उसकी माँ और सेविकायें प्रदर्शन में अपना सब कुछ लुटाने को उत्सुक थीं। पण्डित राघवचेतन की खातिर में उनको होश न था। कभी बढ़िया बढ़िया लवाजमात, कभी हीरों की अंगूठियों से दमकती हुई गोरी गोरी पतली पतली उँगलियों से पान, कभी ओठों की शराब के साथ साथ प्यालों का रस! दो चार दिन में ही राघवचेतन ने इतने रस पिये कि उनकी सारी विद्वत्ता काफूर हो गई। उनको होश न रहा कि मैं कहाँ हूँ, कौन हूँ।

और फिर एक दिन बादशाह अलाउद्दीन खिलजी के एक शानदार हरम में राघवचेतन को निजी दावत पर बुलाया गया। बानो के साथ राघवचेतन गर्व अनुभव करते हुए शाही कमरे में आये। हुस्न की समझदार चकाचौंध ने बादशाह के सामने पण्डित की तारीफ के पुल बाँध दिये। राघवचेतन के चमत्कारों को उसने इस तरह चमका चमका कर पेश किया कि पण्डित लट्टू हो गये। जो बड़े बड़े पण्डितों पर जादू कर देते थे उन पर जादू पर जादू चढ़ गये।

सचमुच नारी मनुष्य की कितनी बड़ी दुर्बलता है! तरुणी के रूप-बाण जब चलते हैं तो सिद्ध पुरुष भी मूर्छित होकर गिर पड़ते हैं। रूप और राजनीति के जालों में राघवचेतन ऐसे उलझे कि उनको अपना पता ही नहीं रहा कि वे कहाँ हैं। अलाउद्दीन ने उन पर ऐसा रंग चढ़वाया कि पण्डित उनके ही गीत गाने लगे जिनको वे देश, धर्म और संस्कृति के घातक मानते थे। कंचन और कामिनी के नशे में उन्हें केवल यही दिखाई देता था कि राजा रत्नसेन को धूलि में मिला दूं। वे प्रतिशोध की ज्वाला में उत्सुकता और उत्साह से धधक धधक उठते थे।

अलाउद्दीन ने जब राघवचेतन को बिल्कुल चित देखा तो वे मुस्कराते हुए बोले— हमारा दरबार आप जैसी सूरज की रोशनी से रोशन हो जायेगा।

राघवचेतन— इज्जत अफजाई के लिए शुक्रिया जहाँपनाह!

अलाउद्दीन— आप तो बहुत जल्दी हमारी भाषा बोलने लगे।

राघवचेतन— बानो की मेहरबानी से।

अलाउद्दीन— चित्तौड़ में सबसे ज़्यादा खूबसूरत चीज़ क्या है?

राघवचेतन— चित्तौड़ की नयी रानी पद्मिनी।

अलाउद्दीन— वह कितनी खूबसूरत है?

राघवचेतन— जितनी खूबसूरत आपकी दिल्ली में कोई चीज नहीं।

अलाउद्दीन— क्या सच?

राघवचेतन— जो देख लेता है उसे फिर कुछ देखने की इच्छा नहीं रहती।

अलाउद्दीन— क्या हम उस बेमिसाल खूबसूरती को देख सकते हैं?

राघवचेतन— अगर चित्तौड़ के वीर राजा रत्नसेन चाहें तो।

अलाउद्दीन— क्या वे चाह सकते हैं?

राघवचेतन— नहीं।

अलाउद्दीन— क्यों?

राघवचेतन— क्योंकि उनकी दृष्टि में आप उनके देश और संस्कृति के शत्रु हैं।

अलाउद्दीन— हम पद्मिनी को देखना चाहते हैं।

राघवचेतन— तो चित्तौड़ पर आक्रमण कर दीजिये। आपको वहाँ का राज्य भी मिल जायेगा और रानी भी।

अलाउद्दीन— मगर सुना है राणा रत्नसेन बड़े बहादुर हैं। चित्तौड़

की दीवारें इतनी मज़बूत हैं कि उनमें घुसना लोहे के चने चबाना है।

राघवचेतन— यह सत्य है सुल्तान साहब! चित्तौड़ के बच्चे बच्चे में देशभक्ति की अटूट भावना है। वे मर सकते हैं पर चित्तौड़ की मिट्टी नहीं दे सकते। लेकिन आपकी ताकत के सामने वे मर सकते हैं पर अपने चित्तौड़ को नहीं बचा सकते। आप चित्तौड़ पर हमला कर दीजिये, चित्तौड़ और पद्मिनी दोनों आपके बन्दी होंगे।

अलाउद्दीन— अलाउद्दीन की ताकत का आपको यकीन है?

राघवचेतन— वह जब इरादा कर लेता है तो पहाड़ भी उसके पैरों पर गिर पड़ते हैं। पर राजा रत्नसेन से टक्कर लेना मौत से लड़ना ज़रूर है, आलमपनाह!

अलाउद्दीन— तुम अगर हमारे साथ हो तो एक रत्नसेन क्या हज़ार रत्नसेन भी हमारे सामने मच्छर हैं। हमने दक्षिण में देवगिरि के यादव राजपूतों को जीता जिनके सामने पहुँचते ही तलवारों की धार टूट कर गिर पड़ती थी। उनके लड़ाके राजपूतों ने हमें छः सौ मन सोना, सात मन मोती, दो मन बहुमूल्य रत्न और सौ मन चाँदी देकर हमारी गुलामी मंजूर की। हमने गुजरात के राजा कर्णदेव को हराया, उसकी औरत कमलादेवी हमारे हरम में है। हमने जहाँ भी कदम रक्खा वहीं जीत हमारे कदमों पर आ गिरी। हमारे खजानों में जीत के हीरे मोती भरे पड़े हैं, हमारे हरमों में एक से एक खूबसूरत जवानी है, हर रजवाड़े की बेजोड़ खूबसूरती हमारे दिल को रोशन करती है।

राघवचेतन— पर अगर पद्मिनी को देख लिया तो आपको दुनिया की सारी खूबसूरती फीकी लगने लगेगी नूरेजहाँ!

अलाउद्दीन— हम पद्मिनी को अपने हरम में लाकर ही दम लेंगे।

राघवचेतन— तो फिर देर किस बात की है ? चित्तौड़ पर हमला कर दीजिये साहिबे आलम !

अलाउद्दीन— देर सिर्फ सिपहसालार जफरखाँ के आने की है। वे अमीरों की बगावत दबाने के लिये गये हुए हैं।

राघवचेतन— देर करने से हानि हो सकती है, इस वक्त राणा बेखबर हैं।

अलाउद्दीन— जफर जुम्मे को वापिस आ जायेंगे। बस फिर दो दिन बाद फौज कूच कर देगी।

राघवचेतन— हमला इतने दबे पैरों हो कि हवा को भी पता न चले।

अलाउद्दीन— तुम हमें रास्ता बताते रहना।

राघवचेतन— रातों रात चलकर अंधेरे में ही चित्तौड़ को चुपचाप चारों तरफ से घेर लेना चाहिये।

अलाउद्दीन— जैसे हमारे काबिल दोस्त फरमायेंगे वैसे ही होगा। अब बहुत देर हो गई, आपको आराम करने दिया जाये। बान्दो, पंडित राघवचेतन को पूरा पूरा आराम दिया जाये, इनकी खातिर में कोई कमी न रहे। दिल्ली की हर खूबसूरत चीज़ इनके क़दमों में डाल देना।

राघवचेतन— अब आप भी आराम करें।

अलाउद्दीन— हम तो अब आराम तभी करेंगे जब पद्मिनी आ जायेगी। हम पद्मिनी को पाये बिना खुश नहीं हो सकते। दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन को पद्मिनी के बिना नींद कहाँ! अब तो वह खूबसूरत हूरों की हूर जिस दिन हमारे हरम में आयेगी उसी दिन हमारे दिल की कली खिलेगी। पंडित! तुम दिल्ली की खूबसूरती के साथ जश्न मनाओ। हमें ज़रा सोचने दो।

बानो के साथ पंडित राघवचेतन चांदनी चौक से भी ज़्यादा चमकते हुए चावड़ी बाज़ार में गये और अलाउद्दीन अपने बाग में टहलने लगते हैं। टहलते टहलते वह आप ही आप गुनगुना उठा—"हिन्दुस्तान हकीकत में बेजोड़ मुल्क है। यह देश सोने का देश है। सचमुच यह सोने की चिड़िया जन्नत से भी ज़्यादा खूबसूरत है। लेकिन इस खूबसूरत देश वाले इन्सान नहीं, लोहे के आदमी हैं। इनको कैद किया जा सकता है, कत्ल किया जा सकता है, किन्तु इनसे इनका धर्म नहीं छीना जा सकता। ये लड़ते लड़ते मरना पसन्द करते हैं पर गुलामी कबूल नहीं करते। यहाँ की औरतें अपने शौहर के साथ जिन्दा जल जाती हैं, पर अपना ईमान नहीं छोड़तीं, अपनी अस्मत पर आंच नहीं आने देतीं। पद्मिनी, बहुत खूबसूरत है वह! अलाउद्दीन उस खूबसूरत हूर को अपनी औरत बनाकर रहेगा, उसे दिल्ली के हरम में आना ही पड़ेगा। मैं इस देश की तहजीब को इस्लामी तहजीब में बदल कर ही रहूँगा, यहां की हर दीवार पर इस्लामी झंडा फहरा कर ही चैन लूंगा। चित्तौड़ के किले की ऊंची चोटी को अलाउद्दीन के कदम चूमने ही पड़ेंगे। हठीले राजपूतों का घमंड चकनाचूर होकर रहेगा।

हिन्दुस्तान भी क्या ही हसीन है, और कितनी हसीन हैं यहाँ की औरतें! एक से एक नई अदा! गुजरात के राजा कर्णदेव को जीतने पर हमें सबसे सुन्दर जो चीज़ मिली वह उसकी रानी कमलादेवी, कमला! कोई है?"

सुनते ही एक लौंडी ने आकर फरशी सलाम झुकाये। बादशाह ने एक फूल डाल से तोड़कर सूँघते हुए कहा— हम इस खूबसूरत बगीचे में कमला के साथ जश्न मनाना चाहते हैं, उसे हाजिर किया जाये।

आज्ञा पाते ही प्रतिहारी चली गई और थोड़ी ही देर में सौन्दर्य

और शर्म के बोझ से झुकी हुई कमलादेवी ने बाग में प्रवेश किया। अलाउद्दीन ने बेहोश आँखों से उसे देखते हुए झूमकर कहा— खूब, खुदा ने तुम्हें खूब बनाया है! तुम्हारी हर अदा निराली है। जी चाहता है सारी दिल्ली तुम्हारे कदमों पर डालकर सिर्फ तुम्हें ही देखता रहूँ।

सुनते ही सौन्दर्य और शर्म से झुकी हुई कमलादेवी ने गर्दन ऊपर उठाई और तड़क कर उत्तर दिया— "दिल्ली तो क्या अगर तुम तीनों लोकों का राज्य भी मेरे चरणों पर लाकर रख दोगे तो भी तुम्हें नफरत की निगाह से ही देखूंगी। मैं तुम्हारी बन्दी हूँ पर तुम्हारी दोस्त कभी नहीं बन सकती। तुमने अपनी ताकत की खूनी तलवार से मेरे गुजरात को लूटा है, मेरे पति का रक्त पिया है, तुम बादशाह नहीं, खूनी और लुटेरे हो। खूनी जानवर भी तुमसे अच्छे होते हैं। तुम शान्ति के लिए मौत हो। तुम जैसे हिंसक और हत्यारे ही धरती को खून में डुबाते हैं, निर्माणों को विध्वंस में बदलते हैं।"

सुनकर अलाउद्दीन आगबबूला हो गया। वह दाँत पीसता हुआ बोला— "जानती है तू किसके सामने खड़ी है? मैं अगर चाहूं तो अभी तुझे कुत्तों से नुचवा सकता हूँ।"

कमला— "तुझ कुत्ते के हाथों से नुचने से यही अच्छा है कि कुत्ते मुझे फाड़ कर खा जायें।"

अब अलाउद्दीन से न रहा गया। उसने अपनी कमर से कटार खींची और एक ही बार में कमलादेवी का काम तमाम कर दिया।

कमला का खून देखते ही बेगम दौड़ी हुई आई और वह कभी लाश को और कभी अलाउद्दीन को देखती हुई बोली— "यह तुमने क्या किया, बादशाह! एक मासूम और खूबसूरत रानी को कत्ल कर डाला। तुम बहुत बड़ी बड़ी इमारतें बना सकते हो, अपनी सल्तनत बढ़ा सकते हो, ताकत के जोम में जो चाहे कर सकते हो पर जिसे तुमने कत्ल कर

दिया उस कमला को फिर नहीं बना सकते ।"

अलाउद्दीन— हिन्दुस्तान में कमलाओं की कमी नहीं। एक कमला को कत्ल कर दिया तो क्या है, लाखों कमला अलाउद्दीन की कदमबोसी करने के लिये हाज़िर हो जायेंगी। मैं एक ऐसी खूबसूरत रानी लाने वाला हूँ जिसके सामने सैंकड़ों कमला कुछ भी नज़र नहीं आयेंगी। बहुत ही जल्दी चित्तौड़ की रानी पद्मिनी अलाउद्दीन के हरम में अपनी अदाओं का नाच दिखाती दिखाई देगी। हम चित्तौड़ पर चढ़ाई कर रहे हैं।

बेगम— आपके पास किसी चीज़ की कमी नहीं, फिर भी आप भूखे हैं। खुदा आपका भला करे!

८

अलाउद्दीन— जफर खाँ, आज तक तुमने बहुत मैदान जीते हैं, पर अब तुम्हें उस किले पर हमला करना है जिसकी दीवारों से टकरा टकरा कर कितनी ही तेज़ तलवारें टूट चुकी हैं, जहाँ के इन्सान अपनी आज़ादी के लिये हँसते हँसते मरना जानते हैं, जहाँ की मिट्टी में हिन्दुस्तान की आबरू बसी है, जहाँ की औरतों में हिम्मत और अस्मत की रोशनी हैं जो या तो आग बनकर दुश्मन को फूँक डालती हैं या जौहर करके खुद जल जाती हैं। बोलो जफर! क्या तुम उस कीमती किले पर हमला करने को तैयार हो?

जफर— बादशाह सलामत का हुकुम हो तो यह खादिम आसमान के तारे तक तोड़कर कदमों पर डाल सकता है। हुकुम कीजिये, मैं किस के ऊपर मौत बनकर टूट पड़ूँ।

अलाउद्दीन— तुमने अमीरों की बगावत को कुचला है। हमने जो सामान की कीमत तै कर दी उसको तुमने अपनी तलवार से मनवा दिया। तुम्हारी ही तलवार से हमारे राज्य में अमन है। हर खूँखार

हम से काँपता है। हमने जो चाहा वही तुमने हाजिर कर दिया। पर आज तुम से हम एक और चीज़ चाहते हैं।

जफर— खादिम को अब और शर्मिन्दा न कीजिए। मैं अपना सर देकर भी अपने नेक बादशाह की ख्वाहिश पूरी करूँगा।

अलाउद्दीन— तो सुनो, हम चित्तौड़ की रानी पद्मिनी को अपनी बीवी बनाना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि चित्तौड़ के किले की ऊँची चोटी हमारे कदमों पर आ गिरे।

जफर— तो मैं आज ही पाँच हजार जवान लेकर चित्तौड़ पर चढ़ाई के लिये कूँच कर दूँगा।

अलाउद्दीन— सुना है चित्तौड़ का राजा रत्नसेन बड़ा बहादुर है। उससे लोहा लेना आसान नहीं है।

जफर— जफर को अपने लोहे पर यकीन है। बड़े बड़े बहादुर राजपूतों की तलवार उससे टकरा कर आपकी गुलाम है।

अलाउद्दीन— मुझे अपने सिपहसालार की बहादुरी पर गरूर है। लेकिन फिर भी हमें बड़ी होशियारी से हमला करना होगा। रत्नसेन की फौज से चौगुनी फौज लेकर तुम उस पर चुपचाप चढ़ाई करो। राजा रत्नसेन को पता भी न चले और चित्तौड़ भी घिर जाये। हम भी पद्मिनी को पाने के लिये चित्तौड़ चलेंगे। बहादुर मलिक काफूर को भी इस जंग के लिये साथ ले चलो।

जफर— जो हुकुम।

अलाउद्दीन— हम जल्दी से जल्दी चित्तौड़ पहुँचना चाहते हैं।

जफर— कल सुबह फौज कूच कर देगी।

दूसरे दिन सुबह चित्तौड़ की ओर अलाउद्दीन के घोड़ों की टाप सुनाई देने लगी। एक भयानक तूफान चित्तौड़ की तरफ चल पड़ा। आँधी की तरह आगे बढ़ती हुई अलाउद्दीन की फौज चित्तौड़ के किनारे

आ लगी। रात के अँधेरे में फौज ने चित्तौड़ को घेर कर डेरे डाल दिये। एक बड़े शाही डेरे में अलाउद्दीन खिलजी ने जफर के साथ प्रवेश करते हुए कहा— क्या ही अच्छा हो अगर हम इस अँधेरे में ही चित्तौड़ पर टूट पड़ें।

जफर— ख्याल तो बहुत अच्छा है, मगर रास्तों का तो ठीक ठीक पता नहीं।

अलाउद्दीन— पण्डित राघवचेतन हमारे साथ हैं। वह चित्तौड़ की गली गली को जानता है। यदि ठीक समझो तो उसे तलब करूँ।

जफर— मगर आखिर वह दुश्मन का दोस्त रह चुका है। कहीं चित्तौड़ को देखकर उसके दिल में रत्नसेन की मुहब्बत जाग उठी तो सारा बना बनाया खेल बिगड़ जायेगा।

अलाउद्दीन— वह राजा रत्नसेन से इतना नाराज़ है कि ख्वाब में भी उसका साथ नहीं दे सकता। और फिर हमारे सामने दूसरा रास्ता भी तो नहीं। रात अगर बीत गई तो मोर्चा मुश्किल हो जायेगा।

जफर— तो फिर पण्डित को बुलवाया जाये।

अलाउद्दीन का हुकुम होते ही पण्डित राघवचेतन हाजिर हो गये। बादशाह ने उसे अपने बराबर में बैठाते हुए कहा— अब जीत तुम्हारे हाथ है। बताओ किस रास्ते से इसी रात में चित्तौड़ पर हमला करें।

राघवचेतन— यहाँ से करीब दो मील की दूरी पर चित्तौड़ की छावनी है। वीरवर बादलसिंह उस सेना के अध्यक्ष हैं। वे स्वयं पहरे पर सतर्क रहते हैं। किसी तरह यदि आप बादल की सेना को समाप्त कर दें तो सबसे बड़ा मोर्चा जीत लेंगे। बादल की तलवार के सामने टिकने वाला सूरमा आज तक कोई नहीं देखा। यदि आपने उसका काम तमाम कर

दिया तो फिर आगे मैदान बहुत कुछ साफ है।

राघवचेतन के मुँह से अन्तिम शब्द पूरा भी न होने पाया था कि एक नौजवान ने डेरे में घुस अपनी हाथ की नंगी तलवार से तड़प कर उसका सर अलग कर दिया और यह कहता हुआ कूद कर अपने घोड़े पर सवार हो हवा से बातें करने लगा— "बादल को मारने वाला बहादुर अगर कोई है तो वह आ जाये। वह अकेला तुम्हारी इतनी बड़ी फौज में से अपने दुश्मन का सर काट कर लिये जा रहा है।"

राघवचेतन का सर कटते ही जफर ने खतरे का ढोल बजाया, और वह कूद कर घोड़े पर चढ़ अपने दो हजार जवानों के साथ नौजवान के पीछे दौड़ चला। किन्तु वीरवर बादल का घोड़ा अपनी ज़मीन पर चलने का इतना अभ्यस्त था कि इस अँधेरी रात में वह अपने सवार को उसकी सेना के शिविर तक सुरक्षित ले आया। सेना में आते ही बादल ने शंख बजाते हुए तुमुल घोष किया और कड़कती हुई आवाज़ में बोला— "वीर राजपूतो! दुश्मन ने अँधेरे में तुम पर हमला कर दिया है। शपथ है तुम्हें अपने चित्तौड़ की, सौगन्ध है तुम्हें महाराणा रत्नसेन और महारानी पद्मिनी की, दुश्मन का एक भी सैनिक जीवित न जाने पाये। चित्तौड़ की भूमि बहुत दिनों से रक्त की प्यासी है, बहुत दिन से चंडी पर बलिदान नहीं चढ़े। आज शत्रुओं के रक्त से महाकाली का खप्पर भर दो!"

वीरवर बादल का शंखनाद सुनते ही राजपूतों की तलवारें चमक उठीं। जफर की सेना शिविर तक आने भी न पाई थी कि बादल अपने दो सौ लड़ाके राजपूत सैनिकों के साथ आगे बढ़कर उस पर टूट पड़ा। अँधेरे में राजपूतों की तलवारें बादलों में बिजली की तरह दमक-दमक कर शत्रुओं के सिर काटने लगीं। दो हज़ार दुश्मनों

से दो सौ राजपूतों का यह एक अद्भुत युद्ध था। बादल की तलवार की फुर्ती देखने लायक थी। वार एक दुश्मन के सर पर था और साथ में कट जाते थे उन सभी के सर जो उसके दायें बायें बादल पर वार पर वार कर रहे थे। एक एक राजपूत की तलवार दस दस दुश्मनों का सर काट गई।

जब सुबह हुई तो जफर जान बचाकर अपने डेरों में भाग गया और दुश्मनों के रक्त से होली खेलकर वीरवर बादल ने राजा रत्नसेन के चरण छुए।

रत्नसेन ने बादल को छाती से लगा लिया। महारानी पद्मिनी ने अपने सारे आभूषण उतार उस पर न्यौछावर कर दिये और प्रसन्नता से उसके सर पर हाथ फेरती हुई बोली— "अब तुम्हारा स्थान चित्तौड़ में चित्तौड़ के महाराणा से भी ऊँचा है। तुमने जान पर खेल कर चित्तौड़ की चोटी की लाज बचा ली। तुम मेरे धर्म-पुत्र हो। इतिहास युगों तक तुम्हारी महिमा गायेगा, मेरे लाल!"

बादल— आपके चरणों के प्रताप से मैंने तो एक राजपूत के धर्म का पालन किया है, माँ! चित्तौड़ पर उसी दिन विधर्मियों का पग रखा जा सकेगा जिस दिन बादल की देह में रक्त की बूँद नहीं रहेगी। किसी विधर्मी की क्या ताकत है कि चित्तौड़ का बाल भी बाँका कर सके।

रत्नसेन— हाँ तो तुम्हें दुश्मन के आक्रमण का कैसे पता चला?

बादल— मैं प्रतिदिन रात को अपने शिविर से पाँच मील इधर उधर तक पहरा दिया करता हूँ। जब से राघवचेतन दिल्ली गया था तब से मुझे हर समय आक्रमण की आशंका रहती थी। आज रात को मैंने दूर से अँधेरी आती हुई देखी। मैं अपना घोड़ा एक प्रच्छन्न स्थान पर छोड़ चुपचाप अँधेरे में छिपकर आती हुई उस सेना की गति

विधि देखने लगा। किसी प्रकार उस डेरे के बराबर में जा लगा जिसमें अलाउद्दीन खिलजी अपने सिपहसालार के साथ रात में ही चित्तौड़ पर टूट पड़ने का षड्यन्त्र रच रहा था। तभी वहाँ हमारा भेद बताने के लिये राघवचेतन आया। वह हमारे दरवाज़ों का भेद बता ही रहा था कि मैंने उसका सर काट लिया।

फिर क्या था, अलाउद्दीन का बहादुर सिपहसालार अपनी फौज लेकर मेरे पीछे टूट पड़ा। लेकिन जितने मेरे पीछे भागे थे उनमें से दस पाँच ही अपने डेरों तक वापिस गये होंगे। दुःख है कि मैं अलाउद्दीन के सिपहसालार का सर आपकी सेवा में उपस्थित न कर सका।

रत्नसेन— तुम धन्य हो बादल! हमें इतनी प्रसन्नता खिलजी के सिपहसालार का सर पाकर न होती जितनी राघवचेतन का कटा हुआ सर देखकर हुई है। इस सर को चित्तौड़ के सबसे ऊँचे स्तम्भ पर लटका दो जिससे भविष्य में कोई देशद्रोही होने का साहस न कर सके।

बादल— अलाउद्दीन खिलजी का सर और काट लाऊँ, तब देश-द्रोही और आक्रान्ता दोनों के ही सर एक साथ टँकवा दिये जायेंगे।

रत्नसेन— अलाउद्दीन का सर लाना सरल नहीं है, बादल! मैं बहुत असमंजस में हूँ कि क्या किया जाये। सोच रहा हूँ किसी प्रकार अलाउद्दीन से सन्धि हो जाये तो अच्छा है।

"किससे सन्धि हो जाये? उस अलाउद्दीन खिलजी से जो हमारी संस्कृति का शत्रु है, जो हमारी बहू बेटियों को हरम में नचाता है, जिसने अपने निर्दोष चाचा जलालुद्दीन खिलजी को धोखे से मार डाला, जो चोर की तरह हमारे चित्तौड़ पर चढ़ा आ रहा है। नहीं, यह कभी नहीं हो सकता।" सहसा बूढ़े सेनापति गोरा ने प्रवेश करते हुए कहा।

रत्नसेन— किन्तु कहाँ हम मुट्ठी भर और कहाँ वह तूफान ! आखिर हम कब तक उससे लड़ेंगे ?

गोरा— जब तक गोरा की चिता नहीं जल जायेगी, जब तक चित्तौड़ में एक भी बच्चा जीवित रहेगा तब तक हम अलाउद्दीन खिलजी से लड़ते रहेंगे। जब तक गोरा के हाथ में भवानी है तब तक चित्तौड़ का ऊँचा मस्तक किसी के सामने नहीं झुक सकता।

बादल— चाचा जी ने वही कहा जो मैं सोच रहा था। महाराणा ! आज्ञा दीजिये कि बादल अलाउद्दीन खिलजी की फौज पर प्रलय के बादलों की तरह टूट पड़े। मेरी भुजायें फड़क रही हैं। महाचंडी मुझसे विधर्मियों का रक्त चाहती है। देवी का खप्पर भरने की आज्ञा दो राणा !

रत्नसेन— हम राजपूतों में जितना आवेश है उतना यदि धीरज भी हो तो जय दूर न जाने पाये। तनिक खिलजी की गति विधि तो देखें, आगे वह क्या करता है।

गोरा— करता क्या है, हमला कर चुका। उसे मौका नहीं मिला, नहीं तो वह अब तक कभी का चित्तौड़ को दास बना चुका होता। उसने चारों ओर से चित्तौड़ घेर रक्खा है, अब सोच विचार व्यर्थ है।

रत्नसेन— अपनी सेना मोर्चों पर लगादो। यदि शत्रु एक पग भी आगे बढ़े तो जय और पराजय की चिन्ता छोड़ मृत्यु बन कर उस पर टूट पड़ो।

बादल— राजपूत मोर्चों पर तैयार खड़े हैं। अलाउद्दीन खिलजी की फौज भी मौके की इन्तज़ार कर रही है। हमने यदि तनिक भी झपकी ली तो वह इस सोने के गढ़ को राख बना देगी।

पद्मिनी— गोरा जी ठीक कहते हैं। अब युद्ध या आत्मसमर्पण

हमारे पास दो ही रास्ते हैं, कोई और रास्ता नहीं!

रत्नसेन— आत्मसमर्पण मृत्यु से भी अधिक दुखद है। जब तक रत्नसेन के तन में रक्त की एक भी बूँद है तब तक वह शत्रु को शान्ति से समझाता हुआ तलवार का उत्तर तलवार से देता रहेगा।

राणा कह ही रहे थे कि प्रतिहारी ने अभिवादन करते हुए कहा—"अलाउद्दीन खिलजी का दूत आया है, आपके दर्शन करना चाहता है।"

रत्नसेन— उसे यहीं भेज दो।

प्रतिहारी चला गया और दूसरे ही क्षणों में खिलजी के दूत ने आकर आदाब बजाया। रत्नसेन ने दूत को ऊपर से नीचे तक देखते हुए कहा— कहिये, आपके बादशाह ने हमारे लिये क्या पैगाम भेजा है? शाही फरमान हाजिर किया जाये!

दूत— जिनका नाम सुनते ही देवगिरि के यादव राजपूतों ने हार मान ली, मंगोलों के आक्रमण जिनकी तलवार के आगे टिक न सके, जो गुजरात को जीत चुके हैं, जो रणथम्भौर पर विजय का झण्डा फहरा चुके हैं, दक्षिण भारत में जिनकी जीत के डंके बज रहे हैं, उन बादशाह सलामत अलाउद्दीन खिलजी ने आपकी भलाई के लिये यह खत दिया है और कहा है.........।

राणा तो मौन सुनते रहे पर गोरासिंह ने दूत को बीच में ही रोकते हुए कहा— "बस बस, सुन चुके तुमसे तुम्हारे बादशाह की तारीफें। दूत की मर्यादा के बाहर न जाओ। उनकी हत्याओं की कहानियों को सुनाकर हमें धमकाने की कोशिश न करो। जो कुछ तुम्हारे बादशाह ने कहा वह हम सुन चुके, अब पत्र और दिखा दो।"

रत्नसेन— अपने बादशाह का पत्र गोरा जी को दे दो।

दूत ने पत्र गोरा जी को दिया और गोरासिंह ने पत्र लेकर पढ़ना शुरू किया।

"राणा रत्नसेन !

अगर तुम अपनी और अपने चित्तौड़ की ख़ैर चाहते हो तो अपनी नई रानी पद्मिनी को हमारे हवाले कर दो। पद्मिनी को हमारे हरम में भेजने पर तुम हमारे रिश्तेदार हो जाओगे, फिर तुम बेफिक्री से चित्तौड़ में राज्य करना। जब तुम पद्मिनी को हमें सौंप दोगे तो हम तुम्हें कितने ही और राज्यों का भी राणा बना देंगे। लेकिन अगर तुमने पद्मिनी हमारे हवाले नहीं की तो हम चित्तौड़ की ईंट से ईंट मिला देंगे और तुम्हारी दोनों रानियों को ज़बरदस्ती अपने हरम में ले जायेंगे।

अच्छा इसी में है कि बिना खून खरावे के ही तुम हमें पद्मिनी को दे दो। अलाउद्दीन पद्मिनी को लेकर ही जायेगा। उम्मीद है चित्तौड़ के राणा अपनी और हमारी ताकत को पहचानते हुए हमारा कहना मानेंगे। जवाब दूत को फौरन दे दिया जाये।"

पत्र पढ़ते पढ़ते गोरा जी का मुँह अंगारा हो गया, बादल के हाथ की तलवार लपकने लगी, रत्नसेन के माथे में बल पड़ गये और पद्मिनी पर्दे के पीछे दांत पीसती हुई बिजली सी कौंध उठी।

कुछ पलों के लिये तमतमाते हुए मुँह मौन रहे। महाराणा कभी गोरा का और कभी बादल का मुँह देखने लगे। दोनों की आकृतियों में अंगार धधकते देख वे गम्भीरता से बोले— "दूत को क्या उत्तर दिया जाये गोरा जी!"

गोरा— मुझसे पूछते हो तो उस हत्यारे अलाउद्दीन से कहला दो कि तुझ लुटेरे की ज़बान काटने के लिये हमारी तलवार लपलपा रही है, उत्तर मैदाने जंग में मिल जायेगा। जान की ख़ैर चाहता है तो वापिस चला जा, नहीं तो तेरे गन्दे खून से हमें अपने पवित्र हाथ रंगने पड़ेंगे।

यदि शान्ति से समझने की इच्छा हो तो हम कहते हैं कि मानवता

को मिटाने वाले कदम पीछे हटालो, जीना चाहते हो तो जियो और जीने दो। युद्ध का परिणाम धधकते हुए कब्रिस्तान के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। निर्माणों को ध्वंस में बदलने से कुछ हाथ नहीं आयेगा। कहीं तुम्हारी पेट भरी भूख तुम्हारी ही मौत न बन जाये, इसलिये नम्रता से सावधान करते हैं कि मत धधकाओ उस आग को जो धधकाते चले आ रहे हो। बेबस बच्चे, बूढ़े और औरतों पर अत्याचार मत करो, बोलती हुई कला-कृतियां को पैरों से न कुचलो, धरती के गौरव निर्माण को अपनी भंगुर इच्छाओं के लिये बलिदान न करो। इन्सान हो तो इन्सानियत का पल्ला न छोड़ो। पवित्रता की ओर पाप से बढ़ोगे तो भस्म हो जाओगे। तुम मनुष्य हो, इसलिये मनुष्यों से मनुष्यता का व्यवहार करो। पद्मिनी सारे चित्तौड़ की माँ है। तुम राजा हो। इसलिये हर राज्य की रानी का मां की तरह सम्मान करना तुम्हारा धर्म है। आशा है तुम बदलने की कोशिश करोगे। जिस दिन तुम्हारा हृदय परिवर्तन हो जायेगा उस दिन तुम्हें अमर शान्ति मिलेगी, तब हम भाई की तरह तुम्हारा सम्मान करेंगे।

दूत— तो मैं सब जाकर बादशाह सलामत से कह दूँ?

बादल— हाँ हाँ, कह दो!

रत्नसेन— जाओ दूत, अपने बादशाह से जो कुछ गोरा जी ने कहा है वह कह दो और उनसे यह भी कह देना कि यदि उन्होंने शान्ति का सन्देश स्वीकार किया तो चित्तौड़ उनका प्रेम से स्वागत करेगा और अगर वे नहीं माने तो युद्धक्षेत्र में उन्हें शान्ति मिल जायेगी। बस, अब जाओ।

उत्तर लेकर दूत अलाउद्दीन खिलजी के डेरों में आ गया। सलमे सितारों के शानदार शाही डेरे में शहंशाह अलाउद्दीन खिलजी,

सिपहसालार जफर और गुलाम मलिक काफूर बड़ी बेकरारी से दूत का इन्तज़ार कर रहे थे। दूत को देखते ही अलाउद्दीन ने एक ही श्वास में कहा— कहो, रत्नसेन ने पद्मिनी को देना मन्जूर किया ?

दूत— नहीं, जान की माफी हो तो जो कुछ राणा रत्नसेन ने जवाब दिया है वह बयान करूँ।

अलाउद्दीन— जो कुछ राजा रत्नसेन ने कहा है वह बेखौफ कहो।

दूत— आपका खत पढ़ते ही राणा रत्नसेन और उनके सरदार गुस्से से आगबबूला हो गये। उन्होंने आपको ललकारते हुए जवाब दिया कि अलाउद्दीन खूनी, लुटेरा और हैवान है। उससे कह देना कि जान की खैर चाहता है तो दिल्ली वापिस चला जाय, अपने नापाक इरादों को छोड़ दे। इन्सान है तो इन्सानों से इन्सान जैसा बर्ताव करे। जीना चाहता है तो जिये और जीने दे।

और फिर जब उनका गुस्सा कुछ ठण्डा हुआ तो उन्होंने यह भी कहा कि "हम अमनपरस्त हैं, अमन चाहते हैं; दुश्मनी नहीं, दोस्ती पसन्द करते हैं। लड़ाई में कोई फायदा नहीं है। जंग का नतीजा कब्रिस्तान होता है, बड़ी बड़ी इमारतें मिट्टी में मिल जाती हैं, दुनिया की खूबसूरती खत्म हो जाती है, धर्म और ईमान नहीं रहता, कलाकृतियां जल जाती हैं। इसलिये अपने बादशाह को समझाकर कहना कि जंग का इरादा छोड़ दे और दोस्ती का हाथ बढ़ाये।"

अलाउद्दीन— बस या और भी कुछ कहा है ?

दूत— और तो कुछ नहीं कहा ? लेकिन इतना अर्ज कर दूँ कि उनकी बातचीत का बिल्कुल साफ मतलब यह है कि अगर आप लड़ना चाहते हैं तो वे युद्ध के लिये सर से कफ़न बांधे तैयार खड़े हैं।

सुनकर अलाउद्दीन कुछ सोचने लगे। थोड़ी देर सोचने के बाद उन्होंने दूत को अपने डेरे में जाने की आज्ञा दी और फिर जफर की

तरफ देखते हुए बोले— अब क्या इरादा है ?

जफर— इरादा बहुत सोच समझकर बनाना होगा, शहंशाह ! चित्तौड़ के राजपूत इन्सान नहीं, फौलाद के पुतले हैं। उन लोहे के बहादुरों से लड़ना आसान नहीं है। तोबा तोबा ! कल रात उस नौजवान ने अपने मुट्ठी भर राजपूतों के साथ हमारे दो हज़ार बहादुरों को गाजर मूली की तरह तराश डाला। कितनी गजब की फुर्ती थी उसकी तलवार में ! अगर मैं आँख बचाकर भाग न लिया होता तो वह यमराज मुझे भी मार डालता।

अलाउद्दीन— बस इसी हिम्मत पर चित्तौड़ पर चढ़ाई करने चले थे ! छोटे से मोर्चे पर हौसला हार बैठे !

जफर— मैं नहीं जानता शहंशाह कि क्यों मेरे पैर डगमगा रहे हैं। यह मेरी ज़िन्दगी की पहली हार है।

काफ़ूर— हार से हारने वाले कभी जीना नहीं जानते। रात के एक एक जवान का बदला कल चित्तौड़ के सौ सौ नौजवानों से लिया जायेगा।

जफर— अगर हमले का इरादा है तो मैं सबसे आगे चलने के लिये तैयार हूँ। लेकिन यह ध्यान रहे कि चित्तौड़ के वीरों से लड़ना मौत पर हमला करना है।

अलाउद्दीन— तो फिर क्या हार मानकर दिल्ली वापिस लौट चलें ?

जफर— नहीं।

अलाउद्दीन— तो फिर क्या करें ?

जफर— तरकीब से काम लेना चाहिये।

अलाउद्दीन— तो फिर बताओ कोई ऐसी तरकीब जिससे पद्मिनी हमारे हरम में आ सके।

जफर— तरकीब यही है कि दोस्त बनाकर दुश्मनी कीजिये।

अलाउद्दीन— क्या मतलब ?

जफर— मतलब यह कि चित्तौड़ के राजा रत्नसेन के पास सुलह और दोस्ती का पत्र भेजिये। उसमें लिखिये कि आपके जवाब से हम बहुत खुश हुए। ऐसे दिलेर और पाक राजा को हम अपना दोस्त बनाना चाहते हैं। दरअसल चित्तौड़ के राणा के बारे में जैसा सुना था वैसा ही उनको पाया। चित्तौड़ की महारानी पद्मिनी की खूबसूरती और पवित्रता सुनकर हम तुम्हें दाद देते हैं कि तुम एक वीर और खुशकिस्मत राजा हो। हमारी ख्वाहिश है कि हम तुम्हारे किले में तुम्हारे और तुम्हारी रानी के दर्शन करें और फिर तुमसे हमेशा के लिये दोस्ती का हाथ मिलाकर दिल्ली वापिस चले जायें।

उम्मीद है राणा हमारी दोस्ती कबूल करेंगे और हमें अपने और अपनी रानी के दर्शनों का मौका देंगे।

अलाउद्दीन— फिर ?

जफर— फिर यही कि जिस वक्त भी मौका मिले दोस्त की छाती में छुरा भौंक दिया जाये। मौका पाते ही रत्नसेन को कैदी बनाकर पद्मिनी की डोली जबरदस्ती दिल्ली ले चलें। यही एक तरीका है कि पद्मिनी आपके हरम में आ जाये। किसी दूसरे रास्ते से चले तो मौत मिलेगी और इस रास्ते से चले तो पद्मिनी मिलेगी।

अलाउद्दीन— खूब! जफर खाँ खूब! दुश्मन जब दुश्मनी से बस में नहीं आये तो उसे दोस्त बनाकर मारना चाहिये।

६

"कितनी भंगुर होती है मनुष्य की शान्ति! सुख के स्वप्न उदय होने भी नहीं पाते कि पहाड़ टूट पड़ते हैं! जीवन का हर क्षण मानो सुनहरी धोखा है। कौन कह सकता है कि संसार में कौन अपना है और कौन पराया? यहाँ किस पर विश्वास करें और किसे शत्रु समझें, यह मृत्यु से भी अधिक रहस्यमय है। अब मुझे दुनिया से निराशा होने लगी है पद्मिनी!"

पद्मिनी— वीर होकर हारी बातें क्यों करने लगे नाथ! जीवन में सुख दुःख सभी पर आते हैं।

रत्नसेन— दुःखों का दुःख नहीं पद्मे! दुःख तो इस बात का है कि जिसे हाथों से खिलाते हैं वही आस्तीन का सांप बन जाता है। मैं शत्रु की तलवार का घाव सह सकता हूँ पर अपनों का विश्वासघात नहीं सहा जाता। भारतवर्ष में एक राघवचेतन नहीं, हज़ारों राघवचेतन हैं।

पद्मिनी— तो करोड़ों बादल भी हैं जो हज़ारों राघवचेतन के सर

काट कर ला सकते हैं।

रत्नसेन— सर काट कर ला सकते हैं पर विभीषण ने रावण का जो भेद दुश्मन को दे दिया वह तो वापिस नहीं ला सकते।

पद्मिनी— कुछ समय से मैं आपको बहुत उदास देख रही हूँ। कहीं आप अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण से भयभीत तो नहीं हो उठे ?

रत्नसेन— अलाउद्दीन खिलजी के हमले से उतना भयभीत नहीं हूँ जितना भय मुझे गृहकलह का है। घर की आग अगर बुझ जाये तो भारी से भारी शत्रु को जीतना भी सरल हो जाता है। चित्तौड़ पर काले बादल घिरे हुए हैं और चित्तौड़ के पड़ोसी राजा इस प्रतीक्षा में हैं कि कब चित्तौड़ धराशायी हो और कब हम घी के दीपक जलायें। कुम्भलनेर, जयपुर, जोधपुर सभी तो बहाना बनाये सोये पड़े हैं।

पद्मिनी— विश्वास से चलने वाला अकेला भी करोड़ों को भारी होता है। यदि स्वामी थक गये हैं तो तलवार मुझे दो, चित्तौड़ की रक्षा मैं कर लूँगी।

रत्नसेन— इस समय चित्तौड़ का राज्य संकट में है, कलाकार की कल्पना जैसे तुम्हारे कोमल हाथ क्या रक्षा कर सकेंगे ? मुझे चित्तौड़ से अधिक इस बात की चिन्ता है कि यदि युद्धभूमि में मैं वीरगति को प्राप्त हो गया तो पद्मिनी का क्या होगा ?

पद्मिनी— वही जो माता सीता का हुआ था, अग्नि-परीक्षा! सत्य को आँच भी नहीं आ सकती स्वामी!

रत्नसेन— दुनिया कहती है चन्द्रमा में कलंक है, पर कोई यह नहीं कहता कि पद्मिनी के सौन्दर्य में कोई रेखा भी है। हम हार सकते हैं पद्मिनी! पर आन और मान नहीं दे सकते।

पद्मिनी— जो देश और जाति का मान दे देता है वह भी क्या जीवित है ? मनुष्य तो क्या पशु पक्षियों को भी अपनी भूमि से

मोह होता है। वे प्राण दे देते हैं पर अपनी स्वतन्त्रता नहीं देते।

रत्नसेन— किन्तु अलाउद्दीन तो हमारी स्वतन्त्रता और सतीत्व दोनों ही का हरण करना चाहता है।

पद्मिनी— स्वतन्त्रता की रक्षा आप कर लीजिये, सतीत्व की रक्षा मैं स्वयं कर लूँगी। किसकी शक्ति है कि जो आग को छू ले? एक क्या लाख लाख अलाउद्दीन भी पद्मिनी का सत्य नहीं छू सकते।

रत्नसेन— यह मैं जानता हूँ कि पद्मिनी फूल भी है और ज्वाला भी।

पद्मिनी— फिर आप उदास क्यों होते हैं? भूखे सिंह की तरह शत्रु पर टूट पड़ो और मिटादो उनको जो हमारे देश और धर्म को मिटाना चाहते हैं।

रत्नसेन— मेरी उदासी का कारण यह नहीं कि मैं शत्रु से भयभीत हो उठा हूँ, पर न जाने क्यों आजकल महल में शान्ति नहीं रहती! नागमती को न जाने क्या हो गया है!

पद्मिनी— पता नहीं क्यों वे एकदम खो सी गई हैं! मैं तो उनकी पूरी पूरी सेवा करती हूँ पर वे प्रसन्न होना जैसे भूल गई हैं, बात बात में गुस्सा करती हैं।

रत्नसेन— स्त्री के स्वभाव में यह बहुत बड़ी दुर्बलता होती है कि वह डाह से बहक जाती है।

"आप सच कहते हैं स्वामी! सचमुच मैं बहक गई, ईर्ष्या ने मुझे अन्धी बना दिया। न जाने क्यों ईश्वर ने नारी के विशाल हृदय में इतनी छोटी चिनगारी रख दी कि जिससे वह अपना घर आप ही फूँक डालती है। मेरे ही कारण चित्तौड़ में यह आग लगी है, मेरे ही परामर्श से राघवचेतन दिल्ली गया था। मैं ही पद्मिनी को न देख सकी। मैं देश-द्रोही हूँ, मेरा सर काट डालो राजा!"

आवेश में आकर रानी नागमती ने एक ही श्वास में अपने मन के भाव उगल डाले। सुनकर रत्नसेन की शान्ति और भी भंग हो गई, उनकी आँखें क्रोध और पीड़ा से लाल और गीली हो उठीं। वे गलते और गर्जते हुए बोले— 'यह तुमने क्या किया नागमती! घर का दीपक घर को ही फूँकने लगा! जब माली ही बाग को उजाड़ने पर तुल जाये तो फिर कोई क्या कर सकता है? जब अपनी तलवार अपना ही गला काटने लगे तो कौन हाथ पकड़ सकता है? तुमने यह भी न सोचा नागमती! कि तुम्हारा वार तुम्हारे ही सुहाग पर हो रहा है। जी चाहता है कि अब अपने हाथ से अपनी गर्दन काट डालूँ, फिर चित्तौड़ का कुछ भी हो, कम से कम अपनी आँखों से तो अपनों ही के द्वारा अपना घर फुँकता तो नहीं देखूँगा। बस, अब जी कर क्या करना है?'

कहते हुए राणा ने तलवार म्यान से खींची पर नागमती ने उनका हाथ पकड़ते हुए कहा— "दोष मेरा है, मृत्यु-दण्ड मुझे दीजिये!"

रत्नसेन— नहीं, तुम्हें एकदम कत्ल करके मृत्यु की गोद में शान्ति से नहीं सोने दूंगा। मेरी मृत्यु के बाद तुम तड़प तड़प कर घी के दीपक जलाना, मेरी चिता पर अट्टहास करना।

नागमती टप टप आँसू बहाती हुई सुनती रही और फिर जैसे बुझने से पहले दीपक की लौ लपकती है, ऐसे ही लपकती हुई बोली— तलवार आपके हाथ में है, अपराधिनी उपस्थित है, कठोर से कठोर प्रहार करो! नागमती एक शब्द भी नहीं कहेगी, वह क्षमा भी नहीं चाहती, प्रायश्चित्त के लिये वह नया जन्म चाहती है।

पद्मिनी जो अब तक मौन सुन रही थी अब उससे न रहा गया। वह राणा रत्नसेन और नागमती के बीच में आ गई और आग पर पानी

की तरह बरसती हुई बोली— "आत्मग्लानि से बड़ा दण्ड दूसरा नहीं होता। महारानी नागमती पश्चात्ताप की ज्वाला से जली जा रही हैं। प्रायश्चित्त के लिये वे अपने प्राण तक देने को प्रस्तुत हैं। उनको अपने कठोर शब्दों से नरक से भी अधिक कठोर सज़ा न दो, नाथ! आज उनका हृदय बदला है, बीती बातों को भूल जाइये। दुश्मन छाती पर हुंकार रहा है। ऐसे समय पर घर की लड़ाई का शान्त होना ही श्रेष्ठ है।"

रत्नसेन— तुम जो कुछ कहती हो वह तो नीतियुक्त है, किन्तु नागमती ने वह कर डाला जो नारी जाति के इतिहास में कलंक के नाम से लिखा रहेगा।

पद्मिनी— यह भूल है, स्वामी! बड़ी रानी कल तक कुछ भी करती रहीं, आज तो उनके हृदय में देवत्व जाग उठा है। बुराइयां किसमें नहीं होतीं, लेकिन जो बुराइयों को छोड़ देता है वह श्रेष्ठों से भी श्रेष्ठ हो जाता है। बड़ी बहन की आँखों में देखो! पश्चात्ताप की आग जल रही है। प्रायश्चित्त के अंगारों में तप तप कर सोना कुन्दन बना दीख रहा है।

रत्नसेन— किन्तु यदि इतना बड़ा अपराध किसी और ने किया होता तो क्या तुम यही कहतीं?

पद्मिनी— यदि मैं देखती कि व्यक्ति के दोष में समाज का विष फैला हुआ है तो मैं उसे बुरा कहती जो ऐसे दोषी को दण्ड देता है।

रत्नसेन— तो इसका अर्थ यह हुआ कि दोष नागमती का नहीं।

पद्मिनी— हाँ, चित्तौड़-गौरव! सामाजिक संकीर्णता के कारण हमारे देश की नारियां इतनी संकुचित हो जाती हैं कि उनके विशाल हृदय में गुंजायश ही नहीं रहती। कोई भी स्वयं बुरा नहीं होता, दूसरे

उसे बुरा कर देते हैं।

नागमती से न रहा गया। वह भावावेश में पद्मिनी से लिपट गई और अपने आँसुओं से उसे नहलाती हुई रुक रुक कर कहने लगी— "बहिन! मुझे मरने का दुःख नहीं और न जीने में खुशी है, किन्तु मैं नहीं चाहती कि मेरा चित्तौड़ दास हो। किसी भी तरह मेरे चित्तौड़ को बचा लो और यदि तुम सब के किये कुछ न हुआ तो मैं अकेली ही तलवार लेकर आक्रान्ताओं पर टूट पड़ूंगी और चित्तौड़ का मस्तक ऊँचा करती हुई वीरगति को प्राप्त हो जाऊंगी।"

रानी नागमती का उत्साह देख इस क्रोध में भी रत्नसेन के अधरों पर स्मित रेखा दौड़ आई। उन्होंने तलवार म्यान में डालते हुए कहा— तुम्हारी इच्छा पूरी होगी रानी! तुम्हारे चित्तौड़ का मस्तक कभी नहीं झुकेगा। जाओ, तुम और पद्मिनी महल में विश्राम करो। मैं उस खिलजी को चढ़ाई का मज़ा चखाने जाता हूँ।

पद्मिनी— आप युद्ध में जायें और हम महल में विश्राम करें, पुरुष अंगारों पर चल रहे हों और स्त्रियां फूलों पर चलें! नहीं, यह नहीं हो सकता। आप युद्धक्षेत्र में जाइये और दुर्ग की रक्षा हम क्षत्राणियां आप कर लेंगी। यदि जय पाकर आये तो हम दुर्ग की चोटी से फूल बरसा कर वीरों का स्वागत करेंगी और यदि चित्तौड़ के रक्षक लड़ते लड़ते वीरगति को प्राप्त हो गये तो हम शत्रु से तब तक लड़ती रहेंगी जब तक अग्नि हमें भस्म नहीं कर देगी। जय या मृत्यु, वीरों के लिये ये ही दो मार्ग हैं।

रत्नसेन— जिस देश की नारी जाति में इतना उत्साह हो उस देश का स्वत्व कौन मिटा सकता है? देवियो! तुम अर्चना से माता दुर्गे का आवाहन करो और हम महाशक्ति का खप्पर भरने युद्धभूमि में जाते हैं। विश्वास रक्खो, जय हमारी ही होगी।

कहते हुए राणा ने दोनों रानियों को उत्साह और प्रेम से देखा और फिर तेज़ी से रण का बाना पहिन शस्त्रागार पर आ गये।

शस्त्रागार पर गोरासिंह और बादलसिंह व्यग्रता से राणा रत्नसेन की प्रतीक्षा कर रहे थे। राणा जी को देखते ही दोनों ने सैनिक अभिवादन किया और तुरन्त ही कहा— दुर्ग के बाहर चित्तौड़ राज्य का एक एक नागरिक आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा है। अब शस्त्र बाँटने में देर नहीं करनी चाहिये।

रत्नसेन— आपकी सेना हर ओर से चौकस है ?

बादल— शत्रु जहाँ है वहाँ से तिल भर भी नहीं हिल सकता। उसने बढ़ने की बहुत कोशिश की पर कदम बढ़ने से पहले ही उनके सर काट लिये जाते हैं।

रत्नसेन— तो अब तुरन्त संकटकालीन स्थिति घोषित कर प्रत्येक नागरिक को सशस्त्र कर दो और कह दो कि हर समय शत्रु से युद्ध के लिये तैयार रहे।

गोरा— बालक, बूढ़े, बच्चे, स्त्रियां सभी सर हथेली पर रख दुश्मनों के सर काटने के लिये तैयार खड़े हैं। आपकी आज्ञा की देर है, हम विद्युत की तरह दुश्मनों पर टूट पड़ेंगे।

रत्नसेन— गोरा जी! आप पहाड़ियों वाले मोर्चे पर शत्रु से मोर्चा लेने के लिये सुरक्षित रहें, सेनानायक वीरसिंह को उत्तरी मोर्चे पर लगा दीजिये। हर मोर्चे पर कुमुक सुरक्षित रहे, दुश्मन हम पर हमला करे इससे पहले ही मैं और बादल एक सहस्र वीरों को साथ ले शत्रु पर आक्रमण करते हैं।

गोरा— जो आज्ञा। किन्तु दुश्मन की सेना बहुत अधिक है, इसलिये यदि तीन ओर से एक साथ शत्रु पर आक्रमण करदें तो उसके पैर उखड़ जायेंगे और चौथे रास्ते से उनको भागने के अतिरिक्त कुछ नहीं

सूझेगा।

रत्नसेन— हो तो यह भी सकता है पर हम अपनी सारी शक्ति एक साथ झोंकना नहीं चाहते। हो सकता है हम चारों ओर से घिर जायें और दुश्मन चौथे रास्ते से दुर्ग पर अधिकार करले। इसलिये गोरा जी और वीरसिंह दुर्ग की ओर बढ़ने वाले दुश्मनों की गति रोकेंगे।

गोरा जी— जो महाराज की आज्ञा। अच्छा, जय एकलिंग का घोष करते हुए शस्त्र वितरण करो बादल !

गोरा जी और बादल ने शंखनाद करते हुए नागरिकों को शस्त्र बांटे। प्रत्येक राजपूत अस्त्र शस्त्र चमचमाता हुआ युद्ध के लिये निकल पड़ा। चित्तौड़ के चारों ओर देशभक्त देश-रक्षा के लिये दृढ़ दीवारों की तरह अड़ गये। चित्तौड़ में उस समय वीरता और देशभक्ति का अद्भुत दृश्य था। प्रत्येक में देश-प्रेम की आग लगी हुई थी। राजपूत चित्तौड़ के लिये प्राण देने को ललक रहे थे।

और उधर अलाउद्दीन खिलजी की फौज बिजली तथा बादलों की तरह चित्तौड़ के चारों ओर थी। बिल्ली की तरह चित्तौड़ में घुसने के लिये वह ताक में खड़ी थी। पर प्रहरियों को सतर्क देख उसका साहस न होता था कि मौत के मुँह में जायें।

चारों तरफ अपनी लाचारी देख अलाउद्दीन ने जफर से कहा— कोई सूरत नजर नहीं आती, कोई तदबीर कामयाब होती नहीं दीख रही।

जफर— एक ही सूरत है और वह धोखा। राजपूत जंग से नहीं दोस्ती से ही जीते जा सकते हैं। महीनों हो गये मगर हम एक कदम भी नहीं बढ़ सके।

अलाउद्दीन— और बढ़ने की उम्मीद भी नहीं दीखती।

जफर— नतीजा यही निकलेगा कि हमारी फौज गाजर मूली की

तरह कट जाये।

अलाउद्दीन— तो फिर वही रास्ता अख्तयार करो जो पहले बनाया था।

जफर— मैं आज सुलह और दोस्ती का खत भेज दूँगा।

अलाउद्दीन— करो, कुछ करो पर मुझे पद्मिनी दिलाओ! लड़ाई से, धोखे से, दोस्ती से, जैसे भी हो पद्मिनी को दिल्ली ले चलो!

जफर— जफर के रहते आपकी हर उम्मीद पूरी होगी।

कहते हुए सिपहसालार ने मलिक काफूर को तलब किया और उसको पास बैठाकर समझाया कि तुम दूत बन कर चित्तौड़ के राजा रत्नसेन के पास जाओ और उनको शहंशाह दिल्ली की तरफ से सुलह का खत देते हुए कहना— "चित्तौड़ और वहाँ के राजा के बारे में जैसा सुना था वैसा ही पाया। ऐसे ईमानदार और बहादुर हमने आज तक नहीं देखे। बादशाह आपकी सच्चाई और वीरता पर दाद देते हैं और चाहते हैं कि राजा रत्नसेन हमारी दोस्ती कबूल करें। दिल्ली चित्तौड़ को गुलाम नहीं दोस्त बनाना चाहती है। हमने हमला करने का इरादा छोड़ दिया है, हम चित्तौड़ से जीत कर वह चीज़ नहीं ले जाते जो दोस्ती से दोस्ती का आबेहयात ले जायेंगे। हम चित्तौड़ से जीत नहीं प्रेम ले जाना चाहते हैं। अगर राजा साहब को हमारी मित्रता स्वीकार हो तो हम तन्हा उनका चित्तौड़ देखना चाहते हैं, चित्तौड़ के राजा रानी और उस किले के दर्शन करना चाहते हैं जो बड़े से बड़े राज्य से भी ज़्यादा खूबसूरत है। उम्मीद है कि राजा साहब बीती बातों को भूलकर, हमसे बराबर का रिश्ता जोड़ेंगे। मुबारिकबाद है आपको कि आपने हमें इन्सानियत का रास्ता दिखा दिया।"

लो यह खत और जाओ मलिक साहब! बात इतनी खूबसूरती से करना कि चित्तौड़ वाले हमारे मुरीद हो जायें, और देखो कैसे भी हमारे

चित्तौड़ देखने की बात पक्की कर आना। बस, अब जाओ!

दूत बनकर मलिक काफूर घोड़े पर सवार हुआ और चित्तौड़ के सेना-शिविर की ओर चल पड़ा। शिविर के द्वार पर उसकी पहली भेंट बादलसिंह से हुई। बादल ने उसे ऊपर से नीचे तक देखते हुए कहा— "आप यहीं डेरे में ठहरिये, मैं महाराणा को आपके आने की खबर दिये देता हूँ। उनकी आज्ञा हुई तो उनसे आपको मिला दिया जायेगा।"

अपने सैनिकों को सतर्क कर बादल महाराणा के पास गये, उनसे कहा कि दिल्ली का दूत आपसे मिलने आया है, क्या आज्ञा है?

रत्नसेन — दूत को सादर हमारे पास ले आओ और गोराजी के पास भी खबर भेज दो कि अलाउद्दीन खिलजी का दूत आया है। बातचीत के समय तुम भी यहीं रहना।

बादल— जो आज्ञा, महाराणा जी!

थोड़ी ही देर में राणा रत्नसेन के सामने दूत उपस्थित कर दिया गया। राणा ने दूत को सस्वागत मूढ़े पर बिठाया। चित्तौड़ नरेश के एक ओर गोरा जी और दूसरी ओर बादलसिंह बिराजे। जब शिष्टाचार के क्षण बीत गये तो रत्नसेन ने कहा— "कहो दूतवर! तुम्हारे शहंशाह ने हमारे लिये क्या सन्देश भेजा है?"

दूत — बादशाह साहब ने सुलह का खत भेजते हुए यह अर्ज़ की है कि हम राणा जी की वीरता और सच्चाई से बहुत खुश हैं और चाहते हैं कि राजा साहब हमारी दोस्ती मंजूर करें। उन्होंने आगे कहा है कि राणा रत्नसेन ने हमारी आँखें खोल दीं, हम अंधेरे से उजाले में आ गये। लड़ाई मनुष्यता से बाहर की चीज़ है। इन्सानों को आपस में लड़ना नहीं चाहिये। इसलिये हम शर्मिन्दा होकर दोस्ती चाहते हैं और चाहते हैं कि दिल्ली जाने से पहले महाराणा रत्नसेन, उनके चित्तौड़

और उनकी रानी के दर्शन करें। उम्मीद है कि राणा जी हमारी भावनाओं का स्वागत करते हुए हमें अपना बनायेंगे। हम पाक इरादे से पाक मुहब्बत जोड़ने की तमन्ना लिये हुए हैं।"

कह कर दूत चुप हो गया। थोड़ी देर तक रत्नसेन भी मौन रहे। फिर कुछ सोचते हुए गोराजी को देखते हुए बोले— दूत को क्या उत्तर दिया जाये गोरासिंह जी!

गोरा— परिस्थिति ऐसी दीख रही है कि इधर गिरो तो कुंआ और उधर गिरो तो खाई। शान्ति से मित्रता की बात बहुत मीठी लग रही है पर कहीं हाथी के दाँत खाने के और तथा दिखाने के और हुए तो पता नहीं परिणाम क्या निकले।

रत्नसेन— परिणाम इससे अधिक क्या निकलेगा कि कल भी युद्ध ही करना पड़े। जब हम आज अलाउद्दीन से नहीं डरते तो कल का डर कैसा?

गोरा— तो फिर अच्छा है कि हम अलाउद्दीन का शान्ति प्रस्ताव स्वीकार करलें। अगर बादशाह साहब का हृदय बदल गया है तो हमारा तो पहले से ही हृदय शुद्ध है।

रत्नसेन— तो मैं दूत से कह दूँ कि हम बादशाह साहब के इस प्रस्ताव से बहुत प्रसन्न हैं।

गोरा जी— हां, कह दो। पर साथ ही साथ यह भी कह दो कि भारतवासी सोने के घट में विष देना नहीं जानते। दोस्ती का मिला हुआ हाथ कभी भी हटना नहीं चाहिये।

रत्नसेन— सुन लिया दूतवर! बादशाह साहब से कह दो कि हम सहर्ष उनका प्रस्ताव स्वीकार करते हैं, और दिवाली के दो दिन हैं, उस दिन चित्तौड़ की सज्जा अनोखी होती है, हम उस दिन बादशाह साहब को चित्तौड़ देखने के लिये दावत देते हैं।

गोरा— पर चित्तौड़ दर्शन के लिये तुम्हारे शहंशाह अपने दो चार खास साथियों सहित तन्हा ही पधारेंगे।

दूत— आपका हर हुक्म शहंशाह खुशी से मंजूर करेंगे।

रत्नसेन— बादल जी! दूत को सादर विदा करदो।

बादल के साथ दूत चला गया। कुछ सोचने के बाद गोराजी ने कहा— समझ में नहीं आता कि अलाउद्दीन का इरादा एकदम बदल कैसे गया।

रत्नसेन— हो सकता है रात दिन की लड़ाई से वह तंग आ गया हो।

गोरा— लड़ाई से तंग आने वाला तो वह नहीं है पर यह अवश्य हो सकता है कि सामने लोहे की दीवारें देख कर साहस छोड़ बैठा हो। बराबर यत्न करने पर भी वह अभी तक एक पग भी न बढ़ सका।

रत्नसेन— कारण कुछ भी हो पर यह तो है ही कि वह झुक गया है।

गोरा— कमान झुक कर ही तीर छोड़ती है, कहीं उसका यह मोड़ कोई नया जाल न फेंक दे।

रत्नसेन— वह और कर ही क्या सकता है?

गोरा— यह तो भविष्य ही बतायेगा। पर रानी पद्मिनी को दिखाने की बात मुझे नहीं जँची।

रत्नसेन— बात तो मुझे भी नहीं जँची, लेकिन अगर इसी तरह रक्तपात रुक जाये तो सहन कर ही लेना चाहिये!

गोरा— फिर भी मैं एक लुटेरे और दूसरों की बहू बेटियों को जबरदस्ती अपने हरम में रखने वाले दुष्ट के सामने पद्मिनी का आना उचित नहीं समझता।

रत्नसेन— तो कोई और उपाय बताइये?

गोरा— इससे तो यह कीजिये कि दर्पण में पद्मिनी का प्रतिबिम्ब दिखा दो। राजमहल का अतिथि कक्ष शीशों का है, उसमें अलाउद्दीन को पद्मिनी की छाया दिखा दी जाये।

रत्नसेन— आपका आदेश मैं कैसे टाल सकता हूँ! जो आप चाहेंगे वही होगा।

१०

आज दिवाली है, दीपमालाओं से लक्ष्मी की आरती उतारती हुई भूमि जन जन में ज्योति भर रही है। *आकाश के तारों से भूमि के दीपों* की आज होड़ है। देखें बाज़ी कौन जीतता है। वैसे तो चित्तौड़ में प्रति वर्ष ही दीवाली की छटा देखने लायक होती है पर इस वर्ष की दीवाली तो न हुई, न होगी जैसी मनाई जा रही है। दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन खिलजी के स्वागत में दीवाली को वह दमक देने का यत्न किया जा रहा है जिसकी कौंध के सामने आंखें ही न टिकें।

घरों में, गलियों में, सड़कों पर, दुर्ग में, महल में, सब जगह जगमगाहट ही जगमगाहट है। बालक, बूढ़े, नर नारी सभी ने बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहने हैं। हर स्थान पर इत्र आदिक सुगन्धित पदार्थों की सुगन्ध से मूर्च्छा भी चेतनावस्था में है। जिन रास्तों से अलाउद्दीन आयेंगे उन रास्तों पर एक से एक अद्भुत द्वार हैं।

चारों ओर सजा है, दीवाली का त्यौहार है, पर सैनिक सतर्क हैं। कोई ऐसा राजपूत नहीं जिसकी कटि में तलवार न बँधी हो। कोई

ऐसी क्षत्राणी नहीं जिसकी कटि में कटार न छिपी हो।

आइये, अब ज़रा उस महल में भी चलें जिसमें अलाउद्दीन को रानी पद्मिनी के दर्शन कराये जायेंगे। क्या बात है महल की! एक से एक चित्रकला, एक से एक मूर्तिकला का वह एक वास्तविक वस्तु रूप है। चित्र और मूर्तियाँ ऐसे दीखती हैं मानो बोलती हुई दुलहनें हों।

महल में रत्नसेन ने प्रवेश किया और पद्मिनी को देखते ही वे जहाँ खड़े थे वहीं खड़े रह गये। जब उनकी मूर्च्छा जागी तो वे विधाता की उस अद्भुत ज्योति को एकटक निहारते हुए कह उठे— संसार का राज्य भी तुम्हारे रूप के सामने तुच्छ है।

पद्मिनी— कहीं मुझे नज़र न लग जाये, इसलिए आँखों में काला सुरमा और लगा लूँ।

रत्नसेन— कत्ल करने के लिये कटार कम तेज़ नहीं है जो और तेज़ कर रही हो।

पद्मिनी— कत्ल हों आपके शत्रु। कत्ल करूंगी तो आपके दुश्मनों को। आपको तो रिझाने के लिये श्रृंगार करती हूँ।

रत्नसेन— फूल के श्रृंगार की भी क्या कोई आवश्यकता होती है?

पद्मिनी— देवता के चरणों पर चढ़ने के लिये उसे श्रृंगार की आवश्यकता नहीं पर हृदय पर चढ़ने के लिये उसे कण्ठहार बनना ही पड़ता है।

रत्नसेन— पद्मिनी! तुम में केवल रूप ही नहीं, गुण भी हैं।

पद्मिनी— और आप में गुणग्राहकता है।

रत्नसेन— जी चाहता है आज तुम्हें देखता ही रहूँ।

पद्मिनी— क्यों?

रत्नसेन— इसलिये कि देखते ही देखते एक से एक नई छटा से

तुम मुझे हटने ही नहीं देतीं।

पद्मिनी— देखते ही देखते कहीं आपकी आँखों में दर्द न होने लगे।

रत्नसेन— दर्द होगी तो दवा भी तुम्हें ही देनी होगी।

पद्मिनी— दवा पियोगे ?

रत्नसेन— अमृत पीने वाले को दवा की क्या आवश्यकता है ? तुम्हारे रूप का अमृत जिसे मिल गया उसे तो ज़िन्दगी के सारे रस मिल गये। तुम्हारी आँखों में कजरारे बादलों की श्यामलता है, पलकों में लाख लाख कमलों का सौन्दर्य है। तुम्हारे मुख की दमक सत सत चन्द्रमाओं से भी उज्ज्वल है, तुम्हारे हृदय की उमंगें सरिताओं की उल्लास लहरियों के समान हैं, तुम्हारी पवित्रता अग्नि की ज्योति शिखाओं की तरह तेजवन्त है और तुम्हारी शक्ति आग की प्रचंड लपटों से भी तीक्ष्ण है।

सुनते सुनते पद्मिनी ने मुस्कराते हुए कहा— बस बस, महाराज ! कवियों के लिये भी कुछ छोड़ो, कहीं ऐसा न हो कि रूप चित्रण करते करते तलवार चलानी भूल जाओ।

रत्नसेन— जिसके हृदय पर नयनों की कटार का घाव न लगा हो वह तलवार क्या चला सके ! आओ अब चलें, कुछ देर विश्राम करेंगे।

पद्मिनी— युद्ध काल में विश्राम कैसा महाराज ! आज आपके अतिथि आने वाले हैं। उनके स्वागत के लिये तैयार रहिये।

रत्नसेन— तुम न जगातीं तो मैं तो सो ही जाता। बादशाह अलाउद्दीन के आने का समय हुआ चाहता है। मैं दुर्ग के द्वार पर उनके स्वागतार्थ जाऊंगा। हाँ रानी ! सतर्क रहना, मेहमान के स्वागत में कोई कमी न रह जाये। आतिथ्य का सब प्रबन्ध ठीक ठीक तो हो गया है ?

पद्मिनी— आप निश्चिन्त रहें महाराज! अलाउद्दीन की जो खातिर महल में होगी वह आज तक कहीं नहीं हुई होगी।

रत्नसेन— और तो सब ठीक है पर मैं यह नहीं चाहता था कि अलाउद्दीन के सामने हमारी रानी को आना पड़े।

पद्मिनी— ऐसा ही होगा स्वामी! मैंने इसी हेतु सात शीशों का एक कक्ष रचा है। वह शीशमहल मेरे कक्ष के बिल्कुल सामने है। जब मैं अपने कक्ष में शीशे के सामने से जाऊँगी तो उसका प्रतिबिम्ब उन सात शीशों में दिखाई देगा और इस प्रकार आपका अतिथि आपकी रानी के दर्शन कर लेगा।

रत्नसेन— तुम बहुत चतुर हो रानी! मैं यह भी सोचता था कि सौन्दर्य की साक्षात् मूर्ति पद्मिनी के दर्शन से सौन्दर्य के पारखी ही वंचित न रहें। पर दुःख तो इस बात का है कि सौन्दर्य को देखते ही मनुष्य उसको छूकर उसकी निर्मलता नष्ट कर डालता है। सुन्दरता देखने के लिये है, छूने के लिये नहीं।

पद्मिनी— सौन्दर्य की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक है, पर किसी के अधिकार पर आक्रमण करना अनर्थ है। मुझ पर अब केवल आपका अधिकार है।

रत्नसेन— अच्छा तो समय हो गया है, मैं अपने दोस्त को लेने जा रहा हूँ।

पद्मिनी— जाइये, ईश्वर हमारा मान रक्खेगा।

रत्नसेन चले गये। थोड़ी देर बाद दुर्ग के द्वार पर बादशाह अलाउद्दीन खिलजी के स्वागत में बाजे बजने लगे। स्वागत के गीतों से चित्तौड़ गूँजने लगा। किले के द्वार द्वार पर नफीरी बज रही थी। केले के पत्तों से हर ओर हरियाली हासविभोर सी प्रतीत होती थी। फूलों की सजावट से दिशायें मंगलमय और वितानों की छाया से आकाश

आच्छादित था।

जैसे ही इधर से राणा रत्नसेन और उधर से अतिथि अलाउद्दीन दुर्ग के द्वार पर आये जयकारों से ज़मीन गूँज उठी, आकाश प्रतिध्वनित हो उठा। नंगी तलवारों के अभिवादन से राजपूतों ने अभ्यागत का अभिनन्दन किया।

राणा जी ने अपने मेहमान को देखते ही गले से लगाया। स्वागत में फूलों का हार पहनाते हुए उन्होंने दिल्ली शहंशाह से मुस्कराते हुए कहा— "आप हमारे घर आये हैं। ईश्वर का लाख लाख धन्यवाद कि आप हमारे घर आये, कभी हम आपको और कभी अपने घर को देखते हैं। कहाँ दिल्ली के बादशाह और कहाँ हम चित्तौड़ के अकिंचन! कहाँ आकाश की ऊँचाई और कहाँ ज़मीन की सहिष्णुता! वास्तव में बैर और प्रीति का यह अद्भुत मिलन है। चित्तौड़ और दिल्ली के इस मिलन से संसार को एक नया रास्ता मिलेगा।"

अलाउद्दीन— आपकी वीरता और फराकदिली के लिये मेरे पास जुमले नहीं हैं। आपने मुझ जैसे दुश्मन को भी दोस्त बना लिया, इसके लिये मैं आपका लगातार लव्ज़ों में शुक्रिया अदा करता हूँ। मुझे आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई। दुनिया में चित्तौड़ एक बेमिसाल, पवित्र तीर्थ है, जन्नत को भी जिस पर फूल चढ़ाने चाहियें।

रत्नसेन— इज्जत अफजाई के लिये धन्यवाद! आशा है प्रेम की इस भेंट से भारत का इतिहास बदल जायेगा। एक दूसरे की स्वतन्त्रता एवं संस्कृति पर आक्रमण नहीं करेगा।

अलाउद्दीन— तोबा तोबा! लड़ाई भी कितनी बुरी चीज़ है! हर वक्त खून, हर वक्त परेशानी और हर वक्त की जंग से इन्सान हैवान बन जाता है। प्रेम जैसी कोई चीज़ ऐसी नहीं जिसे पाने के लिये इन्सान को इच्छुक होना चाहिये। आपने हमारी मुहब्बत कबूल की,

हमारे शर्मनाक काम को भी भूल गये। हम बहुत लज्जित हैं।

रत्नसेन— आप कैसी बात करते हैं, बादशाह साहब! राजवृद्धि करना तो राजतन्त्र का धर्म है। कायरों की तरह जो कूपमंडूक बना रहता है वह आक्रमणों का शिकार होता ही रहता है।

उपालम्भ का वाक्य सुनते ही अलाउद्दीन मुस्कराये और फिर गम्भीर होकर कहने लगे— "सुबह का भूला अगर शाम को घर आ जाये तो भूला नहीं कहलाता। आपने मुझे मार्ग दिखा दिया राणा जी! अब चित्तौड़ के दर्शन भी करा दीजिये। दिखा दीजिये वह दुर्ग जिसकी शान का किला दुनिया में नहीं है।"

रत्नसेन— देखिये, खूब जी भर कर देखिये! वह चित्तौड़ दुर्ग जो हमारी पूजा का प्रसाद है, जो हमारे प्राणों का धन है, जिसकी पवित्रता पर हम हँसते हँसते बलिदान हो सकते हैं, प्रेम और मित्रता से आपका स्वागत करता है।

आइये, हम आपको चित्तौड़ की एक एक चीज़ दिखायें।

सात मील की परिधि में बसा हुआ यह चित्तौड़ दुर्ग है। सुदृढ़ प्राचीरों के इस दुर्ग के सात प्रसिद्ध द्वार हैं, जिनको पार कर किले में पहुँचा जाता है। किले की लम्बाई तीन मील एवं चौड़ाई डेढ़ मील है। इस किले में वीरता और कलाओं के एक से एक अद्भुत दृश्य हैं। देखिये, ये हैं शृङ्गार-चौरी की दीवारों पर भावात्मक कृतियां, ये मूर्तियां शिल्प-कला की बेजोड़ कहानियां हैं। एक एक मूर्ति जीवित प्रतिमा की तरह मुखर दीखती है।

अलाउद्दीन— वाह! खूब! खुदा की बनाई हुई तस्वीरों को भी मात कर दिया। जी चाहता है निगाह हटाई ही न जाये।

रत्नसेन— और यह है वह महल जिसमें राजवंश के बालक पढ़ते लिखते हैं।

अलाउद्दीन — बच्चों की शिक्षा के लिये आपका यह महल बड़ा ही मनोहर है। हम भी दिल्ली जाकर ऐसा ही महल बनवायेंगे।

रत्नसेन— और यह देखिये, हमारे भगवान कृष्ण का मन्दिर, कृष्ण जन्म दिवस पर जिसने इस मन्दिर के दर्शन नहीं किये उसका जन्म निरर्थक है।

अलाउद्दीन ने भगवान की मूर्ति को नमस्कार करते हुए कहा— "कितनी सुन्दर सूरत है! जी चाहता है रात दिन यहीं बैठे रहें।"

रत्नसेन— मन्दिर में तो सभी के लिये हर समय द्वार खुले रहते हैं। और अब आइये और देखिये, यह है वह जौहर-महल जिसमें राजपूतनियाँ अपने सतीत्व की रक्षा के लिए जीवित अग्नि में जल जाती हैं। और इसके बराबर में यह विजय-स्तम्भ है।

अलाउद्दीन— एक एक कला बेमिसाल है। सब कुछ तो देखा पर अब महारानी पद्मिनी का वह महल भी तो दिखा दो जिसके फर्श तालाब से प्रतीत होते हैं।

रत्नसेन— हम अब अपने दोस्त को उसी ओर ले चल रहे हैं। तालाब के बराबर में वह जो दीपकों से जगमगा रहा है वह पद्मिनी का ही महल है। चलिये, आप हमारे साथ आज उसी महल में भोजन करेंगे।

अलाउद्दीन— चलिये, ऐसी जन्नत देखने का मौका कब कब नसीब होता है।

रत्नसेन बादशाह को साथ ले उस महल में आ गये जिसकी सज्जा के सामने विधाता की सारी सज्जायें फीकी लगने लगती हैं। इन्द्र-धनुष की तरह रंग रंग के फूल, सोने की तरह दमकती हुई दीवारें, हीरे और मोतियों के जड़े हुए नग और लटकते हुए झाड़-फानूस

देखकर अलाउद्दीन की आंखों में उनकी दिल्ली शर्माने लगी। दीप-मालाओं से जगमगाती हुई दीवारें मानो आकर्षण से आकाश के तारों को खींच लाई हैं।

अलाउद्दीन ने चमत्कृत होते हुए तारीफ के पुल बांधे और कहा—"यही स्वर्ग है, यही जन्नत है और यही बादशाहत है।"

रत्नसेन— आइये, अब हम अपने दोस्त के साथ भोजन करेंगे।

अलाउद्दीन— आप जैसे पाक दोस्त के साथ दावत का मौका ज़िन्दगी में किसी किसी को ही नसीब हो सकता है।

रत्नसेन— आपकी भावनायें बड़ी ही मुलायम हैं। कहीं आपकी प्रशंसा से मैं ज़मीन में न गड़ जाऊँ! विराजिये भोजन के लिये।

चित्तौड़ के राणा के साथ अलाउद्दीन भोजन के लिये आसन पर विराजमान हो गये। खाने के लिये व्यंजनों की चौकियाँ सामने बिछ गईं। एक से एक स्वादिष्ट भोजन सामने रक्खे गये। फल, मेवा, मिठाई, फुलके, कचौरी, पूरी, रस, रबड़ी, मलाई, खीर, माल-पुए और कहाँ तक गिनायें, इतने प्रकार के भोजन थे कि अगर सबका वर्णन करें तो अलाउद्दीन की दावत के नाम से एक नया उपन्यास लिखना पड़ जायेगा। इसलिये अब खाने की वस्तुओं के नाम ले लेकर हम आपको ललचाना नहीं चाहते। आइये अब कुछ खाने का भी रस ले लें। अलाउद्दीन को खाने में ऐसा मज़ा आया कि उंगुली चाट चाटकर खाने लगा। एक एक चीज़ खाता था और तारीफ पर तारीफ करता जाता था। हर चीज़ का ग्रास खाते खाते भी चीज़ें इतनी थीं कि अलाउद्दीन से सभी का स्वाद न लिया गया।

रत्नसेन ने प्रेम से देखते हुए कहा— "खाइये, बादशाह साहब!"

अलाउद्दीन— कहाँ तक खायें ?

रत्नसेन— जान पड़ता है हमारे खाने आपको पसन्द नहीं आये। वैसे तो हमने भोजन में सभी रस बनवाये हैं। पर क्षमा करें शहंशाह! मांस हमारे राज्य में सौ सौ कोस परे तक दिखाई नहीं देगा। इसलिये यहाँ आपको मांस तो नहीं मिलेगा। मांस पर हमारे यहाँ वैधानिक रोक है।

अलाउद्दीन— अजी इन लज़ीज़ भोजनों के सामने मांस क्या चीज़ है! जान पड़ता है आप खाने में बहुत चतुर हैं। ऐसे भोजन तो हमने कभी नहीं खाये। तबियत को गुलाब की तरह खिला देने वाले ये खाने खूब हैं! शायद दुनिया में इनसे अच्छे खाने हैं ही नहीं।

रत्नसेन— हमें खाने से अधिक खिलाने में स्वाद आता है। अतिथि को हम अपने प्राणों से अधिक स्थान देते हैं।

अलाउद्दीन— सच कहते हो, राजा साहब! आपका प्रेम देखकर तो मैं अपने आपको भूल गया हूँ।

रत्नसेन— प्रेम से ही मनुष्य मनुष्य के निकट आता है। यदि एक दूसरे से प्रेम का नाता जोड़ ले तो दुनिया के सारे झगड़े ही समाप्त हो जायें।

अलाउद्दीन— बड़े ऊँचे ख्याल हैं आपके!

रत्नसेन— सम्मान प्रदर्शन के लिये धन्यवाद! पर आप खाते खाते रुक क्यों गये, कुछ और स्वाद लीजिये!

अलाउद्दीन— दिल तो नहीं भरा पर अब पेट में गुंजाइश नहीं रही।

रत्नसेन— तो फिर बताइये कि और क्या खातिर करूँ ?

अलाउद्दीन— खातिर तो कुछ नहीं, एक ख्वाहिश है। राजा साहब

नाराज़ न हों तो अर्ज़ करूं।

रत्नसेन— शहंशाह कैसी बातें करते हैं। इस समय आप हमारे मेहमान हैं, इस समय हम आपको सर देने से भी इन्कार न करेंगे।

अलाउद्दीन— फिर भी मुझे झिझक होती है।

रत्नसेन— झिझकिये नहीं, जो इच्छा हो कहिये! हम आपकी हर सेवा के लिये उपस्थित हैं।

अलाउद्दीन— तो मैं महारानी पद्मिनी के दर्शनों का इच्छुक हूँ। लाख लाख जन्नतों के उस चाँद को देखना चाहता हूँ जिसकी तारीफें सुनते सुनते मेरे कान नहीं थके। कानों सुनी कहानी अब आँखों से देखना चाहता हूँ।

रत्नसेन— बस इतनी सी बात के लिये इतना संकोच कर रहे थे। रानी पद्मिनी के दर्शनों की व्यवस्था तो मैं पूर्व ही कर चुका हूँ। सेविका! शीशमहल का पर्दा हटा दो।

राणा रत्नसेन की आज्ञा होते ही शीशमहल का पर्दा हटा दिया गया। आवरण हटते ही शीशों में स्वर्गों को भी शर्मा देने वाली महारानी पद्मिनी झिलमिलाने लगी। रत्नसेन ने पद्मिनी की ओर देख अलाउद्दीन को देखते हुए कहा— "देखिये शहंशाह! सौन्दर्य के इस खजाने को जी भर कर देखिये।"

पर अलाउद्दीन तो उस अद्भुत सौन्दर्य को देखते ही मूर्च्छित हो गये। पवित्र खूबसूरती की कौंध पड़ते ही उनको अपना पता नहीं रहा। रत्नसेन शीतल उपचारों से उन्हें चेतना में लाये। जब अलाउद्दीन को होश हुआ तो वे शीशों में पद्मिनी का प्रतिबिम्ब देखते हुए पागल से कहने लगे— "चित्तौड़ की रानी क्या है, जन्नतों की मलिका है, हूरों की हूर है, अँधेरे की रोशनी है। ऐसी खूबसूरती तो न कभी हुई होगी, न

होगी। दुनिया की सारी कीमती चीज़ें इस अनमोल खूबसूरती के सामने कुछ भी नहीं हैं। मुबारिक है राणा जी आपको! धन्यवाद है आपका कि आपने आँखों को वह दिखा दिया कि जिसे देखने के लिये ही आँखों का होना आवश्यक है।

रत्नसेन— अब और कोई इच्छा हो तो वह भी बता दीजिये!

अलाउद्दीन— शुक्रिया! बस अब विदा चाहता हूँ।

रत्नसेन— जल्दी क्या है, दो चार दिन चित्तौड़ ही ठहरिये।

अलाउद्दीन— फिर कभी आऊँगा, अब तो हमें जाने दीजिये। अगर राज-काज में हानि न होती हो तो हमारे साथ हमारे डेरे तक चलिये।

रत्नसेन— हाँ, हाँ! मैं अपने मेहमान को पहुँचाने अवश्य चलूँगा।

और फिर रत्नसेन अलाउद्दीन को पहुँचाने उनके साथ चल पड़े। राह में बादशाह साहब ने उन्हें बातों में ऐसा उलझाया कि राणा जी चलते ही चले गये। कभी कभी मनुष्य बातों में ऐसा फँसता है कि बात बिगड़ जाती है। लोहे के सींकचों से छूटना सरल है पर जो बातों के जाल में उलझ जाता है वह जितना सुलझना चाहता है उतना ही और उलझता चला जाता है।

रत्नसेन अलाउद्दीन की बातों में ऐसे उलझे कि उनके डेरों के निकट आ गये। जब अलाउद्दीन अपने घर आ गया तो उसने तेवर बदलते हुए कहा— "कहिये राजा साहब! कैसे मिज़ाज हैं?"

झटका लगते ही रत्नसेन की आँखें खुल गईं। उन्होंने जो अपने चारों ओर देखा तो नंगी तलवारें उनको घेरे खड़ी थीं और अलाउद्दीन खड़े मुस्करा रहे थे। मुस्कराते हुए बादशाह ने अपने दोस्त को देखते हुए कहा— "हमने आपको कैद कर दिया है। चित्तौड़ का रस बहुत ले चुके राजा साहब! अब दिल्ली की जेल की हवा खाइयेगा।"

रत्नसेन-- नीच, धोखेबाज़! तेरे जैसे पापियों ने ही सत्य, प्रेम और मित्रता को कलंकित कर रखा है। आज पता चल गया कि जो दुश्मन दोस्त बन कर आये वह आस्तीन का साँप होता है।

अलाउद्दीन— दुश्मन ही नहीं, दोस्त को भी जब घर में घुसा लिया जाता है तो वह भी डंक मारे बिना नहीं रहता। वह मूर्ख है जो विश्वास के भरोसे अपने को सुरक्षित समझता है।

रत्नसेन— और वह नीच है जो विश्वासघात करता है।

अलाउद्दीन— युद्ध और प्रेम में हर बात मुमकिन है। इन रास्तों पर चलने वाले पाप और पुण्य को नहीं देखते, उनके सामने केवल फतेह होती है। जबकि मैंने अपने सगे चाचा तक को कत्ल कर दिया तो तुझे कैसे छोड़ सकता हूँ! तेरे छूटने का अब केवल एक ही उपाय है, अगर तू चाहे तो तेरी जान बच सकती है।

रत्नसेन— मारने और बचाने वाला ईश्वर है, तू तो स्वयम् मौत की आग से खेल रहा है।

अलाउद्दीन— सोच लो राजा साहब! अगर पद्मिनी को हमारे हवाले करदो तो हम तुम्हें छोड़ सकते हैं।

रत्नसेन— अगर मेरे हाथ खुले हुए होते तो मैं तेरे मुँह से शब्द निकलने से पहिले ही तेरी ज़बान काट डालता। चोर, डाकू, लुटेरे! तूने बादशाह और दोस्त दोनों शब्दों को कलंकित कर डाला।

अलाउद्दीन— अगर पद्मिनी को हमारे हरम में भेजना मंजूर नहीं है तो चलो दिल्ली की जेल में चक्कियाँ पीसना।

रत्नसेन— यातनाओं से वीरों का मन नहीं हारा करता। तू जितने ज़ुल्म करेगा, ज़ंजीरें उतनी ही कमज़ोर होंगी। वह दिन दूर नहीं जब तू अपनी आग में खुद ही जल जायेगा।

अलाउद्दीन ने गुस्से से अपनी सेना की ओर देखा और फिर शान

बघारता हुआ बोला— "जफर! यह ऐसे नहीं मानेगा। डेरे उखाड़ लो और रत्नसेन को कैदी बनाकर दिल्ली ले चलो। हम हुक्म देते हैं कि एकदम दिल्ली के लिये कूच कर दो, अगर देर की तो खतरा हो सकता है!"

हुक्म होते ही अलाउद्दीन की फौज ने कूच कर दिया। खिलजी की फौज रत्नसेन को बन्दी बनाकर लिये जा रही थी और चित्तौड़ को पता तक नहीं था। आकाश देख रहा था और ज़मीन मौन थी। जब किसी पर बुरा समय आता है तो भुने तीतर भी उड़ जाते हैं। जब किसी पर बिजली टूटती है तो दोस्त भी दुश्मन बन जाते हैं। डाकुओं का जब अच्छा वक्त आता है तो पहरेदारों को भी नींद आ जाती है। चित्तौड़ के पहरेदार सो रहे थे और रत्नसेन दोस्त बने दुश्मनों की कैद में थे।

११

"यह क्या हो गया, गोराजी! यह क्या हो गया? सूरज के होते हुए अन्धकार! गोरा और बादल जैसे वीरों के होते हुए महाराज बन्दी हो गये! क्या इसी भरोसे कहा करते थे कि हमारे होते चित्तौड़ पर आँच नहीं आयेगी? क्या इसी जागरण पर आपको विश्वास था? पहरेदारों के जागते ही जागते चित्तौड़ नरेश बन्दी हो गये! अब क्या होगा सेनापति!" महारानी पद्मिनी ने तड़पते हुए कहा।

गोरा— देख लिया भलाई का परिणाम! राजपूत हारते हैं तो इसलिये कि वे राजनीति नहीं जानते। राज्य करते समय यह भूल जाते हैं कि हमारे आचार्यों ने क्या कहा है। अलाउद्दीन बुद्धि से अपनी जीत कर गया और हम छले गये।

पद्मिनी— अब तो कुछ कीजिये गोराजी! कैसे भी महाराज को छुड़ाइये। उनके बिना मैं जलहीन मछली की तरह छटपटा रही हूँ। राजमहल मुझे चूट-चूट कर खा रहा है। आभूषण मेरे शरीर पर सांपों की तरह लिपटे हुए हैं। यदि महाराज नहीं छूटे तो मैं अन्न जल छोड़

उनका नाम ले ले कर मर जाऊँगी।

गोरा— धीरज न खोओ, महारानी! जब तक महाराज को नहीं छुड़ा लूँगा तब तक मैं शान्ति से नहीं बैठूँगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अपने घर उसी दिन कदम रक्खूँगा जिस दिन राणा रत्नसेन जी को अलाउद्दीन की कारा से छुड़ा लाऊँगा।

पद्मिनी— आपके रोम रोम में विप्लव गरज रहा है, आपकी आँखों में अंगारे धधक रहे हैं, आपके हाथों में बिजलियाँ चमक चमक उठती हैं, पर मैं सोचती हूँ बुढ़ापे का यह शरीर अलाउद्दीन खिलजी की जेल से महाराज को कैसे छुड़ाकर लायेगा।

गोरा— ऐसे ही जैसे अलाउद्दीन उनको पकड़कर ले गया है। विष को विष से ही उतारा जाता है। जिस धोखे से उसने महाराज को कैद किया है उसी धोखे से गोरा उसका सिर काटेगा। इसके लिये आपको भी कुछ करना होगा महारानी!

पद्मिनी— आज्ञा दीजिये सेनापति! मैं महाराज के लिये अपने प्राण भी दे सकती हूँ।

गोरा— तो अलाउद्दीन खिलजी को एक पत्र लिखो। लिखो कि पद्मिनी अपनी दासियों सहित दिल्ली आ रही है। उसे आपके हरम में रहना स्वीकार है पर एक शर्त पर। वह यह कि आपके महल में आने से पहले वह बन्दीगृह में महाराज रत्नसेन से मिलेगी। एक बार उनके दर्शन कर वह दिल्ली की महारानी बनना स्वीकार कर लेगी।

पद्मिनी— यह कैसे हो सकता है गोराजी! मैं मन, वचन और कर्म से पतिव्रता हूँ। चाहे कुछ भी हो पर पद्मिनी के सतीत्व पर स्याही का एक कण भी नहीं लग सकता। मैं उस नीच पापी को झूठा पत्र कैसे लिख सकती हूँ?

गोरा— दुष्ट को दुष्टता से ही समझाया जा सकता है। उसने जिस

तरह राणा जी को बन्दी बनाया है उसी प्रकार हम उन्हें छुड़ा सकते हैं। तुम्हारे पत्र लिखे बिना राणा जी को छुड़ाना असम्भव है। पत्र लिखने से तुम्हें कुछ भी दोष नहीं लगेगा। जिस झूठ से अन्यायी को मिटाया जा सके वह झूठ झूठ नहीं, बुद्धि कौशल होता है। कृष्ण ने जो युधिष्ठिर से झूठ बुलवाया था वह झूठ नहीं विजय का मन्त्र था। हम राजपूत इसीलिये तो हारते हैं कि लकीर के फकीर बने हुए हैं, धर्म की शिला बने रहते हैं। मेरा कहा मानो महारानी! और अलाउद्दीन को आज ही पत्र लिखो।

पद्मिनी— फिर ?

गोरा— स्त्री स्वभाव से दुर्बल होती है, उसके पेट में बात नहीं पचा करती, इसलिये फिर का रहस्य मेरे ही पास रहने दो। कहीं भेद खुल गया तो सारा खेल खत्म हो जायेगा। कौन जाने चित्तौड़ में कोई और भी राघवचेतन हो!

पद्मिनी— पद्मिनी पर विश्वास रखो सेनापति! क्या आप समझते हैं कि मैं अपने ही पैरों में कुल्हाड़ी मार लूंगी।

गोरा— नारी जब अपना पैर काट लेती है तब उसे होश आता है। माता सीता और माता पार्वती इसके आदर्श हैं।

पद्मिनी— आप उचित नहीं समझते हैं तो मैं हठ भी नहीं करूंगी मुझे अपने सेनापति की शक्ति, भक्ति और बुद्धि पर भरोसा है।

गोरा— तो फिर पत्र लिखो और ऐसा पत्र लिखो उस शैतान को कि साँप नेवले के मुँह में फँस जाये।

पद्मिनी— यदि आप ठीक समझें तो पत्र अपनी सखी सुमुखी से लिखवा दूँ और जो कुछ पत्र में लिखना हो वह आप बोल दें।

गोरा— जैसी महारानी की आज्ञा! बुलाओ सुमुखी को।

सुमुखी आ गई और गोरा जी ने पत्र लिखवाना शुरू किया :—

बादशाह साहब !

मुझे दिल्ली की महारानी बनना स्वीकार है। मैं अपनी सात सौ दासियों के सहित आपकी मलिका बनने आ रही हूँ, पर आपके महल में आने से पहले मैं एक बार राणा जी से बन्दीगृह में मिलना चाहती हूँ। उनके दर्शन करके उनसे कह दूँगी कि मैंने अलाउद्दीन के महल में जाना मंजूर कर लिया है। यदि मुझे बादशाह साहब को देकर आपस के झगड़े मिट सकते हैं तो क्यों न मिटा डाले जायें? आपके बन्दी से इतना कहकर मैं आपके महल में आ जाऊंगी। पर मेरी और राणा जी की यह भेंट कैद में एकान्त में होनी चाहिये।

आज चित्तौड़ की
और कल दिल्ली की होने वाली रानी
पद्मिनी।

पत्र लिखवा कर गोरा जी ने बादल को बुला कर कहा— यह पत्र अभी दिल्ली अलाउद्दीन के पास भेजना है। किसके हाथ भेजें?

बादल— आज्ञा हो तो मैं जाऊँ।

गोरा— नहीं, तुम्हें और काम करने हैं। किसी बुद्धिमान और वीर सेनानी को बताओ।

बादल— तो सोहनसिंह के हाथ भेज दीजिये।

गोरा— बस ठीक है। वह चतुर भी है और वीर भी। उसे यह पत्र देकर समझाओ कि गुस्सा बिल्कुल न आये और जैसे भी हो अलाउद्दीन को यह यकीन दिलाकर लौटे कि पद्मिनी आ रही है। पत्र में जो कुछ लिखा है उसका उत्तर स्वीकृति में आना चाहिये। जाओ और पत्र देकर तुम तुरन्त ही आओ।

बादल पत्र लेकर चले गये और गोरा जी ने पद्मिनी से कहा— चित्तौड़ में चित्तौड़ के राजा नहीं हैं। इसलिये चित्तौड़ की महारानी पर

चित्तौड़ का उत्तरदायित्व आ पड़ा है। जब तक महाराज न आयें तब तक महारानी को ही राज्य सँभालना है। मुझे विश्वास है कि हमारी महारानी इस उत्तरदायित्व को प्राणों से भी अधिक मूल्यवान मान निभाने की प्रतिज्ञा करेंगी।

पद्मिनी— प्रतिज्ञा करूँगी नहीं, कर चुकी हूँ। जब तक पद्मिनी जीवित है तब तक चित्तौड़ में परिन्दा भी पर नहीं मार सकता। चित्तौड़ की एक एक वीरांगना चित्तौड़ की रक्षार्थ तलवार लिये द्वार पर तैयार है।

गोरा— तो फिर चित्तौड़ की चोटी विजय गीत के साथ साथ महारानी पद्मिनी की जय के गीत गौरव से गाती रहेगी। लो, वे बादल जी भी आ गये।

गोरा— आओ बादल, पत्र भिजवा दिया?

बादल— हाँ, चाचा जी!

गोरा— तो अब सात सौ चुने हुए जवानों को अस्त्र शस्त्रों सहित तैयार करो! ये सात सौ वीर सैनिक वे हों जो दिल्ली की लाख लाख सेना से लड़ सकें।

बादल— फिर?

गोरा— फिर, फिर बताऊँगा। जाओ और जवानों को सुसज्जित करो। जैसे ही अलाउद्दीन का उत्तर आये तुम तुरन्त मेरे पास आना।

बादल— जो आज्ञा।

गोरा— और सुनो, अपने कुछ विश्वस्त गुप्तचर वेश बदल कर दिल्ली रहें और वहाँ की जो भी विशेष बात हो उससे हम परिचित रहने चाहियें।

बादल— ऐसा ही होगा, चाचा जी!

गोरा— तो तुम जाओ, ऐसी चतुरता से काम करना कि पराजय जय में बदल जाए।

प्रणाम करके बादल चले गए और गोरा जी सोचने लगे। वे सोच ही रहे थे कि पद्मिनी ने चमत्कृत होकर कहा— जान पड़ता है आपत्तियों के पहाड़ जब टूटने लगते हैं तो चारों ओर से टूटते हैं।

गोरा— यह तो है ही, पर जो तूफानों से लड़ नहीं सकता उसे दुनिया में रहने का अधिकार नहीं है। साहस की परीक्षा आपत्तिकाल में ही होती है।

पद्मिनी— और अपने तथा पराये की परीक्षा भी समय पड़ने पर ही होती है। इस समय जब कि चारों तरफ से लपटें लपक रहीं हैं तब आप ही तो हमारे सहारे हैं।

गोरा— मैं तो कर्त्तव्य पालन कर रहा हूँ महारानी! देशभक्ति मेरी ज़िन्दगी की सबसे बड़ी पूजा है।

पद्मिनी— जिस दिन देश में आप जैसे कर्त्तव्य-पालक देशभक्त एक प्रतिशत भी हो जायेंगे उस दिन देश को किसी भी आक्रमण का भय नहीं रहेगा। इस अँधेरे में आप ही तो हमारे लिये उजाले हैं।

गोरा— बहुत ही भयभीत जान पड़ रही हो महारानी! क्षत्राणी होकर दुर्बल न बनो।

पद्मिनी की पलकें भीग गईं। वह आंचल से आंखें पोंछती हुई बोली— "जब से जीवन में कदम रक्खा है तब से आक्रमण ही आक्रमण हो रहे हैं। जान पड़ता है मैं ही चित्तौड़ के लिये तबाही हूँ।"

गोरा— पराजय में मनुष्य इसी प्रकार दुर्बल हो जाया करता है।

पद्मिनी— नहीं, मैं देख रही हूँ कि चित्तौड़ पर मेरे ही कारण आक्रमण हो रहे हैं।

गोरा— वह विदेशी आक्रान्ता लूट मार पर तुला हुआ है, पर

उसे पता चल जायेगा कि वीरता के सामने डाकुओं की तलवार टूक टूक हो जाया करती है।

पद्मिनी— अलाउद्दीन ही क्या, अपने भी तो शत्रु बने हुए हैं। कल कुम्भलनेर के राजा देवपाल ने दूती भेजी थी। उसने कहा कि रत्नसेन तो बन्दी हो गये, अलाउद्दीन उनको कभी न छोड़ेगा, तुम राजा देवपाल से विवाह कर लो, वह तुम्हें अपनी महारानी बना लेगा।

गोरा— तुमने उस दूती की जीभ नहीं काटली!

पद्मिनी— उसने बात कुछ ऐसे ढंग से कही कि मैं किंकर्त्तव्य-विमूढ़ सी हो गई।

गोरा— यार लोग घात लगाये बैठे रहते हैं, अवसर पाते ही वे चोट कर देते हैं। पर कुछ बात नहीं, डरो मत रानी! पहले अलाउद्दीन को सुलट लूं, फिर देवपाल को भी देख लूँगा।

पद्मिनी— इससे तो अच्छा हो कि मैं कुरूप हो जाऊँ।

गोरा— नहीं, महारानी जी! सौन्दर्य तो संसार की सबसे अधिक आराध्य वस्तु है, सौन्दर्य न हो तो सृष्टि की चेतना ही न रहे।

पद्मिनी— अब तो जी चाहता है कि सुन्दरता की राख कर डालूँ।

गोरा— आत्महत्या करना चाहती हो?

पद्मिनी— लाचारी में और मनुष्य कर ही क्या सकता है?

गोरा— विधि का विधान बदल सकता है, दुर्भाग्य को सौभाग्य बना सकता है। हारी बातें न करो महारानी! मुझ बूढ़े को देखो, कौनसा वह दुःख है जो मुझ पर नहीं टूटा? पर फिर भी शान्त हूँ, साहस नहीं छोड़ा। यदि मनुष्य हिम्मत भी हार बैठे तो उसके पास फिर कुछ नहीं रहता। तुम तो भारत माता की साक्षात् मूर्ति हो महारानी! हम देश-भक्त प्राण दे देंगे पर अपनी भारत माता का सम्मान नहीं देंगे।

पद्मिनी— जिस देश के पुजारियों में इतनी आग है उसकी ज्योति कौन बुझा सकता है? जाओ गोरा जी! मौत बन कर शत्रुओं पर छा जाओ। सत्य और सौन्दर्य की महाचण्डी खप्पर लिए तुम्हारे साथ साथ रहेगी। मैं अग्नि हूँ, जब मेरी प्यास बुझ जायेगी तो आग आग में स्वाहा हो जायेगी।

गोरा— तुम्हें क्या होने लगा है महारानी! कहीं तुम बहक तो नहीं रही हो?

पद्मिनी— नहीं, गोरा जी! यह शक्ति का आवेश था। नारी शक्ति का स्वर ही तो है सेनापति!

गोरा— यदि दुर्ग की देख रेख आप करलें तो मैं तनिक शिविर तक हो आऊँ।

पद्मिनी— निर्भय होकर जाओ सेनापति! पद्मिनी के होते चित्तौड़ दुर्ग का मस्तक कभी नहीं झुकेगा।

अभिवादन कर गोरा जी चले गये और पद्मिनी अपने महल से उस चौक में आई जहाँ चित्तौड़ का महिला समाज उपस्थित था। रानी को देखते ही सब खड़ी हो गईं और एक स्वर से बोल उठीं— "महारानी पद्मिनी की जय! चित्तौड़ की अमर शक्ति की जय!"

जयकारा दुर्ग की दीवारों से निकल आकाश मण्डल में गूंज उठा।

पद्मिनी उन देवियों के मध्य महादेवी सी खड़ी हो गई, मानो तारक मण्डल में चन्द्रमा चमक उठा। नागमती पद्मिनी के पास ही खड़ी थी। पद्मिनी ने नागमती को श्रद्धा से देखा और कहा— 'तुम धन्य हो बहिन! चित्तौड़ की रक्षा के लिये इन बहिनों को इकट्ठा करके तुमने एक ऐतिहासिक कार्य किया है।'

नागमती— देश और जाति के लिये प्राणपण से तत्पर रहना तो नारियों का सबसे बड़ा धर्म है। चित्तौड़ की हर महिला में आज पुरुषों से अधिक उत्साह है।

पद्मिनी ने चौक में ठसाठस खड़ी हुई देवियों को देखा और उदित होते हुए सूर्य की तरह अरुण होकर बोली—

"आप जानती हैं कि विदेशी आक्रान्ता अलाउद्दीन ने तुम्हारे महाराजा को छल से बन्दी बना लिया है। चित्तौड़ को वह दास बनाना चाहता है और चाहता है कि तुम्हारी रानी पद्मिनी को अपने महल में ले जाये। बोलो, क्या तुम्हें यह स्वीकार है?"

उत्तर में "नहीं" दशों दिशाओं में गूँज उठा, और फूलों की पंखुड़ियों से हाथ तलवारों की मूठ पर चले गये।

पद्मिनी— तो फिर एक हाथ में तलवार और दूसरे में आग लेकर तैयार हो जाओ। या तो जय या जौहर, अब दो ही रास्ते हैं।

आवाज़— हम तैयार हैं।

पद्मिनी— तो फिर हमारी हार नहीं हो सकती। हार उसकी होती है जो हिम्मत हार बैठता है। शत्रु की तलवारें चाहे गर्दन पर भी क्यों न हों पर जो आन पर हैं वे डिगा नहीं करते। मरना एक दिन सभी को है। काल ने किसको नहीं खाया? किन्तु जो कायरता से मरते हैं इतिहास उन्हें धिक्कारता है और जो वीरगति को प्राप्त होते हैं वे अमर हैं। मृत्यु वास्तव में कुछ भी नहीं है, एक मीठी नींद मात्र है। मौत के बाद जब आँखें खुलती हैं तो आदि शक्ति से जीवन नया होकर जगमगाता है। इसलिये मौत को खेल समझकर तलवारों से खेलने के लिये तैयार हो जाओ, शत्रुओं को बतादो कि भारत की बेटियाँ फूलों की सुगन्ध भी हैं और आग की लपटें भी। सर रहते

चित्तौड़ का सर न झुकने पाये। आक्रान्ता का कदम आगे न बढ़ने दो! एक एक क्षत्राणी हजार हजार हो दुर्ग की दीवार बन बनकर खड़ी हो जाओ।

नागमती— अवसर आ गया है, देश के लिये बलिदान होने का सौभाग्य बार बार नहीं मिला करता। आज हमारी परीक्षा है, यदि उत्तीर्ण हुईं तो नारी जाति के गौरव के उज्ज्वल अक्षर भू-मण्डल पर सोने से खुदे हुए होंगे। भारत की वीर नारियो! चित्तौड़ की ऊँची चोटी पर अपने रक्त से एक नया इतिहास लिख दो। लिख दो कि आक्रान्ता वीराङ्गनाओं से हार गया। लिख दो कि चित्तौड़ की वीराङ्गनाओं के समक्ष लुटेरों की कोटि कोटि सेना ने हथियार डाल दिये! लिख दो कि देश के लिये नारियाँ पुरुषों से आगे रहीं। यह एक नया त्यौहार है, इस त्यौहार पर हाथों में मेंहदी नहीं, खून लगाना है। जिसे अपनी जान प्यारी हो वह वापिस चली जाये और जिसे चित्तौड़ प्यारा है वह आग में कूदने के लिये हमारे साथ रहे। बोलो, क्या उत्तर है?

उत्तर में सहस्र सहस्र देवियों का एक ही स्वर दिग्दिगांतरों में फैल उठा— "शंख बजाने की प्रतीक्षा है। इङ्गित होते ही हम भूखी सिंहनियाँ आक्रान्ताओं पर टूट पड़ेंगी। आज्ञा होते ही हम आग में कूदने को शृंगार किये खड़ी हैं।"

नागमती— वीराङ्गनाओं की यह सेना उपस्थित है पद्मिनी! नारी सेना की सेनाध्यक्षा आप ही रहेंगी। अब आप हमारा संचालन और उपयोग कीजिए!

पद्मिनी— जब तक आपत्तिकाल है तब तक आप सबको दुर्ग के पहरे पर रहना है। संकटकालीन स्थिति में आप सब सजग रहें। जो शस्त्र चलाना नहीं जानती हैं उनको मैं इसी चौक में शस्त्र शिक्षा

दूंगी। गोरा जी स्वयं हमें तलवार चलानी सिखाने आयेंगे। अब आप सब पचास पचास की टुकड़ी में विभक्त हो जायें। बड़ी बहिन, तुम नारी-सेना-शिविर की देख-रेख करो, मैं बाहर की गति विधि का पता लगाती हूँ।

चित्तौड़ में वीरांगनाओं का सेना शिविर खुल गया। कोमल कोमल हाथों में तलवारें चमक उठीं। चित्तौड़ पर संकट के बादल अँधेरा कर रहे थे और उन मेघों में बिजली की रेखायें सी कौंध रही थीं। भारत की बेटियों के उत्साह का वह अद्‌भुत दृश्य था। उधर देश की आन पर जान देने की तैयारियां थीं और इधर भविष्य वीरता के उस स्वर्णिम इतिहास को कल्पना के गुलदस्ते में सजाने को उत्सुक था।

१७

"सोहनसिंह दिल्ली से आ गये महारानी! अलाउद्दीन ने आपकी शर्त स्वीकार कर ली है। अब हम राणा जी को छुड़ा लेंगे!"

गोराजी ने युद्ध के बाने में सुसज्जित पद्मिनी के सामने प्रसन्नता से कहा। नंगी तलवार हाथ में लिये पद्मिनी ने अधरों की मुस्कान और भवानी के रोष की कौंध में दमकते हुए वीरता से कहा— "जब तक पद्मिनी के हाथ में शक्ति और गोरा जी के हाथ में हमारा नेतृत्व है तब तक महाराज की मुक्ति ही नहीं, अलाउद्दीन को उसके किये की सज़ा भी देनी है।"

गोराजी— शत्रु शक्तिशाली है, उसे तलवार से बाद में, बुद्धि से पहले जीतना है। तलवार को यदि कोई परास्त करने वाली शक्ति है तो वह बुद्धि ही है।

पद्मिनी— मुझे अपने सेनापति की बुद्धि पर भरोसा है। हम तो आपकी आज्ञा पर चलने वाले सैनिक हैं। कहिये, सोहनसिंह ने दिल्ली की क्या कहानी सुनाई?

गोरा— उसने अलाउद्दीन को हमारा सन्देश दिया। बादशाह तुम्हारा पत्र पाते ही उछल पड़ा। उसने तुम्हारी हर शर्त स्वीकार करली। तुम्हारे रूप का उस पर भयंकर जादू चढ़ा हुआ है। अब हम सात सौ डोलियां लेकर दिल्ली जायेंगे।

पद्मिनी— क्या सचमुच पद्मिनी की डोलियां दिल्ली जायेंगी?

गोरा— जायेंगी, किन्तु डोलियां में असली पद्मिनियां नहीं, नकली पद्मिनियां होंगी। सात सौ डोलियां में सात सौ चुने हुए राजपूत होंगे और एक डोली में लुहार भी होगा। पद्मिनी की पोशाक पहने वह लुहार बन्दी-गृह में महाराज से मिलेगा, वह महाराज की हथकड़ियां बेड़ियां काट उन्हें मुक्त कर देगा और स्वयं बन्दी बनकर बन्द हो जायेगा। इस तरह हम महाराज को छुड़ा लेंगे।

पद्मिनी— और अगर पहले ही भेद खुल गया तो?

गोरा— जो पहले ही शंका कर बैठते हैं वे कायर होते हैं। तुम तो वीर क्षत्राणी हो पद्मिनी!

पद्मिनी— आपकी राजभक्ति के सामने मेरा रूप और सतीत्व भी तुच्छ है सेनापति!

गोरा— अच्छा दिल्ली जाने की तैयारी करता हूँ। दुर्ग की देख-रेख तुम्हें करनी है। सावधान रहना पद्मिनी! आस-पास भी शत्रुओं की कमी नहीं है, कहीं अवसर की प्रतीक्षा में बैठे डाकू कोई नया फूल न खिला दें! इसलिये बहुत ही सावधान रहने की आवश्यकता है।

पद्मिनी— जिस प्रकार लक्ष्मण ने राम की रक्षा में पहरा दिया था उसी प्रकार मैं चित्तौड़ के पहरे पर जागती रहूँगी।

गोरा— तो मैं चला। जय शंकर!

पद्मिनी के महल से निकल वीरवर गोरा वहाँ आये जहाँ बादल

सात सौ चुने हुए वीरों सहित उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। गोराजी को देखते ही राजपूतों ने सैनिक अभिवादन किया और बादल ने उत्साह से कहा— "आपकी आज्ञानुसार चित्तौड़ के सात सौ वीर योद्धा और सात सौ डोलियां तैयार हैं।"

गोरा— लुहार भी आ गया?

बादल— लुहार की क्या आवश्यकता है, चाचा जी! सबसे अगली डोली में बादल रहेगा। महाराज की हथकड़ियाँ बेड़ियाँ काटने के लिये मेरे हाथ की तलवार काफी है।

गोरा— तुम अभी नौजवान हो। जवानी के आवेश में जब नीति को भूल जाते हैं तो जय पराजय में बदल जाती है। यह सत्य है कि तुम्हारी तलवार सख्त से सख्त लोहा भी काट सकती है, किन्तु जो काम जिसका है वह काम उसी के द्वारा कुशलता से हो सकता है। हम दुश्मन के घर में होंगे, यदि उसके कान में तनिक भी भनक पड़ गई तो न महाराणा छूटेंगे और न हम में से एक भी जीवित लौटेगा। इसलिये अच्छा यह है कि शत्रु को तब होश आये जब महाराज चित्तौड़ तक आ लें।

बादल— यह कैसे हो सकता है, चाचा जी! आखिर बन्दीगृह पर नंगी तलवारों का पहरा होगा।

गोरा— इसीलिये तो पद्मिनी के वेश में लुहार को भेज रहा हूँ। वह स्वयं राणा जी के स्थान पर बन्दी होकर रह जायेगा और महाराज जैसे ही पालकियों के पास आयेंगे उनको घोड़े तैयार मिलेंगे।

बादल— किसी प्रकार महाराज बाहर तक आ जायें, फिर किसकी शक्ति है कि उन्हें चित्तौड़ आने से रोक सके!

गोरा— यह बात बाद की है, पहले यह बताओ कि लुहार कच्चा

तो नहीं है? क्योंकि जैसे ही रहस्य खुलेगा वैसे ही अलाउद्दीन उसके टुकड़े टुकड़े कर डालेगा।

बादल— चित्तौड़ की मिट्टी में आज तक कोई कच्चा पैदा ही नहीं हुआ है। राघवचेतन हमारे यहाँ सबसे पहला उदाहरण था, उसने अपने किये का फल पा लिया।

गोरा— तो अब विलम्ब की आवश्यकता नहीं। भगवान शंकर का स्मरण कर कूँच कर दो। डोलियों के साथ मैं भी चलूंगा।

बादल— सात सौ डोलियों में सात सौ योद्धा होंगे। एक एक डोली उठाने वाले चार चार वीर राजपूत कहार बने हुए होंगे। इस प्रकार साढ़े तीन हजार वीर सैनिकों के होते हुए चाचा जी को इस बुढ़ापे में कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता है?

गोरा— मोर्चा सख्त है। जब चित्तौड़ की सारी शक्ति दिल्ली पर आक्रमण कर रही है तो सेनापति घर में कैसे रुक सकता है? मैं चलूंगा।

बादल— मैं और आप दोनों ही चले गये तो चित्तौड़ की रक्षा कैसे होगी? पड़ौस में भी तो शत्रु बसे हुए हैं।

गोरा— चित्तौड़ की रक्षा के लिये वीर क्षत्राणियाँ पहरे पर सजग हैं। मैंने सब कुछ सोच लिया है। यहाँ की चिन्ता छोड़ पहले उस लक्ष्य की ओर चलो।

और फिर उसी दिन झनकार करती हुई सात सौ डोलियाँ दिल्ली की राह पर दिखाई देने लगीं। आकाश में जब तारे निकले, संध्या जब रात की गहराई में अँगड़ाइयाँ लेने लगी, नीड़ों में जब पक्षी सो गये, तब ठुमक ठुमक सात सौ पालकियाँ आगे बढ़ती जा रही थीं। मंज़िल पर मंज़िल तय करती हुई, पेड़ों की छाया में आराम करती हुई, हृदय में अथक उत्साह लिये बढ़ती हुई शिविकायें दिल्ली के निकट

गुड़गावां के जंगलों में आ पहुँचीं।

पड़ाव पर पहुँचते ही गोरा जी ने एक सैनिक को आज्ञा दी कि दिल्ली दरबार में जाकर कहो कि हजारों चाँद और सूर्य को शर्मा देने वाली पद्मिनी अपनी सात सौ सेविकाओं सहित आपकी सेवा के लिये आ गई हैं। महारानी पहले अपने पति महाराज रत्नसेन से भेंट करेंगी और फिर आपके हरम में आ जायेंगी।

× × ×

अश्व पर सवार हो दूत के वेश में सैनिक दिल्ली दरबार में पहुँचा। तख्त पर फख्र से पधारे हुए अलाउद्दीन खिलजी को उसने नीचे से ऊपर तक देखते हुए कितने ही अभिवादन किये और बादशाह की तारीफें करता हुआ बोला— "साहिबे आलम, जहांपनाह, नूरेजहां, हुजूरे अनवर! जिससे ज्यादा खूबसूरत आपके राज्य में कोई तोफा नहीं, वह रात को अपने रूप से रोशन करने वाली महारानी पद्मिनी आपके हरम में आने के लिये दिल्ली आ पहुँची हैं। रानी पहले महाराज रत्नसेन से मिलकर उनसे कहेंगी कि मैं आपको छोड़कर दिल्ली सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी की बेगम बनने जा रही हूँ। क्योंकि रानी को सबके सामने अपने पति से साफ साफ कहने में संकोच होता है, इसलिये उनकी महाराज से एकान्त में भेंट कराने की कृपा की जाये।"

सुनते ही अलाउद्दीन फूल कर कुप्पा हो गया। पद्मिनी का आगमन सुनते ही वह सब कुछ भूल गया। उसने शराबी की तरह हँसते हुए कहा— "रानी पद्मिनी को कैद में राजा रत्नसेन से मिलने जाने की इजाज़त है। हम हुक्म देते हैं कि रानी साहिबा जिस समय राजा साहब से मिलें उस समय वहाँ पूरा पर्दा रहे। कोई भी मर्द, बच्चा वहाँ नहीं रहना चाहिये। हमें खुशखबरी सुनाने वाले दूत को अशरफियाँ इनाम में दी जायें। जाओ सफीर! अपनी महारानी से

कहना कि जैसे ही वे हमारे हरम में आयेंगी वैसे ही हम राजा रत्नसेन को छोड़ देंगे और दिलोजान से उनके हमदर्द रहेंगे। चित्तौड़ से हमारा हमेशा के लिए रिश्ता कायम हो जायेगा, फिर किसी की ताकत न होगी कि चित्तौड़ की तरफ आँख उठा सके।"

बादशाह खुशी में मन ही मन उछलने लगे और दूत चला गया। स्वप्न का सुख भी कितना मीठा होता है! पद्मिनी को पाने की उम्मीद ने अलाउद्दीन को सुनहरी स्वप्नों के जाल में बाँध लिया। उन्हें क्षण क्षण काटना भारी होने लगा। पद्मिनी आती ही होगी, इस आशा में वह सुध बुध खो बैठा। न जाने नारी में ईश्वर ने कौनसा जादू भरा है कि पुरुष पागल हो जाता है! इस मधुरता में कितना सरस विष होता है! जब किसी सौन्दर्य की ओर मन लपकता है तो वह रोके नहीं रुकता। लोहे की जंजीरें कट जाती हैं पर अलकों के फन्दे फाँसी से भी भयंकर होते हैं। पलकों की कैद लोहे के किवाड़ों से भी कठोर होती है। जो किसी रूप की नदी में कूद पड़ता है वह मँझधार में चक्कर ही काटता रहता है। वह जितना तैरता है किनारा उतना ही दूर हट जाता है। जो रूप को जीतना चाहता है वह अपना सब कुछ हार बैठता है। वह हारा हुआ जुआरी जिस जीत को लेकर जीना चाहता है, वह जीत ज्वाला भरी होती है, जो प्रेम के शीतल जल से शान्त होती है और शक्ति के बलात् प्रयोग से धधक धधक कर जलती हुई जीतने वाले को जला देती है।

अलाउद्दीन को पद्मिनी के रूप जाल में बेहोश देख जफर ने दरबार में बेअदबी करते हुए कहा— "गुस्ताखी माफ हो आलमपनाह! दुश्मन की औरत पर एकदम यकीन करना हम बर्दाश्त नहीं कर सकते। कहीं हमारी यह भूल हमें तबाह न कर दे। कहीं रानी पद्मिनी को पाते पाते हमें दिल्ली से ही हाथ धोना न पड़ जाये।"

अलाउद्दीन— ऐसा मत सोचो जफर! राजपूत ईमानदार होते हैं।

जफर— पर हमने उन्हें बेईमानी सिखा दी है। उन्होंने वह रास्ता देख लिया है जिस पर चलकर हमने बहादुर रत्नसेन को गिरफ्तार किया था। आदमी जन्म से बेईमान नहीं होता, दुनिया के बेईमान उसे बेईमानी सिखा देते हैं। बच्चे में कोई गुनाह नहीं होता, गुनाह तो उन बड़ों में में होता है जिनको देखकर वे गुनाह करने लगते हैं।

अलाउद्दीन— तो इसका मतलब यह हुआ कि हमारे बहादुर सिपह-सालार हम पर इल्ज़ाम लगा रहे हैं।

जफर— नहीं, जहाँपनाह!

अलाउद्दीन— तो फिर क्या मतलब?

जफर— खादिम यह अर्ज़ करना चाहता है कि हमने जिस दांव से दुश्मन को जीता है, यह नहीं भूलना चाहिये कि हारा हुआ दुश्मन भी वह दांव जानता है। राजनीति का सबसे बड़ा उसूल यह है कि दुश्मन की तरफ से जो भी प्रस्ताव आये वह उसी रूप में कभी स्वीकार नहीं किया जाये। चोट खाया हुआ शत्रु जो भी प्रस्ताव भेजता है उसमें कोई न कोई ऐसा राज़ छिपा रहता है जो बड़े बड़े सिपहसालार भी नहीं समझ सकते। जीते हुए दुश्मन को हारे हुए दुश्मन से बहुत होशियार रहना चाहिये। कहीं ऐसा न हो कि हम ऐसे ही फँस जायें जैसे रत्नसेन हमारी कैद में है।

अलाउद्दीन— मैं नहीं समझा कि हमारे बहादुर सिपहसालार इतने डर क्यों रहे हैं। रत्नसेन को पकड़ लेने के बाद चित्तौड़ में अब ताकत ही क्या रह गई है? और फिर इस वक्त तो दुश्मन हमारे घर है, हम तो दुश्मन के घर में नहीं हैं। चित्तौड़ की औरतें दिल्ली आई

हैं। इतिहास में यह एक मशहूर बात होगी कि चित्तौड़ की रानियों ने खिलजी के हरम में खुशी से आना मंजूर किया।

जफर— यही तो एक बड़ा ताज्जुब है कि जो क्षत्राणियां अपने सतीत्व के लिये पति के साथ जीवित सती हो जाती हैं, उन्होंने आपके हरम में आना मंजूर कैसे कर लिया? कैसे पद्मिनी इस बात पर राजी हो गई कि मैं अपना धर्म छोड़कर किसी दूसरे मजहब के बादशाह को अपना खाविंद मानती हूँ? मुझे बड़ा ही आश्चर्य है, ज़रूर इसमें कोई चाल है।

अलाउद्दीन— चाल क्या हो सकती है, हमारे आदमियों ने खुद अपनी आंखों से डोलियां देखी हैं।

जफर— डोलियां देखी हैं, डोलियों के अन्दर तो नहीं देखा है।

अलाउद्दीन— हमारी खुफिया ने डोलियां देखकर हमें पहले ही खबर दे दी है कि डोलियों में औरते हैं।

जफर— खुफिया से भी खबरदार रहना जरूरी है। दोस्तों को दुश्मन बनते देर नहीं लगती। ज़र, जोरू और ज़मीन का ऐसा झगड़ा है कि जिसमें किसी का भी यकीन नहीं किया जा सकता। और तो क्या, इस मामले में जहांपनाह को मेरा भी यकीन नहीं करना चाहिये।

अलाउद्दीन— आज तुम्हें क्या हो गया है जफर! जो औरतों से डरे जा रहे हो।

जफर— हां साहिबे आलम! मैं मर्दों से नहीं डरता, पर औरतों से बहुत डरता हूँ। इन काली नागिनों के डंक से बचने वाला तो कोई भी नहीं देखा। बड़े बड़े फकीर भी इन न तराशने वाली तलवारों से कट जाते हैं। तलवार जब तराशती है तो खून निकलता है, पर जब औरत काटती है तो बलि का बकरा आह तक नहीं भरता।

अलाउद्दीन— मैं तो नहीं डरता, फिर भी तुम जैसे कहो वैसा किया जाये।

जफर— कुरबानी का बकरा हरी घास खाता हुआ यह नहीं सोचता कि दूसरे ही क्षण तेरी मौत आ रही है। इसीलिये आप नहीं डरते, जहाँपनाह! इसलिये मेरी बात मानिये और होशियार हो जाइये।

अलाउद्दीन— तो जो तुम कहो वह किया जाये, लेकिन हम पद्मिनी को जरूर पाना चाहते हैं।

जफर— आपकी खुशी के लिये तो बन्दा अपना सर तक कटा सकता है, पर न जाने क्यों मेरे दिल में खटका हो रहा है। इसलिये उन आई हुई डोलियों का इस तरह घेरा डलवा दिया जाये कि आपके मेहमानों को यह पता भी न चले कि हम घेरे में हैं। अगर किसी वक्त कोई नया गुल खिले तो हमारा कुछ बिगड़ न सके।

अलाउद्दीन— हमारी हिफाज़त जैसे भी हो कर सकते हो।

जफर— तो मैं अभी फौज में जा रहा हूँ, आप बेफिक्र रहें। हर मोर्चे पर दुश्मन घिरा हुआ रहेगा।

कहते हुए जफर जोश में भरे अपनी फौज के बीच में आये। एक फौजी को भेज उन्होंने गुप्तचर सरदार को फौरन घर से बुलाया।

सिपहसालार का हुक्म मिलते ही खिलजी राज्य का प्रसिद्ध गुप्तचर याकूब हाजिर होगया। जफर ने याकूब को अपने करीब बैठाते हुए कहा— तुम अच्छी तरह से होशियार तो हो न?

याकूब— हाँ, हुजूर! यदि कोई नई बात हो तो हुकुम कीजिये।

जफर— हमें चित्तौड़ से आई हुई डोलियों पर शक है। हम चाहते हैं कि तुम डोलियों के आस पास मजबूती से खुफिया पुलिस लगा दो। जैसे ही तुम्हें कोई खास बात मालूम हो, तुम हमें टीलों के पीछे खबर दे देना, हम खुद फौज ले वहाँ छिपे रहेंगे।

याक़ूब— क्या शक है हुजूर को ?

जफर— मैं यह नहीं समझा कि चित्तौड़ की अकेली रानी की सात सौ दासियां। एक औरत चाहे तो दुनिया को तबाह कर सकती है। ये सात सौ बलायें तो न जाने क्या कर डालें!

याक़ूब— भला औरतें क्या कर सकती हैं, हुजूर! आप बेकार परेशान हो रहे हैं। आराम से सोइये, मैं सब ठीक किये देता हूँ। मेरे पास जासूत औरतें भी हैं। मैं उन्हें डोलियों के करीब भेजे देता हूँ।

जफर— हां, जाओ और यह काम फौरन करो। मैं भी टीलों के पीछे फौज लेकर जाता हूँ।

याक़ूब चला गया और जफर अपनी फौज ले टीलों के पीछे जा छिपा।

१३

किले से दूर और बन्दीगृह के पास सात सौ डोलियों में राजपूतों के भुजदण्ड फड़क रहे थे। बादल के हृदय में उत्साह की हिलोरें उठ उठ कर यमुना की लहरों से होड़ ले रही थीं। वेश बदलते हुए गोरा एक बूढ़े धीवर के रूप में बड़े ही पुष्ट दीख रहे थे। पतले पतले छरहरे बदन वाले वीर कुमारों से कामिनियों का शृङ्गार किये यमुना तट पर गोपियों की याद दिला देते थे।

गोरा ने बादल के पास आ धीरे से कहा— अब क्या करना चाहिये?

बादल— बन्दीगृह पर धावा।

गोरा— किन्तु बिल्कुल चुपचाप और बड़े रहस्यपूर्ण ढंग से।

बादल— पद्मिनी वेशधारी लुहार को साथ लेकर मैं राणा जी से मिलने जेल में जाता हूँ और वहीं से महाराज को मुक्त करके अपने साथ लेता आऊँगा।

गोरा— बन्दीगृह पर सख्त पहरा है।

बादल— तो फिर क्या करें ?

गोरा— वहां पहरेदारों से दो दो हाथ अवश्य करने पड़ेंगे।

बादल— पहरेदारों को तो देख लेंगे, किन्तु कहीं शाही फौजें आ गईं तो ?

गोरा— यही तो सोचना है।

बादल— कहीं सोचते ही सोचते हम संकट में न पड़ जायें। जो कुछ करना है जल्दी करना चाहिये।

गोरा— जब ओखली में सिर दे दिया तो मूसलों से क्या डरना ? आग में कूदे बिना अब आग नहीं बुझेगी।

बादल— तो आज्ञा कीजिये !

गोरा— जेल में महाराज के पास मैं जाऊँगा।

बादल— किस तरह ?

गोरा— सिर्फ दो चार साथियों के साथ।

बादल— इतने प्रहरियों में आप दो चार का निकलना कठिन है।

गोरा— कमजोर बात मुंह से न निकालो, मैं जो कहता हूँ वह सुनो !

बादल— क्षमा कीजिये चाचा जी !

गोरा— ज़रा धीरे से बोलो, दीवारों के भी कान होते हैं।

बादल— यहां दीवार तो क्या चिड़िया का बच्चा भी नहीं है।

गोरा— जो शब्द मुंह से निकलता है हवा उसे उड़ा कर ले जाती है। हम इस समय चारों ओर से घिरे हुए हैं, जरा भी संदेह हुआ तो उत्थान पतन में बदल जायेगा। यहाँ वीरता से अधिक बुद्धि की आवश्यकता है।

बादल— विवेक-शून्य बल तो पशु बल होता है चाचा जी !

गोरा— पर हम राजपूत यह नहीं जानते।

बादल— तभी तो हम पराधीन होते जा रहे हैं।

गोरा— दुश्न को दुश्मन के ही शस्त्र से मारना चाहिये।

बादल— जैसे को तैसा, यही तो नीति है।

गोरा— तो फिर सुनो, मैं महाराज के पास बन्दीगृह में जाऊँगा और तुम भी स्त्रीवेषधारी पचास जवानों के साथ मेरे साथ चलो।

बादल— यहां कौन रहेगा, सेना संचालन कौन करेगा।

गोरा— अब हमारा प्रत्येक सैनिक एक सेना है और वही सेनापति भी है। तुम मेरे साथ कारा के द्वार पर चल तुरन्त प्रहरियों को समाप्त कर दो और उनके स्थान पर अपने सैनिक पहरे पर लगा दो। तुम इधर पहरे पर रहना, मैं महाराज को छुड़ा लाऊँगा।

बादल— शेष सेना को क्या आदेश है?

गोरा— पचास जवान उन कसे हुए घोड़ों पर जो दूर पर पेड़ों के पीछे छिपे हुए हैं तैयार रहें। जैसे ही महाराज वहाँ पहुँचे वे उन्हें चित्तौड़ ले जायें।

बादल— और बाकी वीर कहाँ रहें?

गोरा— सामने की ओर जिधर से दिल्ली की सेना के आने की सम्भावना हो सकती है। अगर भेद खुल जाये और दिल्ली की फौज आ धमके तो 'जय एकलिंग' का घोष करते हुए दुश्मनों से भिड़ जाना, पर जब तक एक भी राजपूत जीवित रहे तब तक खिलजी फौज उधर न जाने पाये जिधर से महाराज चित्तौड़ जायेंगे।

बादल— ऐसा ही होगा चाचा जी!

गोरा— बेटा बादल! तू चित्तौड़ का गौरव है। चाहे कुछ न रहे पर हमारी देशभक्ति अमर रहनी चाहिये।

बादल— अमर रहेगी चाचा जी! अमर रहेगी। बादल के रहते चित्तौड़ का गौरव कभी नहीं झुकेगा। प्राण चाहे चले जायें पर वह मिट्टी

नहीं मिटेगी जिसमें हम देश-भक्तों का रक्त पड़ा होगा। बादल गौरव की जिन्दगी जिया है और गौरव की मौत ही मरेगा।

गोरा— तो आ बेटा! तुझे अपनी छाती से लगा लूं, पता नहीं फिर मिलना हो या न हो?

बादल— आप कुछ अधीर क्यों हो रहे हैं, चाचा जी!

गोरा— पता नहीं क्यों मन उमड़ रहा है! तू ही तो मेरी आँखों का दूसरा चित्तौड़ है बेटा! गोरा की आँखों के चित्तौड़ और बादल दो ही तो तारे हैं।

कहते हुए गोराजी ने बादल को छाती से लगा लिया। वे उसे अपने वात्सल्य से सींच ही रहे थे कि सहसा रोने चिल्लाने की आवाज ने उनका ध्यान भंग कर दिया— "हाय! लूट लिया, मार डाला। बचाओ, मुझे बचाओ!"

बादल ने चौंकते हुए कहा— किसी स्त्री की आवाज़ जान पड़ती है।

गोरा— हाँ।

और दूसरे ही क्षण उन्होंने देखा कि चार पाँच मुस्टंडे एक सुन्दर स्त्री को बलात् उठाये लिये जा रहे हैं। बादल से न रहा गया। उन्होंने कहा— 'आज्ञा हो तो अबला की रक्षा करूँ!'

गोरा— गो, ब्राह्मण और स्त्री की रक्षा करना पुरुष का धर्म है। जाओ और उसकी रक्षा करो!

बादल अपने दो साथियों के साथ उधर दौड़े जिधर राक्षस स्त्री पर अत्याचार कर रहे थे। सामना होते ही वे भी तलवारें निकाल लड़ने को तैयार हो गये। पर बादल की तलवार के सामने टिकना तो किसी बिरले के बस का भी नहीं। बात की बात में ही बादल ने उन सबका काम तमाम कर दिया और फिर उस स्त्री की ओर देखते हुए

बोले— "कौन हो तुम?"

"मैं एक भले घर की बहू हूं। ये मुझे जबरदस्ती उठाकर लिये जा रहे थे।"

"अब कहाँ जाना चाहती हो?"

"अपने घर।"

"यहाँ क्यों आई थी?"

"यमुना नहाने।"

"घर कहाँ है, कितनी दूर है?"

"यहाँ से दो कोस परे कूचा पातीराम में।"

बादल ने उस स्त्री को गौर से देखा और फिर सहानुभूति तथा दृढ़ता से बोले— 'बड़ा अत्याचार होता है यहाँ स्त्रियों पर! क्या राज्य की ओर से यहाँ कोई सुरक्षा नहीं है?'

स्त्री ने आँसू बहाते हुए कहा— ये राज्य के सिपाही ही तो थे।

बादल— जब रक्षक ही भक्षक बन जायें तो फिर मानवता कहाँ रह सकती है! जाओ और फिर इस तरह अकेली नहाने कभी न आना।

"आप मुझे वहाँ तक छोड़ दीजिये उस पेड़ के पास तक, फिर मैं चली जाऊँगी।"

बादल ने उस स्त्री को उसके बताये हुए स्थान तक पहुँचवा दिया। स्त्री करीब करीब एक मील तक तो डरी डरी चली और फिर तेजी से चलती हुई एक घर में घुस गई। घुसते ही उसने संकल बन्द करली। अन्दर पहुँचते ही याकूब मियाँ ने उसका स्वागत किया और उत्सुकता से पूछा— 'क्यों क्या खबर है बसन्ती!'

बसन्ती ने माथे का पसीना पोछते हुए कहा— 'गजब की खबर है हुजूर! उन डोलियों में जरूर कोई बड़ा भेद है, वे स्त्रियाँ नहीं मर्द

जान पड़ते हैं।

'क्या?' याकूब ने चौंककर कहा।

बसन्ती— हाँ हुजूर! उन डोलियों के चार कहारों ने हमारे छः के छः बहादुर बात की बात में काट डाले। वे कहार नहीं, वे तो पैतरेबाज लड़ाके राजपूत लगते थे।

याकूब— कैसी शक्ल थी उनकी?

बसन्ती— सभी पतले पतले थे पर एक ज़रा लम्बा, गोरा और जवान था, उसकी बड़ी बड़ी आँखें थीं और गाल पर एक खूबसूरत तिल था।

याकूब— तुम डोलियों तक नहीं जा सकीं, ज़रा उनके अन्दर तक की भी तो खबर लातीं।

बसन्ती— कैसी बातें करते हैं हुजूर! मैं ज़िन्दा आ गई यही गनीमत है, आपके बाकी बहादुर तो वहीं खत्म हो गये।

याकूब— सचमुच तुमने बहुत बड़ा काम किया है। अच्छा, मैं चला। कोई खास खबर मिले तो मुझे फौरन जफर साहब के यहाँ खबर देना।

कहते ही याकूब तेज़ी से चले और सिपहसालार जफर के पास आ पहुँचे। माथे पर परेशानी देखते ही जफर ने कहा— क्या बात है याकूब! क्या कोई नयी खबर है?

याकूब— हाँ हुजूर! खबर बड़ी खतरनाक है।

जफर— खतरा यदि पहले पता हो जाये तो बहादुर और होशियार आदमी के लिए खतरा नहीं रहता। जल्दी कहो क्या खबर है?

याकूब— डोलियों में औरतें नहीं मर्द जान पड़ते हैं और डोलियों को कन्धों पर उठाने वाले भी बहादुर लड़ाके हैं।

जफर— जिसका मुझे शक था वही हुआ। अच्छा तो क्या तुम

अपनी आँखों से देख आये ?

याकूब— मुझसे भी ज्यादा होशियार मेरी एक खुफिया ने खबर दी है। आपके हुकुम के मुताबिक मैंने जर्रे जर्रे पर खुफिया लगा दी थी। मेरे पास एक बहुत ही चालाक औरत बसन्ती काम करती है, उसके साथ हमारे सात बहादुर डोलियों के पास लगे हुए थे। उन सबको उन्होंने मार डाला जो डोलियों के साथ आये हैं। बसन्ती कहती थी कि वे गजब के लड़ाके हैं।

जफर— बसन्ती ने आने वालों के कुछ हुलिये भी बताये हैं।

याकूब— हां, हुजूर! पतले पतले गठीले बदन के हैं। उनमें से एक को तो उसने बहुत ही बहादुर बताया। उसने कहा कि एक ज़रा कुछ लम्बा, बड़ी बड़ी आँखों वाला और कुछ गोरा गोरा था, उसके गाल पर एक तिल भी है, वह तो ऐसे लड़ता था जैसे बिजली चमकती है।

जफर— हो न हो वह बादल ही है। जान पड़ता है हमें किसी गहरे जाल में फँसाया जा रहा है। हाँ तो और कोई बात याकूब साहब!

याकूब— अभी तो कोई और नहीं है।

जफर— तो तुम जाओ और डोलियों के आस पास लगे रहो।

याकूब— जो हुकुम हुजूर!

याकूब चल दिया और जफर परेशान हो उठे। वे आप ही आप सोचने लगे,— "माना कि थोड़े से राजपूत हमारी इतनी बड़ी फौज के सामने हमारे घर में अपनी मौत ही लेने आये हैं। लेकिन यह देखकर डर लगता है कि उनकी कितनी बड़ी हिम्मत और कितनी बड़ी जुर्रत है। अब हमें क्या करना चाहिये ?

"डोलियों पर हमला जल्दी करो सिपहसालार। नहीं तो लुट जाओगे। चोरों के घर में मोर घुस आये हैं।" एकदम याकूब ने दौड़

कर आते हुए कहा।

जफर— "मैं तो पहले ही कहता था। कहो क्या खबर है?"

"हाँ, डोलियों में औरतों के वेश में मर्द हैं और वे रत्नसेन को छुड़ाने आये हैं। जाल रचकर वे जेल की ओर जा रहे हैं।" याकूब ने कहा।

जफर ने कोई जवाब नहीं दिया और दौड़कर अपनी फौज में आ गया। आते ही उसने फौज को हुकुम दिया— 'चुपचाप डोलियों को चारों तरफ से घेर लो!'

हुकुम होते ही फौज ने कूच कर दिया, दबे पैरों दुश्मन डोलियों के पास आ लगे। गोरा और बादल से भी यह बात छिपी नहीं रही। वे समझ गये कि दुश्मन को हमारा भेद मिल गया है। वे पहले ही चौकस हो चुके थे।

बादल ने डोलियों में से चुपचाप सभी जवानों को बाहर निकाल मोर्चों पर छिपा दिया और डोलियां खाली छोड़ दीं। थोड़े से राजपूत डोलियों वाले मोर्चे पर रहे और शेष बन्दीगृह के पास आ डटे।

गोरा ने बादल को देखा और बादल ने गोरा को। आँखों ही आँखों में एक ने मानो दूसरे से विदा ली। गोरा ने बादल से कहा— बेटा! यह हमारी नमकहलाली की अन्तिम परीक्षा है।

बादल— दुश्मन के बन्दीगृह पर अब हमारा अधिकार है। जब तक महाराज मुक्त नहीं होंगे तब तक चिड़िया का बच्चा भी इधर नहीं आ सकेगा।

गोरा— और उस रास्ते पर जिससे महाराज को ले जाना है?

बादल— वह बिल्कुल साफ है, दुश्मन उधर नहीं जा सकेगा।

गोरा— तो मैं महाराज को मुक्त करने के लिये पिंजरे में प्रवेश करता हूँ। तुम पिंजरे के बाहर चौकस रहो।

बादल— जाओ चाचाजी! इस बार प्राण चाहे न रहें पर महाराज मुक्त अवश्य होंगे।

गोरा जी चल दिये और बादल तलवार खींचकर मोर्चों पर जम गये। उन्होंने अपने वीर इस तरह लगाये कि दुश्मन के पैर हर तरफ से रुक गये।

जफर के रुके हुए पैरों ने पग पीछे हटाया और अलाउद्दीन से कहा— 'कहिये जहांपनाह! अब क्या किया जाये?'

अलाउद्दीन— अक्ल काम नहीं करती।

जफर— औरतें किसकी अक्ल खराब नहीं कर डालतीं।

अलाउद्दीन— तो क्या हमारे बहादुर सिपहसालार घबरा उठे हैं?

जफर— जफर ने घबराना तो किसी भी तूफान में नहीं सीखा। आप देखते रहें, दिल्ली से एक भी राजपूत ज़िन्दा चित्तौड़ नहीं जा सकता।

घूमती हुई आँधी की तरह जफर आगे बढ़ा पर कहीं भी उसे रास्ता दिखाई न दिया।

१४

"मनुष्य सोचता कुछ है और कुछ हो जाता है। दिवाली के दीपों को श्मशान की चिताओं में बदलते देर नहीं लगती। राम को राज-तिलक होने वाला था पर फकीरी धारण करनी पड़ी। राजा को रंक और रंक को राजा बनते पल नहीं लगते। मनुष्यता भी कितनी भयानक होती है! कितनी खतरनाक है यह दुनिया! यहाँ दोस्ती के बदले में दगा और मानवता के बदले में मौत मिलती है। शत्रु को किसी भी दशा में अपना मान बैठना कितना भयानक होता है! राज्य संचालन के लिए बल और सत्य से भी बड़ी आवश्यकता बुद्धि की है। शत्रु को जीतने के लिए ताकत नहीं, बुद्धि चाहिए। मैंने सोचा था अलाउद्दीन का हृदय परिवर्तन कर दूँगा, मेरा प्रेम उसे युद्ध के मार्ग से हटा देगा, शान्ति और मानवता से विनाश रुक जायेगा। पर परिणाम क्या निकला? चित्तौड़ का गर्वीला शासक अलाउद्दीन की कारा में सड़ रहा है। जिसके सामने आते ही खूंख़ार शेरों तक के छक्के छूट जाते हैं, वह आज इस सड़े हुए बन्दीगृह में स्वांस ले रहा

है, विश्वास का फल भोग रहा है। जो होना था हो चुका, अब पश्चात्ताप करने से क्या होगा? जब तक श्वांस है कैद में सड़ते रहो, विधर्मियों के हाथ का विष पीते रहो। चित्तौड़ छूटा, कर्म, धर्म से हाथ धो बैठे, फिर भी बिना अन्न के ये प्राण अभी तक न जाने क्यों नहीं छूटे। विधाता जिससे रूठ जाता है उससे मृत्यु भी दूर हट जाती है। जी चाहता है कि दीवारों से सर टकरा टकरा कर इस तन के पिंजरे को तोड़ दूँ। चित्तौड़ का न जाने क्या हाल होगा? पद्मिनी का पता नहीं, किस स्थिति में होगी?"

सोचते सोचते बन्दी रत्नसेन दीवार के सहारे घुटनों में सर देकर बैठ गये। वे आँसुओं से जमीन पर अन्तर की कहानियाँ लिखने लगे। दुःख जब चरम पर पहुँच जाता है तो दैव की दया जागती है।

सहसा कारा के दरवाजे खुले और रत्नसेन ने देखा कि शृङ्गार किये अवगुंठन में मुँह छिपाये पद्मिनी उनके सामने खड़ी थी।

रत्नसेन ने विस्मय से देखते हुए कहा— यह स्वप्न है या सत्य?

सहसा घूँघट पलटते हुए पद्मिनी ने महाराज को निहारते हुए उत्तर दिया— स्वप्न भी और सत्य भी।

कहते हुए पद्मिनी वेषधारी लुहार ने कपड़ों में छिपी हथौड़ी निकाली और बिना आवाज़ के एक चोट से रत्नसेन की बेड़ियाँ काट डालीं। महाराज़ को मुक्त करते हुए लुहार ने कहा— "सोचने का समय नहीं है, अपने वस्त्र मुझे दे दीजिये और मेरे वस्त्र आप पहन लीजिये। द्वार पर गोरा, बादल घोड़ा लिये तैयार खड़े हुए हैं, दरवाजे तक आपको कोई खतरा नहीं है। पहरेदारों की जगह हमारे सैनिकों ने ली हुई है।"

रत्नसेन— और तुम?

लुहार— मेरी चिन्ता छोड़िये, जो होना होगा हो जायेगा। यदि

आपके लिये इस तन के टुकड़े टुकड़े भी हो जायें तो भी मुझे प्रसन्नता होगी। चित्तौड़ के महाराज से कीमती एक साधारण लुहार की जान नहीं है।

रत्नसेन— चित्तौड़ के राजा के लिये अपनी और अपनी प्रजा की जान बराबर है।

लुहार— इसीलिये तो आपका जीवन सुरक्षित रहना बहुत आवश्यक है। आप रहेंगे तो चित्तौड़ रहेगा, आप न रहे तो चित्तौड़ न रहेगा। वह सोने का गढ़ राख हो जायेगा। अब विलम्ब न कीजिये। हम आग के मुंह में हैं। कहीं ऐसा न हो कि बना बनाया खेल बिगड़ जाये।

लुहार बन्दी बन गया और रत्नसेन कारा से बाहर निकले। द्वार पर वीरवर गोरा कुछ स्त्रीवेषधारी वीरों के साथ उत्सुकता से महाराज की प्रतीक्षा कर रहे थे। जैसे ही महाराज को उन्होंने देखा वैसे ही वे चुपचाप सारा रहस्य समझते हुए बोले— घोड़े तैयार हैं, आप चित्तौड़ की राह पकड़ें।

रत्नसेन— और आप?

गोरा— मैं आपका पीछा करने वाले शत्रुओं को रोकूँगा।

रत्नसेन— किन्तु इतनी बड़ी सेना के सामने आप क्या कर सकेंगे?

गोरा— मेरे सामने लक्ष्य है, मार्ग का भय नहीं। हम भी तीन हजार से अधिक राजपूत यहाँ उपस्थित हैं। इन लुटेरों को दिखा देंगे कि राजपूत की तलवार में कितनी शक्ति होती है। आप इस समय कुछ न सोचिये, पचास जवानों के साथ चित्तौड़ जाइये। वहाँ पद्मिनी दुर्ग के पहरे पर हैं, चारों ओर से खतरों की सम्भावना है। हम भी यहाँ से निबट कर आते हैं। यदि न आ सका तो मेरी यह इच्छा है कि चित्तौड़ चाहे राख हो जाये, पर उसका मस्तक न झुकने पाये।

बातें हो ही रही थीं कि युद्ध का कोलाहल गूँज उठा। नंगी तलवार लिये एक राजपूत सैनिक दौड़ा हुआ आया और एक ही श्वांस में कह गया— "सारा रहस्य खुल गया है, दिल्ली की असंख्य सेना हम पर टूट पड़ी है।"

गोरा— जय शंकर ! महाराज आप जाइये।

रत्नसेन— आपको इस दशा में छोड़कर जाना मुझे मृत्यु से भी अधिक दुःख दे रहा है।

गोरा— जाइये, शीघ्र जाइये।

इधर महाराज घोड़े की पीठ पर सवार हुए, उधर खिलजी फौज बन्दीगृह के फाटक पर आ पहुँची। जफर ने अपने जवानों को हुक्म दिया— "रत्नसेन का पीछा करो और जहाँ भी हाथ लगे दुश्मन को गिरफ्तार करके लाया जाये।"

पर वीरवर गोरा ने जफर और उसकी फौज का आगा रोकते हुए कहा— 'सांप निकल गया, अब लकीर को पीटे जाओ। जैसे को तैसे की सज़ा मिल गई। तुमने जिस तरह हमारे महाराज को बन्दी बनाया था, वे उसी तरह तुम्हारे पिंजरे से छूट कर उड़ गये। उनका पीछा करने का प्रयत्न मत करो। कहीं उनको पकड़ते-पकड़ते अपनी जान से भी हाथ न धो बैठो।"

जफर की फौज ने आगे बढ़ना चाहा, पर उनके सामने वृद्ध सेनापति लोहे की दीवार की तरह खड़े थे। जफर गोरा को परास्त किये बिना महाराज को पकड़ना तो दूर रहा, उनके पैर के निशान तक नहीं छू सकता था। गोरा की बात का कोई जवाब दिये बिना ही जफर ने अपनी तलवार का वार उन पर कर दिया।

किन्तु गोरा तो पुराने खिलाड़ी थे। तलवारों से खेलते खेलते उनके बाल सुनहरे से काले और कालों से सफेद हो चुके थे। पैतरा

बदल कर उन्होंने दुश्मन का वार झुका दिया और अपने हाथ का भाला घुमाकर जफर के मस्तक पर इस ज़ोर से मारा कि जफर के सर का कवच कटकर सर से खून बहने लगा।

और फिर दोनों सेनापतियों की तलवारें टकराने लगीं। तलवारें टकरा ही रही थीं कि दिल्ली की असंख्य फौज चारों ओर से टूट पड़ी। अकेले गोरा पर अनगिनत तलवारें एक ही साथ आ बरसीं। पर वाह रे चित्तौड़ के वीर! जिस तरह घटाओं में बिजली दमकती है, जिस तरह तारों में चाँद चमकता है, जिस प्रकार पाप में पुण्य प्रकाशमान रहता है, जिस तरह कांटों में फूल अलग खिला रहता है, उसी तरह गोरा जी लाखों में एक दीख रहे थे। रण में वह कौन वीर था जिसके सर पर गोरा की तलवार न थी।

गोरा जी ने दुश्मनों के छक्के छुड़ा दिये। जफर के हौसले पस्त होने लगे, वह हाँपने लगा। जब उसने अपनी ज़िन्दगी पूरे खतरे में देखी तो छल से काम लिया। उसने अधर्म से अपनी तलवार का वार गोरा जी की जांघ पर कर दिया।

चित्तौड़ वीर की जांघ में भारी घाव हो गया, उनमें इतनी शक्ति न रही कि खड़े रह सकें। पर गिरने से पहले उन्होंने अपनी एक टाँग के सहारे जफर के सीने में अपना भाला इस ज़ोर से घुसेड़ा कि वह 'हाय' करता हुआ सदा सदा के लिए ज़मीन पर गिर पड़ा। और तभी दुश्मनों को चीरते-फाड़ते बादलसिंह भी अपनी सेना सहित उसी मोर्चे पर आ गये।

गोरा जी को गिरता देख वह आगे बढ़ा और उसने हनुमान की तरह उन्हें उठाकर अपने कन्धे पर बैठा लिया तथा फिर दुश्मन दल को दलने लगा।

चित्तौड़ की सेना ने सेनापति गोरासिंह को बादल के कंधे से

अपने घोड़े पर ले लिया और चार वीर राजपूत उनको चित्तौड़ ले चले, ऐसे ही जैसे हनुमान जी मूर्च्छित लक्ष्मण को युद्ध-भूमि से रामदल में ले आये थे।

इधर बादलसिंह आँधी और तूफान की तरह दुश्मनों पर टूट पड़े। बादल का वह युद्ध इतिहास में बेजोड़ युद्ध है। मानो रुद्र का वह ताण्डव-नृत्य था, अथवा देवी दुर्गा का वह दैत्य-संहार था या अभिमन्यु चक्रव्यूह में महारथियों से घिरा हुआ युद्धरत था।

अलाउद्दीन खिलजी के बड़े बड़े बहादुर उस वीर पर जय पाने के लिए वार पर वार कर रहे थे। पर उनका पैर आगे बढ़ने से पहले ही बादल की तलवार उनका सर काट डालती थी। बादल की मार से दुश्मनों के पैर उखड़ने लगे। पर कुमुक पर कुमुक आकर दुश्मनों के उखड़े हुए पैर फिर जमा देती थी। लाशों के ढेर लग गये, लहू का गारा बन गया, सोने जैसे शरीर मिट्टी में मिल गये, पर युद्ध की भूख अभी भी बाकी थी।

दुनिया का दाह करने वाली युद्ध की डायन भी कितनी भयंकर होती है! जब यह मुंह फाड़कर फैल जाती है तो सोने की राख कर डालती है, निर्माणों को ध्वंस में बदल देती है, धरती के सिंदूर को शोणित की लाली में बदल देती है। युद्धों का इतिहास विध्वंसों का इतिहास है। धरती को विधवा बनाने वाले युद्ध के भूखे भेड़िये होते हैं। न जाने कितनी सुहागिनों के सिंदूर उजड़ जाते हैं, न जाने कितनी माताओं की गोदें खाली हो जाती हैं! पर धन्य हैं वे माँ के लाल जो मर जाते हैं पर अपनी मातृ-भूमि का मान नहीं देते, जो जल जाते हैं पर अपने देश की स्वतन्त्रता पर आँच नहीं आने देते।

भारत माता का लाल, चित्तौड़ का वीर पुजारी, इतिहास का अमर सूरज, मिट्टी का महकता हुआ फूल युद्ध-भूमि में लहू-लुहान हो

चला, पर वह दुश्मनों से तिल भर भी हिलाये न हिला।

बादल बिजलियाँ बनकर बरस रहे थे कि दुश्मन हाथियों का झुंड लेकर उन पर टूट पड़े। हाथी पर बैठे एक भयंकर योद्धा ने बादल की आँख बचाकर उनके पेट में अपना भारी भाला घुसेड़ दिया।

भाला पेट में घुसते ही आँतें बाहर निकल आईं, पर बादल ने हिम्मत न हारी। कटि-पट से उन्होंने आँतों को कसकर बाँध लिया, और घाव की बेहद पीड़ा होते हुए भी उन्होंने भाला मारने वाले का अपने भाले से काम तमाम कर दिया। बादल का वह भाला था या यमराज का शस्त्र! अब तो बादल आपे में नहीं थे। मौत उनके निकट थी, पर वे मौत बनकर दुश्मनों पर टूट रहे थे। आगे-पीछे, दायें-बायें, हर ओर बादल ही बादल दिखाई देते थे। वह एक थे पर हज़ार होकर लड़ रहे थे। धन्य है बादल की वह शान जो जान दे रही थी पर चित्तौड़ के अभिमान में मरते मरते भी चार चाँद लगाने को उत्सुक थी।

एक एक राजपूत दस दस को मार कर शहीद हो गया और जड़ गया चित्तौड़ के इतिहास में वीरता की अमर बिन्दियाँ। किन्तु कहाँ एक और कहाँ सौ! मुट्ठी भर वीर कब तक लाखों से लड़ते! जब तक बादल के तन में एक भी श्वास रहा तब तक उनकी तलवार किसी न किसी शत्रु की गर्दन पर चलती ही रही।

और फिर अन्ततोगत्वा वही हुआ जो युद्ध के पश्चात् होता है, जो महाभारत के बाद हुआ था। वीरों की लाशों से जमीन पटी हुई थी, धरती पर मनुष्यों के रक्त से मनुष्यों की कहानियाँ लिखी पड़ी थीं, मुर्दों के किनारे लाशों का मूक मातम था। बादल के गर्वीले शव पर गगन रो रहा था और धरती छाती पीट रही थी।

अलाउद्दीन अपने सरदारों के साथ अट्टहास करता हुआ मुर्दों के

उस राजसिंहासन पर आ गया और गर्व से कह उठा— "जितने आये थे सब के सब मौत के सुपुर्द कर दिये गये।"

तभी अलाउद्दीन के पैर के नीचे कराहती हुई एक मरणासन्न लाश में से आवाज़ निकली— "किन्तु हाथ क्या आया? दीन और दुनिया दोनों तुझ पर आंसू बहा रहे हैं।"

अलाउद्दीन— मिला क्यों नहीं? मेरी जीत हुई है।

"जीत, और तेरी! बेवकूफ कहीं का। [जीत उसकी होती है जो इन्सानियत के रास्ते पर चलता है,] जिसके साथ सत्य और ईमान होता है। यदि तू जीता है तो उठाले इन मुर्दों को। तूने अपनी काली इच्छा के बदले सोने के वीरों को राख कर डाला। दूसरे के घर का दीपक बुझाने वाले! तनिक अपने घर का अन्धकार तो देख। तेरे घर में कितनी विधवायें रो रहीं हैं, कितनी मांओं की गोदें खाली हैं। मलिक काफ़ूर और जफर जैसे बहादुरों के शरीर चील और कौए खा रहे हैं। अब तू इनकी मिट्टी हाथ में लेकर खुशियां मना!"

अलाउद्दीन— यही तो कायरता की आवाज़ है जो इन्सान के बढ़ते हुए पैरों को रोकती है। यहीं से निराशा का जन्म होता है। दुनिया में इन्सान भोगने के लिये आया है। जन्नत, नरक और स्वर्ग का ख्याल झूठा है। जो कुछ भी है वह इस सोने के संसार को भोगने में ही है।

"लेकिन जो सोने के संसार को राख करता है इतिहास उस पर आँसू बहाता है। आज तू सोने के सिंहासन पर नहीं कब्रों और चिताओं पर प्रसन्नता मनाने की प्रतीक्षा कर रहा है। पागल कहीं का! तू जिस रास्ते पर चल रहा है वह मातम का मार्ग है। मनुष्यों की हड्डियां तेरे पैरों में चुभ चुभ कर तुझे गला डालेंगी। यह जीत ही तेरी पराजय है। जीतना चाहता है तो अब भी अपने आपको बदल दे। छोड़ हिंसा का रास्ता, क्षमा मांग चित्तौड़ की देवी पद्मिनी से!"

अलाउद्दीन— बस, खामोश होजा, नहीं तो मैं पैरों से तुझे कुचल डालूंगा।

"मैं तो मिट्टी हूँ, मिट्टी को जितना कुचलेगा उतना तू ही कुचला जायेगा। कुचलना चाहता है तो अपनी उन पशु भावनाओं को कुचल जो तेरे मुँह पर स्याही पोत रही हैं। क्षणिक सुख के लिए निर्दोषों का खून न बहा। जीवन एक बुलबुले के समान है, किसे पता है कि दूसरा श्वास आये या न आये। कोई नहीं जानता कि मंजिल उसका कहाँ साथ छोड़ देगी। किसके लिए इतने इन्सानों का खून बहा रहा है? कितने दिन के लिये लाशों पर जीना चाहता है? आज जिन शवों को तू पैरों से रौंद रहा है कल इन्हीं लाशों की मिट्टी तुझे रौंदेगी। दुनिया में जब तू नहीं रहेगा तब इतिहास चीख चीख कर कहेगा कि अलाउद्दीन लुटेरा था, हत्यारा था, वह दूसरे की बहू बेटियों को जबरदस्ती अपने हरम में ला ला कर बादशाहों के नाम पर कलंक लगा गया, उसने मानवता को खून में डुबा दिया, उसने निर्माणों को राख में बदल डाला, उसने ताकत के जोम में दुर्बलों पर अत्याचार किये हैं। बोल, दिल्ली के खूनी बादशाह बोल! क्या तेरी तलवार उस समय उन्हें जवाब दे सकेगी? क्या उस समय तेरी कब्र उसे कुचल सकेगी? क्या उस वक्त तेरे जुल्म तेरी इज़्ज़त बचा लेंगे? तूने अपनी ज़िन्दगी से ज़मीन पर गुनाहों के जो कारनामे लिखे हैं, उस दिन तेरी कब्र पर स्याही पुते से नज़र आयेंगे। अब भी समय है, संभाल अपने को, जाग जा! उम्र के जो बाकी दिन हैं वे सत्य और शान्ति के मार्ग में लगा दे। जिस सुनहरी ज़िन्दगी को तूने काली राख बना डाला है, उसे स्वर्ण राशि में बदल दे। बदल, अलाउद्दीन बदल!"

अलाउद्दीन— कौन है तू, जो मेरे बढ़ते हुए पैरों को रोक रहा है, जो मुझ से मेरा सुख छीनना चाहता है? तू मुझे कायरता का रास्ता दिखा

रहा है। दुनिया सत्य और शान्ति की नहीं, ताकत की है। जिसके हाथ में लाठी है भैंस उसी की होती है। मौत के डर से ज़िन्दगी को ख्वाब में जलाना बेवक़ूफी है। इन्सान को जब तक जीना है सुख से जीना चाहिये। अपनी खुशी हासिल करने के लिए इन्सान जो भी कर सकता है करे। मौत के बाद कब्र और चिता मिलती है, इन्सान को जो कुछ लेना है वह जीते जी ले ले। आगे बढ़ते हुए पैर रोकने वाले! बता तू कौन है, जिसके सामने अलाउद्दीन जैसे दिलेर का भी दिल हिला जा रहा है?

"मैं कौन हूँ? मैं वह आवाज़ हूँ, जो कण कण से निकलती है। मैं तेरी आवाज़ हूँ, उस दिल की आवाज़ हूँ जिसमें गुनाह नहीं होते। तू समझता है कि तू ही सब से बड़ा है पर वास्तव में सब से बड़ा एक ही है। वह एक ही सर्वत्र है, वही चलता है, वही बोलता है, वही खाता है, और वही स्थिर है। अपने को पहचान, अपनी हस्ती को देख! यह माना कि तू बादशाह है, किन्तु क्या तुझे पता है कि इस खाक में तेरे जैसे कितने बादशाह खाक हुए पड़े हैं। तेरी अन्तिम स्थिति राख है। इसलिये ओ राख के पुतले! मानवता की राह पर चल, सत्य, प्रेम और अहिंसा के चरणों में गिर पड़! तभी तुझे सुख मिलेगा, शान्ति मिलेगी और यश मिलेगा।"

अलाउद्दीन— झूठ, बहाना! इन्सान को छलने के ये ही शत्रु हैं। सत्य, प्रेम, अहिंसा! उँह! ये कमज़ोर के मन बहलाने वाले खिलौने हैं, हारे हुए के हथियार हैं। मैं इन धोखों में नहीं आऊँगा। मेरे हाथ में तलवार है, मेरे जिस्म में ताकत है, मैं चित्तौड़ का राज्य और पद्मिनी को पाकर ही शान्ति पाऊंगा। मेरा सुख चित्तौड़ में है, मेरी ज़िन्दगी के श्वास 'पद्मिनी पद्मिनी' पुकार रहे हैं।

"पद्मिनी सौन्दर्य की देवी है, सत्य की आराधना है। उसमें ज्योति है। उसे पाना चाहते हो तो उसकी पूजा करो, उसे

तप और राग से रिझाओ, सच्चे प्रेम से उसकी आरती उतारो। फिर हो सकता है किसी जन्म में वह तुम्हें मिल जाये। नारी हृदय को हिंसा से नहीं जीता जाता, स्त्री को जीतने के लिए मृत्यु को आलिंगन करना पड़ता है। चुपचाप जो पतंगे की तरह जल नहीं सकता वह पद्मिनी को नहीं पा सकता।"

अलाउद्दीन— तो क्या मैं भीख मांगूं, पद्मिनी के आगे गिड़गिड़ाऊं? नहीं, यह नहीं हो सकता। माँगने से तो भीख भी नहीं मिलती। मत रोको, मेरा रास्ता मत रोको! अब तो दो चार कदम ही और चलना है। उसकी सारी फौज खप चुकी, बादल जैसे बहादुर काम आ चुके हैं, पड़ौसी उसके सहायक नहीं। कौन है जो मेरा मार्ग रोक सकता है?

"मृत्यु! जहाँ मनुष्य की हर चाह मूक होकर सो जाती है। मौत मनुष्य की वह स्थिति है जो उसे पापों से मुक्त कर देती है। आज तू नहीं मानता तो न सही, उस दिन मिट्टी तुझसे पूछेगी— कहाँ है तेरी दिल्ली? कहाँ है तेरी वह तलवार जो तुझे दूसरों के शोणित से सनी शैया पर सुलाया करती थी?"

अलाउद्दीन— मौत जिस दिन आनी होगी आ जायेगी, जब तक ज़िन्दा हैं तब तक तो दुनिया की बहारें लूट लें। सौन्दर्य के उस अनमोल फूल को पाये बिना यदि हम मरे भी तो क्या मरे! अगर पद्मिनी को पाने की राह में हमारी मृत्यु भी आ गई तो हमें खुशी होगी।

१५

रत्नसेन का सारा शरीर स्वेदकणों से ऐसे जगमगा रहा था मानों श्रम और उत्साह ने उनके तन में मोती गूंथ दिये हैं। उनका अश्व भीग कर ऐसे गीला था जैसे तुहिन कणों से सुबह सुबह जमीन जलाशय बन जाती है। किन्तु जिसमें लगन होती है उसे न गर्मी लगती है, न जाड़ा। जिसमें बढ़ने का उत्साह होता है उसे मार्ग की बाधायें नहीं रोक सकतीं। जलने वाले के लिये अन्धकार सहायक होता है। चलने वालों के लिये पथ साथी बन जाता है। जिसकी गति अप्रतिहत है उसके लिये क्या आँधी और क्या पानी! जो विजय के लिये पग उठाता है वह पराजय से कभी नहीं हारा करता।

कारागृह से मुक्त हो पथ के पत्थरों को पैरों से कुचल जब रत्नसेन चित्तौड़ पहुँचे तो पद्मिनी ने सारे चित्तौड़ के साथ पलकों से उनकी आरती उतारी, मंगल गीतों से उनका स्वागत किया। फूलों की वर्षा से वह चौक भर गया जिसमें रत्नसेन खड़े खड़े ऐसे देख रहे थे जैसे मृत्यु में जीवन झांक कर देखा करता है।

'कैकयी' की तरह नागमती संकोच भरी पीछे को खड़ी थी। रत्नसेन ने स्वयम् उसके निकट जा कुशल पूछी, पर नागमती कुछ कहे इसके पहले ही उसके नेत्रों ने उसकी वाणी रुद्ध कर दी। पाप पर पुण्य का जब उदय होता है तो उसकी दमक अनोखी ही होती है। नागमती के मौन में जो प्रेम और अभिनन्दन था उसके सामने तो इस समय पद्मिनी का प्रेम-चन्द्रमा भी बादलों में आ गया था।

रत्नसेन ने नागमती को हृदय से लगा लिया और फिर पद्मिनी की ओर देखते हुए बोले— मेरे पीछे किसी को कोई कष्ट तो नहीं हुआ?

पद्मिनी— यह कष्ट क्या कम था कि आप बन्दीगृह में थे और हम महल में।

रत्नसेन— माना वह महल बन्दीगृह से भी अधिक कठोर होता है जिसमें वियोग के अंगारे धधक धधक कर जलाते हैं, फिर भी हमारे बाद चित्तौड़ में कुशलता तो रही?

पद्मिनी— कुशलता कैसी? आप उधर बन्दी हुए, इधर पड़ौसियों के घरों में घी के दीपक जल उठे। परायों से पहले घर के ताक में बैठे रहते हैं। वे बिल्ली की तरह यही मनाते रहते हैं कि कब मालिक सोये और कब हम झपट्टा मारें।

रत्नसेन— आखिर बात क्या है, साफ साफ कहो! किसने आँखें उठाई हैं, कौन है वह जिसने मेरे पीछे इधर दृष्टि डाली है? मैं उसका सर कुचल डालूँगा।

पद्मिनी— गैरों का सर कुचला जा सकता है पर पड़ौसियों से बिगाड़ कर घर का नाश होता है। आप अभी थके हुए आये हैं, कुछ विश्राम कर लीजिये, फिर शान्ति से सारी कहानी सुनाऊँगी।

रत्नसेन— विश्राम, और उस समय जब हर द्वार पर आग लगी

हुई है। मुझे नींद नहीं, चित्तौड़ का गौरव चाहिये। मानव की पहचान वहीं है जहाँ वह चारों ओर से घिरा हुआ भी दम नहीं तोड़ता। बोलो पद्मिनी! कौन है वह जिसने तुम्हें सताया है?

पद्मिनी— सिंहलद्वीप की बेटी और चित्तौड़ की वीर रानी पद्मिनी को सताने का साहस जो करता भी है वह फूक से पहाड़ को उड़ाने का प्रयत्न करता है। सतीत्व जिसका सहायक है, अग्नि जिसके चारों ओर पहरा देती है, शक्ति जिसके हाथ में खप्पर लिये विराजमान है, उसे क्या कोई छू सकता है?

रत्नसेन— छू तो नहीं सकता पर प्रयत्न तो कर सकता है। जब रावण ने सीता तक को चुरा लिया तो फिर क्या कुछ भी असम्भव है?

पद्मिनी— पर परिणाम में उसका विनाश ही तो हुआ।

रत्नसेन— नाश तो उसका भी होगा ही जिसने तुम्हारी तरफ आँखें उठाई हैं। बताओ पद्मिनी! तुम किसके पाप से दुखी हो?

पद्मिनी— सुनना चाहते हो तो बताये ही देती हूँ। कुम्भलनेर के राजा देवपाल ने आपके पीछे दूती भेजी थी।

रत्नसेन— शीघ्र बताओ, क्या कहा दूती ने?

पद्मिनी— दूती ने कहा, 'रत्नसेन को तो अलाउद्दीन ने कैद कर लिया, अब तुम चित्तौड़ में रह कर अपनी ज़िन्दगी क्यों बिगाड़ती हो? यहाँ अलाउद्दीन आयेगा और तुम्हें अपने हरम में ले जायेगा। वह बादशाह नहीं, जल्लाद है। इससे तो अच्छा है कि तुम कुम्भलनेर की रानी बन जाओ। राजा देवपाल वीर हैं, सुन्दर हैं, गुणी हैं। वे तुम्हें अपने प्रेम और वैभव से निहाल कर देंगे। अलाउद्दीन जैसे बादशाह को वे चुटकी से मसल सकते हैं। चलो पद्मिनी! कुम्भलनेर चलो, क्यों व्यर्थ विरह के आँसुओं में गल रही हो, क्यों न आने वाले की याद में पानी पानी होकर बही जाती हो? राजा देवपाल के राज्य में तुम्हें कोई

दुःख तो क्या स्वप्न में भी कोई नहीं सता सकता। चलो, सुखों की उस फुलवारी में चलो, प्यार के उस उपवन में चलो! वहाँ तुम्हारा सौन्दर्य थिरकेगा, तुम्हारी जवानी गायेगी, तुम्हारा मन उत्साह से उछलेगा।'

रत्नसेन— बस बस, अब तलवार काबू में नहीं रह सकती; कल का सूर्य या तो मुझे नहीं देखेगा या देवपाल को।

पद्मिनी— इस समय सहसा क्रोध में आना अहितकर है स्वामी! ज़रा सोच समझकर शान्ति से जो कुछ करना है कीजिये। यह समय हम पर आपत्ति का है, चारों ओर शत्रु ही शत्रु हैं।

रत्नसेन— मृत्यु से अधिक तो कुछ नहीं होगा। कायरता की अपेक्षा मरना अच्छा है। देवपाल ने मेरी पत्नी के पास अपनी दूती क्यों भेजी?

पद्मिनी— पर उसने आपकी पद्मिनी का बिगाड़ा क्या? अपने जीवन के इतिहास में स्याही के टीके ही तो लगा लिये। आपकी रानी ने दूती को जो उत्तर दिये हैं वे क्या तलवारों के घावों से कम हैं। क्षत्राणी की फटकार से देवपाल के कान खुल गये होंगे।

रत्नसेन— बात का मारा हुआ जो नहीं मरता उसे तलवार से ही मारना पड़ता है पद्मिनी! फिर भी हम दूती को तुम्हारा उत्तर सुनना चाहते हैं।

पद्मिनी— मैंने देवपाल को कहला भेजा है कि मां-बाप के माथे पर कलंक की तरह राज्य करने वाले नीच मनुष्य! तू यह न समझ कि रत्नसेन बन्दी हैं और चित्तौड़ खाली पड़ा है। यदि तू वीर है तो आजा, हाथ में तलवार लिये पद्मिनी तेरा स्वागत करने को तैयार है। तेरा मस्तक फाड़ने के लिये भूखी सिंहनी प्रतीक्षा कर रही है। तू समझता होगा कि चित्तौड़ में सेना नहीं है, वीर राजपूत दिल्ली गये

हुए हैं। पर क्या तुझे यह पता नहीं कि जिसके पास नैतिक बल है सैनिक बल उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। हम राजपूतनियों के हाथों में सतीत्व की शक्ति है और यह वह शक्ति है जिसके सामने सारी शक्तियाँ पराजित हैं।

राजपूती शान को कलंकित करने वाले मदान्ध राजा! पड़ौसी का क्या यही धर्म है कि जब बराबर में आग लगी हुई हो तो वह आग न बुझाकर उस आग में और तेल डाल दे? पर सावधान! जब पड़ौसी के घर में आग लगती है तो वह फैलकर बराबर के घर भी जला सकती है। आज तू हमारा घर जलता देख हम पर अत्याचार कर सकता है, तमाशा देख सकता है, पर कल ही जब तेरे घर में भी आग लगेगी, तब तुझे अपनी करनी पर रह रह कर पश्चात्ताप होगा। यदि तेरी रगों में भारत माता का रक्त है, यदि तू सच्चा राजपूत है, यदि तुझे अपनी तलवार पर गर्व है तो दिखा अपने जौहर! यह समय देश पर आपत्ति का है, भारत माता की बेटियों पर विदेशी जुल्म कर रहे हैं, तेरे देश की सम्पत्ति लूटी जा रही है, तेरे धर्म और संस्कृति पर आक्रमण हो रहे हैं। यदि बचा सकता है तो अपने देश को विदेशी आक्रमण से बचा, विधर्मियों के अत्याचारों से बचा! यदि तू देश-भक्ति का बाना पहन स्वतन्त्रता सग्राम के लिये सर से कफन बांधकर निकला तो पद्मिनी तेरा श्रद्धा से स्वागत करेगी, तुझे देश का गौरव कहकर तेरे हाथ में राखी बाँधेगी। तेरे लिए दोनों द्वार खुले हैं— एक मानवता का और दूसरा देशद्रोह का— जिस रास्ते से चाहे चला आ!

रत्नसेन— बहुत अच्छा उत्तर दिया तुमने देवपाल को! पर मुझे इतने पर भी सन्तोष नहीं है। मैं जब तक उसका सर काटकर चित्तौड़ की चोटी पर नहीं लटका दूंगा तब तक मुझे शान्ति नहीं मिलेगी। शत्रु यदि अति करें तो कुछ देर के लिये सोचा भी जा सकता है

पर यदि पड़ौसी ही अनीति और अनैतिकता पर उतर आयें तो रत्नसेन शान्त नहीं रह सकता। मैं अभी कुम्भलनेर पर चढ़ाई करूंगा।

पद्मिनी— ज़रा धीरज से काम लीजिये नाथ! यह समय सहसा क्रोध का नहीं है। चित्तौड़ चारों ओर से घिरा हुआ है। न हमारे पास सेना है, न शस्त्र और न धन ही इतना है कि युद्ध पर युद्ध करते रहें। इस समय गुस्से को पीकर समय की प्रतीक्षा करनी चाहिये।

रत्नसेन— कर चुका प्रतीक्षा। चाहे चित्तौड़ की राख हो जाये, चाहे कोई भी मेरा साथी न रहे। फिर भी मैं अकेला ही कुम्भलनेर पर चढ़ाई करूँगा। सहने की भी सीमा होती है पद्मिनी! दुःख तो इस बात का है कि हम देवपाल के हर बुरे समय में काम आये हैं और जब हम आपत्ति में फँसे हुए हैं तब वह हमारे जीवन और हमारी प्रतिष्ठा से खेल रहा है। हम कोई कायर तो नहीं हैं, वह हमारी पगड़ी उछाले और हम दुम दबाये बैठे रहें। वह राजधर्म के विरुद्ध हमारी रानी के पास दूती भेजे और हम उसे दण्ड भी न दें। अभी तो रत्नसेन के हाथ में तलवार है पद्मिनी!

पद्मिनी— तलवार तो है, पर अलाउद्दीन जो सामने खड़ा है। आप अगर कुम्भलनेर चले गये और इधर कोई नया पर्वत टूट पड़ा तो?

रत्नसेन— तो पद्मिनी के हाथ में तलवार तो है और यदि तलवार भी टूट जाये तो अग्नि माता की गोद तो है।

पद्मिनी— मुझे अपने प्राणों की चिन्ता नहीं, चिन्ता तो चित्तौड़ की है। पद्मिनी के प्राण चाहे चले जायें पर चित्तौड़ का ध्वंस नहीं होना चाहिए।

रत्नसेन— ईंट और गारे का चित्तौड़ चाहे मिट्टी हो जाये पर उस मिट्टी में से वह ऐतिहासिक सुगन्ध सदैव आती रहेगी जिसमें हमारे गौरव की कहानियाँ बोलती होंगी।

पद्मिनी— सुगन्ध तब फूटेगी जब उसमें स्वतन्त्रता के दीपक जलते होंगे। पराधीन देश की मिट्टी भी अपमानित रहती है। अतीत की स्मृतियों पर वर्तमान रोया करता है। इसलिये पहले अपने चित्तौड़ को विदेशियों से सुरक्षित करो, फिर घर के दुश्मनों को देख लेना।

रत्नसेन— विदेशियों को शिक्षा देने के लिए गोरा और बादल काफी हैं।

रत्नसेन कुछ आगे कहना ही चाहते थे कि कोलाहल ने उनकी वाणी रोक दी। कान दुर्ग के द्वार की ओर लगे और फिर दूसरे ही क्षणों में सैनिक घायल गोरा जी को लिए रत्नसेन के सामने आ गये।

गोरा जी लहू में लथपथ थे, श्वास लेने में उन्हें पीड़ा हो रही थी, पर साहस अभी भी नहीं छूटा था। उन्होंने कराहते हुए कहा— 'पता नहीं ईश्वर की क्या इच्छा है! जान पड़ता है चित्तौड़ के पैरों में दासता की जंजीरें पड़ना चाहती हैं। अब मुझे अपने जीवन की भी आशा नहीं है। मेरी इच्छा थी कि मेरे प्राण मेरे चित्तौड़ में निकलें, प्रभु की कृपा से असंख्य शत्रुओं से घिरा हुआ भी मैं यहाँ तक आ पहुंचा हूँ। पर अब एक इच्छा और है और वह यह कि विदेशियों के सामने चित्तौड़ का मस्तक न झुके, लुटेरों के हाथों हमारी बेटियों का सतीत्व न लुटने पाये, दुश्मन जब चित्तौड़ में आये तो उसके हाथ में वीरों के लहू के अतिरिक्त और कुछ न आये, चित्तौड़ में जब तक एक भी बालक रहे तब तक दुर्ग की चोटी पर देश का ध्वज गौरव से लहराता रहे।

रत्नसेन— आपकी इच्छा पूरी होगी सेनापति! चित्तौड़ चाहे राख हो जाये पर उसका मस्तक कभी नहीं झुकेगा। हम देशभक्त मातृभूमि का मान कभी नहीं देंगे। प्राण चाहे चले जायें पर चित्तौड़ की मिट्टी में गोरा जी के गौरव गीत सदा गूंजते रहेंगे। पर आप इतने निराश क्यों हो रहे हैं? हो सकता है जय हमारी ही हो।

गोरा— ईश्वर करे ऐसा ही हो, पर आशा नहीं दीखती। दुश्मन असंख्य हैं और चारां ओर हैं। चित्तौड़ की प्रायः सारी सेना खप चुकी है।

रत्नसेन— जब तक आपका आशीर्वाद है, बादल जैसे वीर जीवित हैं और रत्नसेन के हाथ में तलवार है तब तक एक क्या हज़ार अलाउद्दीन भी चित्तौड़ का कुछ नहीं बिगाड़ सकते।

गोरा— कौन जानता है बादल जीवित भी है या नहीं।

रत्नसेन— ऐसा न कहिये सेनापति !

गोरा— अब कहने और न कहने में क्या अन्तर पड़ता है। मेरे सोने के गढ़ पर आग की लपटें उठ रही हैं। बचाओ, कोई मेरे चित्तौड़ को बचाओ।

पद्मिनी जो भीगी भीगी आँखों से जीवन और मृत्यु का यह करुण दृश्य देख रही थी अब फूट पड़ी। उसने तड़पते हुए कहा— चित्तौड़ को पीछे बचाना, पहले गोरा जी को बचाओ स्वामी ! गोरा जी रहे तो चित्तौड़ उजड़ कर भी बस जायेगा और यदि गोरा जी न रहे तो चित्तौड़ बसा हुआ भी ऊजड़ है।

रत्नसेन— हाँ, बुलाओ, शीघ्र ही राजवैद्य को बुलाओ।

गोरा जी ने बहुत ही कठिनता से श्वास लेते हुए कहा—'अब वैद्य को बुलाने से कुछ भी नहीं होगा। मेरी मृत्यु अब किसी से नहीं रुक सकती। जो मृत्यु के निकट आ जाता है उसको कोई भी औषध नहीं लगा करती। मरने से पहले एक बार बादल को देख लेता तो अच्छा था, पर आशा नहीं लगती।'

वातावरण इतना करुण हो गया कि सब की आँखों से टपटप आँसू बह चले। रोते हुए रत्नसेन ने कहा— हमें किस पर छोड़े जा रहे हो गोरा जी !

"उस पर जिस पर यह धरती टिकी हुई है, जो हर अनाथ का नाथ है। हिम्मत न हारो रत्नसेन ! मौत किसी को नहीं छोड़ती। अरे, तुम वीर होकर रोते हो। सच है अपने से वियोग के समय तो पत्थर भी फूट पड़ता है। रोओ नहीं रत्न ! धीरज रक्खो। मृत्यु का दुःख प्रत्येक को सहना ही पड़ता है। जीने के लिये धीरज रक्खे बिना काम नहीं चलता। वैसे मौत कुछ है नहीं, पुराने चोले का छोड़ना ही हितकर है। मैं कल फिर नया शरीर लेकर आऊंगा और फिर देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ूँगा। अच्छा, अब विदा ! जय जननी ! जय एकलिंग ! प्रणाम चित्तौड़ ! झण्डा···न···झुकने···प···ा···ये।"

सब देखते के देखते रह गये और गोरा जी दुनिया से दूर चले गये। कहानी रह गई और तस्वीर मिट गई। पर कौन कह सकता है कि गोरा जी मर गये ! जिनके जीवन की कहानी देश की मिट्टी में लिखी रहती है वे भी क्या कभी मरते हैं ! वीर कभी नहीं मरा करते, देशभक्त अमर होते हैं। शहीदों के चित्र हृदयों पर खुद जाते हैं, तभी तो उनकी स्मृति के दीप वर्तमान की हर गति पर गीत बनकर रह जाते हैं।

'चित्तौड़-गौरव वीरवर गोरा जी वीरगति को प्राप्त हो गये' क्षण भर में यह बात सारे चित्तौड़ में ही नहीं देश भर में गूंज उठी। सेनापति का शव ध्वजा में लपेट शीशों के कक्ष में रख दिया गया। दर्शनार्थियों की भीड़ लगने लगी। प्रत्येक चित्तौड़ निवासी स्त्री पुरुष की आँखों में शोक के सागर थे। हरेक की वाणी पर वीर सेनापति के गौरव गीत थे। बालक बूढ़े सभी सेनापति को प्रणाम करते और आँखों से आँसू पोंछते हुए कहते—

"हमारे सेनापति बहुत भले थे। वे बच्चों में बच्चे थे और बूढ़ों में बूढ़े। उनके पास जो कुछ था वह सब चित्तौड़ के ही लिये था।

उनकी तलवार में गजब की काट थी। बड़े बड़े शूरमाओं ने उनसे हार मानी हुई है। उनकी सेवायें बेजोड़ हैं, उनकी कहानी चित्तौड़ की चोटी से भी ऊँचे चरित्र की कहानी है। पर हाय! काल किसी को नहीं छोड़ता।"

पद्मिनी का सुन्दर मुँह इस समय आँसुओं से भीग कर ऐसा हो गया था जैसे सावन भादों की वर्षा में चाँद पानी की बून्दों से ढक जाता है। रत्नसेन को जैसे लकवा मार गया हो। वे अनुभव कर रहे थे जैसे वे शून्य में खड़े रह गये हैं, जैसे उनके जीवन ने उनका साथ छोड़ दिया है।

पर अब क्या होता है! रो रो कर पुकारने से गया हुआ आदमी तो वापिस नहीं आता। रोते हुए रत्नसेन ने पद्मिनी को देखते हुए कहा—यह क्या हो गया! अब क्या होगा?

पद्मिनी— हे ईश्वर! तू हम से इतना नाराज़ क्यों है?

रत्नसेन— हमने तो कभी किसी को सताया नहीं। फिर भी हे ईश्वर! तू हम पर पहाड़ पर पहाड़ क्यों गिरा रहा है?

पद्मिनी— जीवन में सुख और शान्ति से दो श्वांस भी तो नहीं लिये, हर हर्ष पर अंगारे ही अंगारे बरस पड़े।

रत्नसेन— भगवान भी कितना कठोर है! जिसे दुःख देता है उसकी परीक्षा पर परीक्षा लिये जाता है।

पद्मिनी— न जाने कब चित्तौड़ के दुःखों का अन्त होगा?

रत्नसेन— दुःख अभी उठाये ही कहाँ हैं रानी! अभी तो दुःखों का आदि भी नहीं आया है। दुःख जिस दिन अपने पूर्ण रूप में आजायेंगे उस दिन तो जीवन धन्य हो जायेगा।

पद्मिनी— ये आप कैसी बातें करने लगे नाथ! कहीं दुःखातिरेक में आप विभोर तो नहीं हो रहे हैं?

रत्नसेन— नहीं रानी! सुख मनुष्य को कुछ देते नहीं, छीनते हैं और दुःख मनुष्य को ज्ञान देते हैं, शान्ति देते हैं। यह दुःख ही तो है जिसने मेरी आँखें खोल दीं। व्यर्थ है राज्य, व्यर्थ है वैभव! जब मृत्यु ही सत्य है तो फिर क्या करूंगा राज्य करके? पद्मिनी! तुम रूप और यौवन की मंजूषा हो, पर जिस दिन मृत्यु का दामन तुम्हें छू देगा उस दिन यह सोने का शरीर राख हो जायेगा। इसलिये कौन किसका शत्रु, कौन किसका मित्र, सब काल का प्रपंच है। मृत्यु और जीवन किसी दूसरे के ही हाथ में है। तो वह कौन है जिसके हाथ में जीवन है? मैं उसे ढूंढूंगा, उसकी शरण में जाऊँगा।

पद्मिनी— जब किसी निकटवर्ती की मृत्यु होती है तो मनुष्य ऐसे ही प्रलाप करते हैं। मरने वाले तो रोज़ ही मरते हैं, पर दुनिया तो अभी तक वैसी की वैसी ही है। सृष्टि तो आज तक नहीं मरी। शत्रु सर पर है और आप मैदान से भाग रहे हैं। ऐसा ही मोह तो युद्ध-भूमि में अर्जुन को हुआ था। उस समय यदि कृष्ण अर्जुन को उपदेश न देते तो आज इतिहास में अर्जुन का कहीं नाम भी न होता। छोड़ो इन दुर्बल विचारों को, एक हाथ से आँसू पोंछो और दूसरे में तलवार उठाओ! गोरा जी के अन्तिम शब्दों को स्मरण करो! चित्तौड़ का मस्तक न झुकने पाये।

राणा रत्नसेन को जैसे किसी ने नींद से जगा दिया। रानी की ललकार सुनकर उनमें चेतना आ गई। उन्होंने आँसू पोंछा और रुद्ध कण्ठ से उत्साह भरे बोले— नारी में केवल रूप ही नहीं शक्ति भी है। मैं गोरा जी के शव की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि अन्तिम श्वास तक शत्रुओं से लड़ता रहूँगा।

उत्साह और आँसुओं में सेनापति का शव चन्दन की चिता पर रखा गया। अग्नि ने उन हाथ और पैरों को पल भर में भून डाला जिनके सामने लाख लाख शत्रुओं के हाथ कट कट कर गिर पड़ते थे।

देह जल गई, पर वह चित्र चित्तौड़ की ईंट ईंट पर खिंचा रह गया जो प्रलय के पानी में भी नहीं बहेगा।

———

१६

"महाराज! बादल भी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो गये। वे अन्तिम श्वास तक शत्रुओं को मौत के घाट उतारते रहे। पर कहां एक और कहाँ हज़ार, आखिर कब तक लड़ते! शत्रुओं ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया, हाथियों के झुण्ड को उनकी ओर धकेल दिया। लेकिन फिर भी वे वीरता से लड़ते रहे, मरते मरते भी उन्होंने दस बीस को मार डाला।"

रक्त-रंजित सैनिक ने राणा रत्नसेन के सामने आवेश में आकर एक ही श्वास में कहा। उत्तर में रत्नसेन मुस्कराये और उत्साह से बोले—"सुना पद्मिनी! वीरवर गोरा के लाडले बालक बादल की वीरता का गीत। चित्तौड़ की दीवार पर ये शब्द स्वर्णाक्षरों में लिख दो।"

पद्मिनी— बादल नहीं, आज मेरा बेटा दुनिया में नहीं रहा। वह मर गया पर उसने माँ का मान नहीं दिया। माना कि वह चित्तौड़ के मस्तक पर अपने रक्त की बिन्दी लगाकर वीरगति को प्राप्त हुआ है

पर माँ अपनी आँखों के आँसू कैसे रोके? आज मेरा हंस रो रहा है स्वामी! बादल के बिना मेरा हृदय फटा जा रहा है। अब क्या करूं नाथ! कौन मेरे चित्तौड़ का पहरा देगा? कौन भारतमाता की रक्षा में द्वार पर जागेगा? कौन मुझे 'माँ' कहकर पुकारेगा?

रत्नसेन अब तक तो साहस करके अपने आँसू रोके रहे, पर आँसू जब उमड़ आते हैं तो रोकने से भी नहीं रुका करते। रत्नसेन की आँखों से जलधारा बह चली, बड़ी कठिनता से वे पानी आँखों में रोककर बोले— "आँसू रोको रानी! रोने से तो जीवन और भी भार हो जायेगा। यह समय रोने का नहीं, साहस करने का है। चित्तौड़ के लिये छाती को पत्थर कर लो!"

पद्मिनी— छाती को छलनी करके भी मनुष्य को जीना ही पड़ता है। गोरा जी न रहे, बादल भी हम से विदा हो गये, जन और धन सभी स्वाहा हो गया।

रत्नसेन— सब कुछ स्वाहा हो गया, फिर भी अभी कुछ न कुछ बाकी है। चित्तौड़ की चोटी पर स्वतन्त्रता का ध्वज लहरा रहा है। सौन्दर्य की देवी पद्मिनी आज भी हमारे अँधेरे घर में उजाला है। रत्नसेन के हाथ में तलवार बाकी है।

पद्मिनी— मनुष्य कैसे न कैसे मन को समझा ही लेता है। लेकिन वास्तविकता तो यह है कि हमारे सामने फूलों की राख शेष है। बाग बाकी है पर वे फूल न रहे जिनसे चित्तौड़ में सुगन्ध थी। भारतमाता के वीर पुत्र गोरा और बादल दुनिया में बार बार नहीं आया करते।

रत्नसेन— शहीदों के मन्दिर में गोरा और बादल सदा पुजते रहेंगे।

रत्नसेन और पद्मिनी आँख पोंछ ही रहे थे कि सहसा पसीने में

लथपथ एक सैनिक ने प्रवेश करते हुए कहा— "कुम्भलनेर के राजा देवपाल ने यह पत्र भेजा है।"

पत्र लेकर रत्नसेन जैसे जैसे पढ़ते गये वैसे ही वैसे उनके चेहरे का रंग बदलने लगा। शोक के आँसू लाल हो उठे। करुणा रस रौद्र रस में बदलने लगा। पत्र पढ़कर वे क्रोध में बोले— "चित्तौड़ पर संकट देखकर चींटी के भी पर निकलने लगे। देवपाल ने समझा है कि रत्नसेन अकेला है, इसलिये उसे जैसे चाहे धमकालूँ।"

पद्मिनी ने रत्नसेन को क्रोध से काँपते हुए देख शांति से कहा— "क्या लिखा है पत्र में?"

रत्नसेन— देवपाल ने हमें धमकाते हुए कहा है कि यदि अपने जीवन की रक्षा और चित्तौड़ की भलाई चाहते हो तो पद्मिनी को हमारे हवाले कर दो। फिर हम तुम्हारे साथी बनकर अलाउद्दीन को दिन में तारे दिखा देंगे।

पद्मिनी— पापी कहीं का! उसे उत्तर दे दो स्वामी! अगर हिम्मत है तो आ जाये, यहाँ उसे दिन में तारे दिखा दिये जायेंगे।

रत्नसेन— उसके पास उत्तर नहीं, रत्नसेन की तलवार जायेगी। चित्तौड़ तुम्हारे ऊपर छोड़ मैं कुम्भलनेर जाता हूँ।

पद्मिनी— हमारी सैनिक शक्ति नहीं के बराबर है। ऐसी दशा में शत्रु के घर जाना खतरे से खाली नहीं है। उसे ही चित्तौड़ आने दो।

रत्नसेन— नहीं पद्मिनी! हार के भय से बढ़ते हुए पैर को रोकना जय का मस्तक झुकाना है। मैं देवपाल को उत्तर देने जाता हूँ और तुम चित्तौड़ को देखो।

कहते हुए राणा घोड़े पर सवार हुए और चुने हुए पाँच सौ सवारों सहित देवपाल को जवाब देने चल दिये। दुर्ग की ऊँची मंजिल से पद्मिनी देख रही थी और रत्नसेन बढ़े जा रहे थे।

तूफ़ान की तरह बढ़ते हुए रत्नसेन कुम्भलनेर आगये। देवपाल को जैसे ही सूचना मिली कि रत्नसेन ने आक्रमण कर दिया है वैसे ही वह अपनी बेशुमार सेना को लेकर सामने आ डटा।

बिजली की कौंध की तरह तलवारें चमक उठीं। लड़ाके राजपूत जीवन से मोह छोड़ एक दूसरे से भिड़ गये। रत्नसेन ने देवपाल के घोड़े से घोड़ा लड़ा दिया और तलवार का वार करता हुआ गरज कर बोला—मैं आज तुझे पद्मिनी देने आया हूँ।

तलवार का वार ढाल पर रोकते हुए देवपाल ने उत्तर दिया—विधर्मी के हाथों चित्तौड़ की लूट और पद्मिनी के सतीत्व का हरण चाहता है तो न मान मेरी बात। पर अब यहाँ से तू नहीं तेरा शव ही चित्तौड़ जायेगा।

रत्नसेन— तू भी जिन्दगी के दो चार श्वास ले ले। लेकिन जीना उसका ही अच्छा है जो मानवता से जिये, जो अपने लिये नहीं बल्कि समूह के लिये जिये। लुटेरे के जीने से तो धरती पर बोझ हो जाता है।

देवपाल— और एक तू है जो अपने स्वार्थ के लिये सारे चित्तौड़ की बलि दे रहा है, एक पद्मिनी को नहीं और लाखों के प्राण दे रहा है, अपनी कामेषणा के पीछे पागल हो रहा है।

रत्नसेन— पद्मिनी चित्तौड़ की ही नहीं सारे भारतवर्ष की मर्यादा है। रत्नसेन मिट सकता है पर भारत माता की मर्यादा और प्रतिष्ठा नहीं दे सकता।

देवपाल— मान और मर्यादा जय के साथ रहा करती हैं। पराजित की मर्यादा आँसू के अतिरिक्त और कुछ नहीं होती। जो जीतता है जग उसकी पूजा करता है और जो हारता है वह घृणा से देखा जाता है। इसलिये जैसे भी हो मनुष्य को जय के लिये यत्न करना चाहिये

और अब तू उस जगह है जहाँ तेरी जीत असम्भव है।

रत्नसेन— मनुष्य तो वह है जो असम्भव को सम्भव दिखा दे। युद्ध के समय जो प्रलाप करते हैं वे कायर होते हैं।

देवपाल— मैं चाहता था कि विधर्मियों के हाथों चित्तौड़ की शान भरे बाज़ार में न बिके। इसलिये मैं तुझे समझा रहा था। यदि इतने पर भी तेरी समझ काम नहीं करती तो अभी थोड़ी देर में फैसला हुआ जाता है।

रत्नसेन— दो में से एक ही फैसला होगा। या तो रत्नसेन नहीं रहेगा या इस देश के दुश्मनों का अन्त होगा। हम मिट सकते हैं पर अपने देश की मर्यादा नहीं मिटने देंगे।

देवपाल— यदि यही बात है तो संभल!

कहते हुए देवपाल ने रत्नसेन पर वार पर वार करने शुरू कर दिये। रत्नसेन भी विकराल काल की तरह देवपाल पर टूट पड़े। दोनों वीरों का घोर युद्ध हुआ। बल में दोनों एक दूसरे से कम न थे। रत्नसेन की सेना बहुत कम थी। थोड़ी ही देर में सारी फौज खप गई और रत्नसेन अकेले रह गये। पर वे अकेले भी मानो प्रलय थे। जिस तरफ उनकी तलवार घूम जाती उस तरफ ही सफाया हो जाता था।

लड़ते लड़ते आधा दिन बीत गया। किन्तु रत्नसेन वश में न आये। वे लहू में लथपथ थे, फिर भी उनकी भुजाओं में उत्साह था। वे चारों ओर से घिरे हुए थे, फिर भी उनमें उम्मीद बाकी थी। किन्तु अकेला कहाँ तक लड़ सकता है, देवपाल ने अपना भारी खांडा रत्नसेन के मस्तक पर घुमाकर मारा।

खांडे का वार रत्नसेन के घोड़े की गर्दन पर पड़ा। अश्व की गर्दन कटकर अलग जा गिरी और रत्नसेन उछलकर उसी हाथी पर आ कूदे

जिस पर देवपाल सवार था।

इधर से रत्नसेन ने और उधर से देवपाल ने एक ही साथ एक दूसरे पर वार किये और हाय! भारतवर्ष के दो योद्धाओं के सर एक ही साथ कटकर भूमि पर आ गिरे। सब के देखते ही देखते चित्तौड़ और कुम्भलनेर के राजा धराशायी हो गये।

भारत की मिट्टी ने कराहते हुए कहा— "यह है वीरता का वह उत्साह जो क्षण भर में मौन होकर मिट्टी हो गया। डोली और राजहठ की लड़ाइयों ही से तो देश दासता की जंजीरों में जकड़ता चला जा रहा है। यदि यह वीरता संगठित होकर भारत के विकास और निर्माण में लगती तो भारत भूमि को मातम मनाना न पड़ता। अब तो रोना ही पड़ेगा। रोओ, जी भरकर रोओ, पर परिणाम कुछ भी नहीं निकलेगा। परतन्त्रता के दुःख शताब्दियों तक तुम्हारी बुद्धि पर तरस खायेंगे।"

× × ×

"गज़ब हो गया, महारानी! गज़ब हो गया! हम लुट गये! महाराज..............।"

"महाराज क्या? कहती क्यों नहीं दासी! महाराज को क्या हो गया?" पद्मिनी ने उत्सुकता से पूछा।

दासी— अभी अभी सूचना आई है कि लड़ते लड़ते महाराज और देवपाल दोनों मारे गये।

पद्मिनी— तो फिर रोने की क्या बात है? जितना बड़ा दुःख महाराज की मृत्यु का है उससे बहुत बड़ा सुख इस बात का है कि दुष्ट देवपाल भी मौत के घाट उतार दिया गया। महाराज मरे नहीं, देश और धर्म के लिये शहीद हुए हैं, नारी जाति की लज्जा के लिये बलिदान हुए हैं।

पद्मिनी छाती को पत्थर कर यह कह ही रही थी कि नागमती बिलखती हुई वहाँ आई और एक ही श्वास में कह गई— "यह क्या हो

गया पद्मिनी! हमारा सोने का घर मिट्टी हो गया और हम बचा भी न सकीं।"

पद्मिनी— कुछ नहीं हुआ बड़ी बहिन! जिसका जन्म है उसकी मृत्यु निश्चित है। रोओ नहीं, जिस सोने की मिट्टी हुई है वह एक दिन कुन्दन बनकर दमकेगा।

नागमती— पर अब हमारा क्या होगा?

पद्मिनी— वही जो वीर क्षत्राणियों का हुआ है और होना चाहिये, वही जो भारत की देवियों का धर्म है। अपने देश की मान और मर्यादा के लिये शत्रुओं से युद्ध करेंगी।

नागमती— पर कब तक?

पद्मिनी— तब तक जब तक चित्तौड़ में एक भी श्वास जीवित है, उस समय तक जिस समय तक एक भी कण हिलता है।

नागमती— पर जिन आँखों में आँसुओं के समुद्र भरे हुए हैं उनमें हाथों से तलवार उठवाने की अब शक्ति कहाँ है?

पद्मिनी— शक्ति तो आँसुओं में ही होती है बहिन! जिन आँखों में आँसू हैं उन आँखों में से ही तो अंगारे निकलते हैं। हाथों में तलवारें उठा लो और गर्ज उठो। तुम्हारी ललकार में चित्तौड़ की हुतात्माओं की भावनायें होंगी।

नागमती— सुना है अलाउद्दीन खुशी के बाजे बजाता हुआ चित्तौड़ की तरफ चला आ रहा है।

पद्मिनी— वह खुशी में भरा चला आ रहा है पर गम के आँसू लेकर जायेगा। उसको अपना हरम रोशन करने के लिये न नागमती और पद्मिनी मिलेंगी और न चित्तौड़ का वैभव ही। वह या तो यहाँ से हार खाकर जायेगा और या हम सबकी राख मुट्ठी में ले जायेगा।

नागमती— वह लो शत्रु के बाजे सुनाई देने लगे। अब हम क्या

करें ?

पद्मिनी— हम देवियाँ उत्तर में शंख घोष करेंगी। अब कुछ समय के लिये चित्तौड़ की बागडोर मुझे दे दो। जाओ बड़ी बहिन! तुम चित्तौड़ की चोटी पर फहराते हुए ध्वज की रक्षा करो, जब तक जीवित रहो ध्वज न झुकने पाये।

नागमती— और तुम?

पद्मिनी — मैं चित्तौड़ में बची हुई अपनी बहनों के साथ शत्रुओं पर तीरों की वर्षा करूँगी।

नागमती— और यदि दुश्मन फिर भी दुर्ग में घुस आये तो ?

पद्मिनी— चौक में जौहर के लिये अग्नि प्रज्वलित रहेगी।

नागमती— तो जयशंकर बहिन! नागमती मर जायेगी पर झंडा हाथ से नहीं छोड़ेगी।

कहती हुई नागमती हाथ में नंगी तलवार लिये दौड़ी और दुर्ग की चोटी पर ध्वज के पहरे पर खड़ी हो गई। नागमती का वह भव्य रूप देखने लायक था। केसरिया वस्त्र, एक हाथ में नंगी तलवार और दूसरे में शंख, कन्धे पर धनुष बाण, आँखों में गीले गीले बादल जिन पर धधक रहे थे उत्साह के लाल लाल अंगारे। वीरता की वह ज्योति उस काल बिजली सी दमक दमक कर दुश्मनों के दिल दहला रही थी।

× × ×

अलाउद्दीन खिलजी की फौज ने दूर से दुर्ग की चोटी पर दमकती हुई वीर क्षत्राणी को देखा। अलाउद्दीन ने गौर से देखते हुए कहा— 'जान पड़ता है चित्तौड़ में अभी भी युद्ध की तैयारियाँ हैं। चोटी पर कोई बहादुर खड़ा जान पड़ता है।'

खिलजी के नये सेनापति कयामत ने छाती फुलाते हुए कहा— 'युद्ध अब चित्तौड़ में किस के दम पर होगा ? रत्नसेन मर चुका, गोरा और बादल नहीं रहे, फौज भी नहीं है। अब तो हमारे लिये रास्ता

साफ है जहाँपनाह !

अलाउद्दीन— रस्सियाँ जल जाती हैं पर बल नहीं जला करते। चित्तौड़ में चाहे कुछ भी न रहे, फिर भी उसकी दीवारों में घुसना सरल नहीं है। वहाँ की मिट्टी भी बारूद है।

कयामत— देखा जायेगा चिरागे दिल्ली ! इस बार आपकी फतह होगी और ज़रूर होगी।

अलाउद्दीन— तो क्या पद्मिनी हमें मिल जायेगी ?

कयामत— पद्मिनी भी मिलेगी और चित्तौड़ भी आपके अधिकार में होगा।

अलाउद्दीन— ढंग दीखते हैं, पर उम्मीद नहीं कहती कि इतना खून बहा कर भी दिल की जीत होगी।

कयामत— होगी और ज़रूर होगी।

कयामत यह कह ही रहा था कि सनसनाता हुआ एक तीर उसके घोड़े के मुंह में आकर लगा। वह चौंक चौंक कर चारों तरफ देखने लगा। सामने दुर्ग की चोटी पर नागमती धनुष ताने खड़ी थी।

अलाउद्दीन ने घबराते हुए कहा— जान पड़ता है मोर्चा बहुत सख्त है।

कयामत— वह तो कोई औरत जान पड़ती है।

अलाउद्दीन— चित्तौड़ की औरतें क्या मौत होती हैं ?

कयामत— यह खुशी की बात है कि चित्तौड़ में मर्द नहीं, अब औरतें ही औरतें हैं।

अलाउद्दीन— शायद तुमने कभी क्षत्राणियों की आँखें देखी ही नहीं हैं, उनमें रूप भी होता है और अंगारे भी।

कयामत— लड़ाई के समय दिल कमज़ोर नहीं करना चाहिये जहाँपनाह !

इतने ही में एक दूसरा तीर सनसनाता हुआ आया और अलाउद्दीन के कान के बराबर से निकल गया। अलाउद्दीन के हौसले काँपते हुए बढ़े। उसने बिदक कर कहा— "हमला करो कयामत! हमला करो!"

और फिर क्या था? खिलजी सेना अड़अड़ा कर दुर्ग पर टूट पड़ी। उत्तर में चोटी पर खड़ी हुई पद्मिनी ने भी शंख-घोष किया। युद्धघोष होते ही दुर्ग की दीवारों के शुद्ध वातायनों के बराबर बराबर लेटी क्षत्राणी सेना को पद्मिनी ने आज्ञा दी— 'तीरों की वर्षा करो!'

क्षत्राणियों ने धनुष की प्रत्यंचा तानी और बींधने लगीं दुश्मनों की फौज को। धनुष से एक एक तीर छूटता था और दुश्मन के दस दस जवान घायल हो जाते थे।

उधर अलाउद्दीन के हाथ दीवारों से टकरा रहे थे। उसने परेशानी से कहा— ये दुर्ग की दीवारें हैं या लोहे की दीवारें। जब तक ये नहीं टूटेंगी तब तक हमें दीवारों से ही सिर फोड़ने पड़ेंगे।

कयामत— किले का दर्वाजा भी फौलाद का जान पड़ता है, न खुलता है न टूटता है।

अलाउद्दीन— तोड़ो, दीवारें तोड़ो! खोलो किले का दर्वाजा, खोलो! अगर इस बार भी हार हुई तो दुनिया कहेगी कि अलाउद्दीन औरतों से हार गया। कैसे भी हो इस बार जीत होनी ही चाहिये।

कयामत— एक ही तरीका है हजूर। पता चला है कि क्षत्राणियाँ सिर्फ सामने ही हैं, बाकी सब तरफ मैदान साफ है। हम अपनी फौज चोर दर्वाजों से ही दुर्ग में घुसा सकते हैं, मतलब यह कि रस्सियों के सहारे उन पर चढ़ना चाहिये।

अलाउद्दीन— ठीक है, भेजो उधर भी फौज।

खिलजी फौज ने चारों तरफ से किला घेर लिया। कयामत ने चुपचाप अपनी फौज दुर्ग पर चढ़ा दी।

नागमती ने जो घुस कर देखा तो वह घबरा उठी। उसने तुरन्त एक विशेष संकेत का शंख बजाया। सुनते ही पद्मिनी ने कहा— "दुश्मन दुर्ग में घुस आये हैं, तलवारें उठाओ।"

और फिर पलक मारते ही वे उधर दौड़ पड़ीं जिधर से रस्सियों पर चढ़ चढ़ कर दुश्मन दुर्ग में घुस रहे थे। फूलों से भी कोमल क्षत्राणियों का वह विकराल ताण्डव नृत्य देख दुश्मनों के बढ़ते हुए पैर जहाँ के तहाँ खड़े रह गये। चिता की ज्वाला से झुलसे हुए मेंहदी वाले पल्लव से हाथों की तलवारें सिंहनाद के साथ आक्रान्ताओं की गर्दनों पर टूट पड़ीं।

जो भी दुश्मन सामने आया क्षत्राणी की तलवार उसी का सर धड़ से अलग कर देती थी। कोमलता में कितनी कठोर काट है, यहाँ वही देखने को मिली। बात की बात में जितने भी ऊपर चढ़े थे उन सभी की क्षत्राणियों के पैरों के नीचे कबरें बन गईं।

किन्तु हाय! किसी तरह एक यवन आँख बचाकर दुर्ग के अन्दर पहुँच मुख्य द्वार पर आ गया। मेहमान को रास्ता क्या दिखाया था, दुर्ग का भेद चित्तौड़ की मौत बनकर झपट पड़ा। अब क्या था! द्वार खुल गये और आक्रान्ता तूफानों की तरह दुर्ग में घुस आये।

१८

शत्रुओं की सेना मुख्य द्वार से घुसते देख पद्मिनी ने देवियों को आज्ञा दी— "आगे न बढ़कर पीछे हटो, शीघ्र ही उस चौक में पहुँचो जहाँ जौहर के लिये चन्दन सुलग रहा है।"

तुरन्त ही क्षत्राणियाँ उस चौक में आ गईं जहाँ धू धू करके चन्दन की आग सुलग रही थी। जैसे ही पद्मिनी वहाँ पहुँची वैसे ही शत्रु सेना की एक टुकड़ी वहाँ पहुँच गई जहाँ नागमती नंगी तलवार हाथ में लिये ध्वज की रक्षा कर रही थी।

शत्रु ने ललकारते हुए कहा— "पकड़ लो इस खूबसूरत औरत को, अब यह दिल्ली के हरम में ऐश करेगी।"

और फिर अट्टहास करता हुआ नागमती को घूर कर बोला— 'जो नाजुक हाथ हमारे बालों में गुलमालाओं की तरह पड़ने चाहियें, उनमें यह कठोर तलवार अच्छी नहीं लगती। आओ, हम तुम्हें मखमली गद्दों पर आराम देंगे।"

सुनते ही नागमती तड़प उठी। उसने तलवार आगे बढ़ाकर उसकी

ज़बान में भोंक दी जिसकी ज़बान से नारी जाति की तौहीन हुई थी।

शत्रु की ज़बान से खून बहने लगा। उसने भाले का एक भयानक वार नागमती पर किया। पर वार अभी बीच ही में था कि नागमती की तलवार ने उसका सर धड़ से अलग कर दिया।

किन्तु अकेली क्या करती! दूसरे ही क्षण एक दूसरे हत्यारे ने नागमती पर तलवार का एक अचूक वार किया। तलवार वीरांगना का कन्धा काटती हुई गर्दन के पार हो गई, और चित्तौड़ की वह दिव्य ज्योति चौक में सुलगती हुई जौहर ज्वाला में जा पड़ी।

'नारी हो तो ऐसी हो'— आक्रान्ताओं ने आगे बढ़ते हुए कहा।

चौक में जौहर के लिये ज्वाला धधक रही थी। शत्रु सेना दुर्ग में फैल चुकी थी। अलाउद्दीन ने चारों ओर देखते हुए कहा— "पद्मिनी कहाँ है?"

कयामत ने धधकती हुई ज्वाला की ओर देखते हुए जवाब दिया— "पद्मिनी क्या यहाँ तो चिड़िया का बच्चा भी नज़र नहीं आता। जान पड़ता है थोड़ी ही देर में यह चित्तौड़ का किला भी राख हो जायेगा। यहाँ की औरतें भी गजब की लड़ाई लड़ती हैं। जब उन्हें यह यकीन हो गया कि अब जीतना मुमकिन नहीं है तो उन्होंने किले में आग लगा दी है।"

अलाउद्दीन— हो सकता है इसमें भी कोई धोखा हो। औरतों की चालें निराली होती हैं। कहीं हम फँस न जायें।

कयामत— अब डरने की क्या बात है, किले पर अपना कब्जा हो चुका है।

अलाउद्दीन— लेकिन पद्मिनी कहाँ है?

कयामत— या तो वह किसी चोर दरवाजे से निकल कर भाग गई या यहीं कहीं छिपी होगी। पर अब भाग कर कहाँ जायेगी, छिपेगी

कहाँ?

अलाउद्दीन — तो ढूँढो, किले का कोना कोना देखो!

कयामत— पद्मिनी को पीछे देखेंगे पहले किले में सुलगती हुई ज्वाला को बुझा लें जो बढ़ती जा रही है। वह देखिये उस चौक में आग!

कहते हुए कयामत ने फौज को हुक्म दिया— "मेरे साथ उस आग की तरफ आओ!"

कयामत और बादशाह फौज के साथ उस चौक की तरफ बढ़े जिसमें चन्दन के लक्कड़ सुलग रहे थे। जैसे ही कयामत ने चौक का द्वार खोला वैसे ही अलाउद्दीन ने तड़प कर कहा— "अहा पद्मिनी!"

अलाउद्दीन यह कह ही रहे थे कि कयामत आगे बढ़ा और उसने पद्मिनी को देखते हुए गरज कर कहा— "हमारे बादशाह तुम्हारे लिये बहुत दिन से बेकरार थे, आज उनकी उम्मीद पूरी होगी।"

कयामत यह कह ही रहा था कि पद्मिनी ने पैतरा बदल कर अपनी तेज तलवार से उसकी गर्दन तराशते हुए कहा— "बादशाह की उम्मीद तो बाद में पूरी होगी, पहले तू तो अपनी उम्मीद पूरी कर ले!"

पलक मारते ही कयामत दुनिया से कूच कर गया और पद्मिनी ने अपने साथ की क्षत्राणियों को आज्ञा दी— "चित्तौड़ को प्रणाम कर जौहर के लिये अग्नि में कूद पड़ो!"

आगे आगे पद्मिनी और पीछे पीछे शेष क्षत्राणियाँ जौहर के लिये ज्वाला में कूद पड़ीं। अलाउद्दीन देखता रह गया और सोने की राख हो गई।

हाथ मलते हुए अलाउद्दीन ने कहा— "इतना खून बहाया फिर भी हाथ में केवल राख ही आई। अब क्या मैं खंडहरों पर राज्य करूंगा? अब क्या मैं पद्मिनी की हड्डियों की राख को हाथ में लेकर खुशी मनाऊंगा? सच है तलवार से किसी की जीत नहीं होती। हिंसा

से अहिंसा ही बलवती होती है। आह! मैंने यह क्या किया? पद्मिनी जैसी दिव्य देवी को नष्ट कर डाला, खूबसूरती की उस बेजोड़ तस्वीर को राख कर दिया, चित्तौड़ के अद्भुत वैभव को मिट्टी में मिला डाला! मैं जीता भी तो हाथ में राख ही तो आई! यह मैंने क्या किया? मैंने सोने की राख तो कर डाली पर राख का सोना नहीं बना सकता।"

———